हिन्दी कहानी
साहित्य में स्त्रियों की सामाजिक भूमिका
विशेष अध्ययन (1900-1935)

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, की डी0 फिल्0
उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

निर्देशिका :
प्रो० मालती तिवारी
एम.ए., डी फिल
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

शोधकर्त्री :
मंजरी मिश्र
हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
2002

भूमिका

स्त्री साहित्य और समाज का एक ऐसा विषय रही है जिसकी पृष्ठभूमि सृष्टि के निर्माण से लेकर आज तक लिखी जा रही है । साहित्य के विकास मे स्त्री का योगदान उसके भावात्मक जगत के अस्तित्व की कहानी है । स्त्री और साहित्य की छात्रा होने के कारण समाज और साहित्य मे स्त्री के परिवर्तित होते विभिन्न रुपो से रुबरु होने का अवसर तो मिलता रहता है परन्तु ह्रदय मे अपने अतीत को जानने एव वर्तमान से होकर भविष्य का अनुमान लगाने की प्रबल उत्कठा रही है । इस शोध–ग्रन्थ के माध्यम से मैने साहित्य के गलियारो मे स्त्री की सामाजिक भूमिका को तलाशने का प्रयास किया है ।

<u>प्रथम अध्याय</u> :– भारतीय वाड्मय मे स्त्री की सामाजिक भूमिका के अतर्गत स्त्री के सामाजिक उत्थान और पतन का इतिहास छुपा है । यह उसी को खोजने का छोटा सा प्रयास है ।

<u>द्वितीय अध्याय</u> :– इस अध्याय मे भक्तिकाल और रीतिकाल के साहित्य मे स्त्री के परिवर्तित होते स्वरुप का आभास मिलता है । इसके पश्चात गद्य, साहित्य के विकास के साथ हिन्दी कहानी क्या है ? उसका उद्भव और विकास किन सोपानों से होकर गुजरा है । सामाजिक सुधारो के उपरान्त स्त्री की सामाजिक स्थिति मे क्या–क्या परिवर्तन हुए तथा इन साहित्यकारो व समाज सुधारको की स्त्री विषयक दृष्टि कितनी बदली इस पर प्रकाश डाला गया है ।

<u>आलोच्य काल</u> .– यह काल सरस्वती पत्रिका के प्रकाशन के साथ ही प्रारम्भ होता है तथा हिन्दी की मौलिक कहानियो का समय भी लगभग यही रहा है। अत यह कह सकते है कि हिन्दी कहानी के उद्भव से लेकर महान कहानीकार प्रेमचद के युग तक यह मेरे अध्ययन का प्रमुख विषय रहा है । जहॉ तक सम्भव हो सका मैंने इसी समय की कहानियों एव कहानीकारो का चयन करने की चेष्टा की है, फिर भी कही न कही त्रुटियॉ अवश्य हो गयी होंगी जिन्हें विद्वत्जन क्षमा कर देंगें, यह मेरी आशा है।

इस शोध हेतु मैं विश्वविद्यालय के अपने प्रिय गुरुजनो की मै सदैव आभारी रहूँगी तथा विभिन्न पुस्तकालयो के कर्मचारियो को भी धन्यवाद देना चाहूँगी, जिन्होनें अमूल्य साहित्यिक धरोहर को उपलब्ध कराने मे सक्रिय भूमिका निभाई है।

मंजरी मिश्र

{ मंजरी मिश्र }

विषय–सूची

भारतीय वाङ्मय में स्त्री की सामाजिक भूमिका

(क) विभिन्न संस्कारो मे, सस्थाओ में, समाज एवं परिवार में :—

समाज का यथार्थ स्त्री है । (स्त्री, 'स्त्यै' धातु से बना है)

'स्त्रिय स्त्यायते' अपत्रपणा कर्मण ' [1]।

स्त्यै का अर्थ है लज्जा से सिकुडना है । स्त्री अपने लज्जा गुण के कारण स्त्री कहलाती है ।

किसी समाज मे स्त्री की सामाजिक स्थिति उस सभ्यता को मापने का मानक मापदण्ड है । इसी कारण साहित्य (वैदिक) ही वह माध्यम है जो हमे प्राचीन भारतीय सभ्यता और सस्कृति से साकार करवाने का कार्य करता है ।

भारतीय साहित्य का आविर्भाव ऋग्वेद से होता है अत ऋग्वेद ही वह धरातल है जो हमे प्राचीन भारतीय वाड्मय से हमारा परिचय करवाता है ।

मानव मात्र का विकास जिस वातावरण मे हुआ वही समाज का निर्माण हुआ । मानव सभ्यता का विकास एक ऐसा चिरतन परिवर्तन है जो उद्भव से गतत्व तक इसी भू—लोक मे विस्तृत समाज के रुप मे फैला है ।

ऋग्वेद आर्य जाति का सामाजिक दर्पण है । यह आध्यात्म दर्शन, धर्म सस्कृति, ज्ञान—विज्ञान कला एव साहित्य का अनन्य भडार है ।

वैदिक ऋषियो ने नर को आदि पुरुष एव नारी को आदि शक्ति के रुप मे देखा है ।

वैदिक समाज मे नारी का वही स्थान है जो कि शरीर मे नाडी का है । जिस प्रकार नाडी की गति का तीव्र का मन्द हो जाना चिकित्साशास्त्र मे स्वास्थ के लिए अच्छा लक्षण नही माना जाता उसका समभाव मे रहना ही उचित है ।

प्राचीन समाज के समाजशास्त्रीय अध्ययन से विदित होता है कि भारत मे अनेक जनसमुदायो का मेल हुआ है । इन विभिन्न समुदायो मे स्त्री का स्तर भी निश्चित रुप से भिन्न—भिन्न रहा है ।

---

[1] निरुक्त—(3/21/2)

वैदिक कालीन समाज मे स्त्रियो का जो सामाजिक स्तर था, वह आज समकालीन विश्व के विकासित देशो की स्त्री की सामाजिक स्थिति से अधिक ऊचा था ।

फिर वो कौन से कारण थे जिन्होने भारतीय समाज की स्त्री को इतना जर्जर और क्षीण स्वरुप दिया ? आर्य सस्कृति मे अनेक सस्कृतियो का समावेश हुआ है । जैसे–दास, असुर, राक्षस, किरात और नागजातियॉ । इन विभिन्न जातियो मे स्त्रियो के सामाजिक स्तर भी भिन्न–भिन्न थे ।

इन जातियो मे स्त्रियो के पद और चरित्र उतने उच्च न थे । जब इन आर्य और आर्येत्तर वर्गोका एक सामाजिक सघटन हुआ और उसे हिन्दू नाम से अभिहित किया गया तो उसमे हिन्दू समाज मे आर्यो की स्त्री सम्बधी मान्यताए भी जुडी ।

इसी कारण साहित्य के विभिन्न सोपानो मे हमे स्त्री की सामाजिक स्थिति सतत् परिवर्तनो की एक श्रृखला के रुप मे प्राप्त होती है । अर्धनारीश्वर ने पार्वती को अपने मस्तक पर स्थान देकर नारी को सम्मानित किया । शिव के इस रुप को देखे, तो ज्ञात होता है कि पार्वती का शरीर बायी ओर है और शिव का दाहिनी ओर। वैज्ञानिक तथ्य ये बताते है , कि किसी भी शरीर मे ह्रदय बार्यी ओर होता है और साथ ही शरीर के वाम भाग की क्रियाएँ मास्तिष्क के दाहिने भाग से और दायें भाग की क्रियाऐं बाये भाग के मस्तिष्क से नियत्रित होती हैं । यदि स्त्री में ह्रदय के भावपक्ष की प्रधानता है तो पुरुष में बुद्धिपक्ष की। यही कारण है कि ममता स्नेह, वात्सल्य, ईर्ष्या इत्यादि ह्रदयपक्षीय भावनाओ की प्रधानता स्त्री मे होती है, और उसके निर्णय इन्ही भावनओ से प्रेरित होते है।

मानव जीवन जटिल है और केवल भावनाओ के आधार पर लिए गये निर्णय लेने वाली स्त्रियो के सुचारु जीवनयापन के लिए कठोर निर्णय लेने वाले पुरुषों के सहयोग की आवश्यकता या अपेक्षा होती है । इसी अपेक्षा को ध्यान मे रखकर उसे पिता, पति या पुत्र के सरक्षण मे रहने की सलाह दी गई है ।

यही मत मनोवैज्ञानिको का भी है । कुछ मनोवैज्ञानिको का कथन है कि नारी पुरुष की अपेक्षा अधिक सवेदनशील होती है । नारी की सवेदनशीलता की व्याख्या यह विचारक उसकी शारीरिक रचना के कारण मानते है । एलिस एक ऐसे ही विचारक है । वे एक उदाहरण देते है–लज्जा नारी मे पुरुष की अपेक्षा अधिक पायी जाती है । लज्जा vasomotor system द्वारा नियंत्रित होती है। तथा ये system सवेगो का केन्द्र है । इस प्रकार नारी का अधिक लज्जाशील होना इस बात का द्योतक है, कि नारी पुरुष की अपेक्षा अधिक सवेदनशील है । प्रतिक्षेप क्रिया (reflex action) भी नारी मे पुरुष की अपेक्षा अधिक विकसित होती है । इसी कारण नारी की आखो मे पुरुष की अपेक्षा अधिक शीघ्रता से अश्रु आते है । ये कुछ शरीर रचना के कारण सवेदनशील मानने वाले विचारक आगे चल कर यह तर्क देते है, कि जिस प्राकर सिखाने से समझदारी बढ सकती है उसी प्रंकार सवेदनशीलता भी बढ सकती है ।

इसका और भी प्रमाण सस्कृतिवादियो की व्याख्या मे मिलता है जिसके अनुसार मनुष्य के जन्मजात गुण भी वातावारण के प्रभाव से बदल जाते है । अत इन सस्कृतियो मे सवेगात्मक अभिव्यक्ति (expression of emotion) समाज मे मान्य नही है, वहॉ की स्त्रियो मे हम कम सवेदनशीलता पाते है ।

मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण करने मे सबसे महत्वपूर्ण भाग सामाजिक एव सास्कृतिक कारणो का होता है । कोई भी व्यक्ति किस प्रकार का व्यवहार करता है, उसके व्यक्तित्व की क्या विशेषता है । यह इस बात पर निर्भर करता है कि वह किस वातावारण मे पालित है । बाल्यकाल मे उसके साथ कैसा व्यवहार हुआ । उसके आस–पास के लोग उसके परिवार के मित्र और उनका व्यवहार ।

उसकी सस्कृति मे कौन सी सामाजिक व नैतिक मान्यताए है ।

यही कारण है कि एक सस्कृति की नारी अधिक लज्जाशीला तथा दूसरी सस्कृति की प्रभुत्व प्रिय होती है । पश्चिमी देशों की नारिया हमारे सामाजिक

मानको पर खरी नही उतरती और उनके अनुसार भारतीय समाज मे स्त्रियॉ अत्यधिक पिछडी हुई है ।

समाजशास्त्री मेलिनास्की के अनुसार किसी भी युग की नारी की स्थिति का परिचय उस युग की नारी और पुरुष के पारस्परिक कर्तव्यो तथा दोनो के रक्षा सम्बधी विधानो द्वारा प्राप्त हो सकते है ।

प्रारम्भिक अवस्था मे नर व नारी समान रुप से कार्य करते थे । आर्थिक रुप से दोनो समान थे । दोनो ही कन्द मूल और भोजन सामग्री एकत्र करते थे। परन्तु कुछ अन्य कारणो से नारी की रक्षा का भार पुरुष को स्वीकार करना पडा ।

प्रकृति प्रदत्त मॉ बनने की क्षमता के कारण स्त्री सन्तान का भार वहन करती थी, और उसका लालन पालन वात्सल्य भाव से करती थी । उस समय पुरुष उसके भोजन की व्यवस्था करता था । तथा उसके लिए समस्त सुख सुविधाओ के साधन जुटाता था । समुदाय का कार्य दोनो ही करते थे । कार्य भिन्न होने पर भी दोनो के कार्यो का मूल्य समान था । यह आखेट युग था ।

शनै शनै सभ्यता का सूर्य विकसित होने लगा । कृषि युग की लालिमा मे पुरुष ने अपनी स्वतत्र गतिशीलता के गुण के कारण जीवन–यापन के समस्त साधनो पर अपना अधिपत्य स्थापित कर लिया ।

मानव सभ्यता के प्रथम चरण मे ही स्त्री के लिए कुछ नैतिक नियम निर्धारित कर दिये गये । मातृस्वरुप–स्त्री के लिए प्राकृतिक अनिवार्य बंधन है, और स्त्री इस बधन से पूर्ण होती है । जब एक शिशु का जन्म होता है , तब एक बालक का ही जन्म नही अपितु एक मॉ का भी जन्म होता है । उसकी ममता का जन्म होता है । यही स्त्री के लिए सर्वमान्य नैतिक नियम है , और वह इसी मे सुख का भी अनुभव करती है । पृथ्वी आदि जननी है और जब उसका पुत्र अर्थात वृक्ष सफल होता है , तब वह प्रथम झुककर विनयावत् अपनी मॉ का अभिवादन करता है । यह मॉ और पुत्र का सम्बध है । इसी मातृत्व गुण के कारण नारी का महत्व अत्यधिक है ।

स्त्री वह धरा है, जो समाज रुपी फसल देती है अर्थात स्त्री समाज की भूमि है, और उसकी सतति फसल । जो स्थान सृष्टि के प्रणेता–ब्रह्मा का सृष्टि रचना मे है, वही स्थान समाज मे स्त्री के मातृत्व स्वरुप का।

मानव की निर्मिति विधाता के रचना विधान का चरमफल है । स्त्री और पुरुष दोनो ही सृष्टि सृजन के लिए समान रुप से उपयोगी है, मोहनजोदडो और हडप्पा की खुदाई से प्राप्त नारी की नग्न मूर्तियां ये बताती है कि ये परिवार मातृ सत्तात्मक थे । ऋग्वेद मे भी मातृ सत्तात्मकता का सकेत इस श्लोक से मिलता है ।

'पुरैषा पद्धर्ति भार्या गृहेयद् विशते पतिः ।

एधन्ते ज्ञातश्वास्या पतिबन्धेषु बध्यते ।।

वरातनुर्भवति सा रुशति पापसंमृषा ।

पतिर्यद् वाससा वध्वा स्वमगपरिधित्सते [1]।।

जहाँ पुरुष पत्नी के घर मे ही निवास करता था । इसके अतिरिक्त स्वयवरा शब्द से भी नारी की प्रधानता अभिव्यक्त होती है । मातृसत्तात्मक परिवारो मे वशावली माता के नाम से चलती थी । यथा–पौतिमाषीपुत्र, कात्यायनीपुत्र, गौतमीपुत्र, भारद्वाजीपुत्र, पाराशरीपुत्र ।

आज भी कुछ जन जातियों मे मातृ सत्तात्मकता परिलक्षित होती है । जैसे–खासी, गारो तथा मलावार की कुछ जातियॉ ।

वैदिक काल मे अदिति को मातृदेवी माना गया । इन्हे देवमाता की उपाधि मिली । वह अनादिजननी है , तथा मनुष्यों को बधनमुक्त करती है । इन्द्राणी अपने त्याग और बलिदान से इन्द्र को बलवान बनाती है । तथा आदर्श पत्नीत्व की प्रतिष्ठा करती है । सूर्या आज भी आदर्श हिन्दू वधू के रुप मे समादृत है ।

---

[1] विवाह सूत्र (10/85)

सरस्वती विद्या और बुद्धि की देवी है । दुर्गा शक्ति की और उनका वाहन सिह है ।

'पुरुष सिंह निश्चय भूतल सिंह वाहिनी नारी जय।'

(पुरुष यदि सिह है तो पुरुष को नियत्रित करने वाली नारी दुर्गा है ।)[1]

काली क्रोध मे शिव को पद्दलित कर देती है, और उसी शोक से उनका वर्ण श्याम हो गया। ज्ञान, बल, और धन की अधिष्ठात्री देवी के रुप मे प्राय क्रमश सरस्वती, दुर्गा व लक्ष्मी है। इनकी प्रतिष्ठा करके प्राच्य मनीषियो ने नारी सम्मान की भावना को मूर्तमान किया है । भरण पोषण की प्रतीक सर्वसहा पृथ्वी ने जनकनन्दिनी सीता, रत्नाकर ने सागरतनया लक्ष्मी और नगाधिराज हिमालय ने हिमसुता पार्वती को जन्म देकर नारी को अपूर्व सहनशक्ति सौभाग्य दृढसकल्प का प्रतीक बना दिया । आर्यो ने सृष्टि का प्रारम्भ प्रकृति एव पुरुष के परस्पर सयोग से माना है । नर तथा नारी क्रमश प्रकृति एव पुरुष है । उनके पारस्परकि सम्बध से ही यह सृष्टि स्थायी है । इस स्थायित्व को मर्यादित बनाने के लिए ही समाज ने स्त्री और पुरुष के लिए सीमाए निर्धारित की और उन सीमाओ को रिश्तो के नाम से अभिहित किया ।

विभिन्न धर्मग्रथो का अध्ययन करने पर स्त्री के सम्बध मे परस्पर विरोधी बाते मिलती है, जिनके कारण किसी एक निष्कर्ष पर पहुचने मे कठिनाई होती है । देश काल व प्रकृति के अनुरुप स्त्रियो की विभिन्न प्रवृत्तियॉ रही है । प्राचीन भारतीय साहित्य मे उच्चतम एव निकृष्टतम दोनो ही कार्यो मे सलग्न स्त्रियो के विषय मे बहुत कम उल्लेख मिलता है । प्रत्येक वर्ग की नारी की पृथक विवेचना से ही हम वास्तविक स्थिति का अनुमान लगा सकते है ।

कन्या के रुप मे स्त्री के साथ जन्म के पूर्व ही से अन्याय की शुरुआत हो जाती है । वैदिक काल से ही हम विभिन्न सस्कारो के माध्यम से देखते है

---

[1] नारी महाकाव्य–अतुल कृष्ण गोस्वामी–पृष्ठ–2/7

कि प्राय समाज पुत्र की ही कामना करते थे । गर्भाधान से लेकर पुसवन सस्कार तक पुत्र की ही कामना करते थे । पुसवन सस्कार मे पुत्र की याचना के लिए ही देवताओ की स्तुति और उनसे पुत्र प्राप्ति सम्बधी वर के याचना के साथ ही कुछ ऐसी औषधियो का उपयोग होता था, जिन्हे आयुर्वेद मे पुत्र–उत्पत्ति के लिए और गर्भ रक्षा के लिए समर्थ बताया गया है । अत यह तो निश्चित है कि विभिन्न सस्कारो मे पुत्र की अपेक्षा पुत्री का स्थान निम्न था। अथर्ववेद मे इसकी पुष्टि होती है । इसके दो कारण थे, एक धार्मिक व वश चलाने के लिए तथा दूसरा योद्धाओ की आवश्यकता के लिए। इसीलिए ऋग्वेद मे बार–बार वीर पुत्रो की कामना की गयी है । वैदिक युग मे पुत्र लाभ होने पर परिवार के लोग अधिक प्रसन्न होते थे, किन्तु फिर भी नामकरण के समय पुरुष और स्त्री मे वैदिक ऋषियो ने भेद नही किया है, क्योकि हम पाते है कि स्त्रियों के नामकरण के लिए अयुग्म अक्षरो का होना, साथ ही आई या दा के अत होने की रीति का उल्लेख मिलता है । ऐसे नाम क्रमश सीता, कौमुदी या मोक्षदा है । साथ ही नक्षत्रो, नदियो, सूर्य, चन्द्र आदि के नाम पर भी नाम न रखने का परामर्श है । और न ही उनसे देवताओ के दिये हुए होने की, अभिव्यक्ति होनी चाहिए । मनु के अनुसार ————————

> **'कन्याओं के नाम सरलता से उच्चारण करने योग्य, अक्रूर, स्पष्ट अर्थवाले, मनोरम, मांगलिक दीर्घवर्ण मे अंत होने वाले और आर्शीवादात्मक होने चाहिए।'[1]**

कन्याओ के नाम के विषय मे इतनी खोजबीन होने लगी कि कुछ धर्मशास्त्रकारो ने नियम बनाया कि नक्षत्र, वृक्ष व नदी के नाम पर जिस कन्या का नाम हो उसको विवाह के लिए नही चुनना चाहिए । वात्स्यायन के अनुसार————————

> 'नक्षत्राख्यां नदीनाम्नी वृक्षनाम्नी च गर्हिताम् ।
> लकार–रेफोपान्तां च वरणे परिवर्जयेत ।।[2]

---

[1] मनुस्मृति (2/33)
[2] कामसूत्र (3/1/13)

नामकरण का अतिशय महत्व होता है वृहदारण्यक उपनिषद् में नामकरण के सदर्भ मे एक प्रश्न मिलता है ।[1]

> 'मरने के बाद क्या है जो मनुष्य को नही छोडता है ? इसका उत्तर है नाम ।'

उपनयन सस्कार :— जिन कन्याओ की अभिरुचि अध्ययन की ओर थी उनका उपनयन वैदिक काल से होता आया है । प्रारम्भ मे जिस प्रकार सभी बालको का उपनयन होना आवश्यक नही था, उसी प्रकार सभी कन्याओ का उपनयन नही होता था । सदा से ही पुरुषो की अपेक्षा स्त्रियो मे शिक्षा की कमी रही है । ऐसी परिस्थिति मे ऐसी कन्याओ की सख्या प्राचीन काल मे बहुत अधिक नही थी, जिनका उपनयन होता है । वो कन्याए अध्ययन के लिए आश्रम मे जाती थी । कलान्तर मे कन्याओ के विवाह की अवस्था क्रमश कम निर्धारित होती गई । ऐसी स्थिति मे उसका आश्रम मे जाकर पढना बद हो गया, ऐसी कन्याओ की सख्या बहुत कम रह गई जो उपनयन के पश्चात वेद–विद्याओ का अध्ययन करती हो । कन्याओ का उपनयन विवाह के समय केवल धार्मिक विधान की पूर्ति के लिए होने लगा ।

विवाह के समय कन्याओ के यज्ञोपवीत धारण करने का उल्लेख गोभिल गृहसूत्र मे मिलता है———————

> 'यम के अनुसार कन्याओं के लिए मौजीबन्धन, वेदों का अध्ययन, अध्यापन व सावित्री वाचन का विधान साथ ही इन्हे पिता, चाचा या भाई के अतिरिक्त कोई दूसरा न पढाये । वे अपने ही घर में भीख मांगे उन्हे अजिन, चीर और जटा नहीं धारण करना चाहिए ।'[2]

---

[1] वृहदारण्यक उपनिषध (3/2/12)

[2] संस्कार प्रकाश–पृष्ठ 402,403

बाणभट्ट ने कादम्बरी मे तपस्विनी महाश्वेता का वर्णन करते हुए लिखा है कि उसका शरीर ब्रह्मसूत्र (यज्ञोपवीत) से सुशोभित हो रहा था ।

कन्या का होना (जन्म होना) किसी पिता के लिए दुख का कारण क्यो था ? क्योकि यह कन्या यदि स्वेच्छा से अनुपयुक्त वर का वरण करती है तो वह माता–पिता और श्वसुर तीनो कुलो का नाश करती है । किन्तु ऐसा नही है कि पुत्रियो का जन्म होते ही माता–पिता शोकग्रस्त होते हो ।

ऋग्वेद मे अनेकानेक प्रमाणो द्वारा ये कहा जा सकता है कि माता–पिता का स्नेह पुत्रियो को प्राप्त होता था । ऋग्वेद मे माता–पिता व कन्या के सम्बध को रुपक द्वारा इन शब्दो मे वर्णित किया गया है——————

> **'संगच्छमाने युवती समन्ते स्वसाराजामी पित्रोरुपस्थते ।'[1]**
>
> **(परस्पर उपकारी भाव से युक्त–नित्य तरुणी युवती और जमातृ पिता की गोद मे बैठते है ।)**
>
> **'कन्या का जन्म संभवतः माता–पिता को अधिक प्रिय इस कारण नहीं था। क्योंकि कन्या के साथ उसकी रक्षा (कौमार्य की सुरक्षा) का दायित्व उन पर आ जाता था । धर्मशास्त्रकारों ने कन्या के कौमार्य की सुरक्षा पर बल दिया है । तथा अक्षतयोनित्व कन्या को ही विवाह योग्य माना गया।'[2]**
>
> **'कौमार्य का लोप होना पतन का घोतक था [3]। हिन्दूकन्याएं कौमार्य भंग होने पर अपने प्राण उत्सर्ग कर देती थी । इसका श्रेष्ठ उदाहरण वेदवती है ।'[4]**

---

[1] ऋग्वेद (1/185/5)
[2] गौतम (4/1),वशिष्ठ (8/1),याज्ञवल्क (1/52), मनु (9/176)
[3] महाभारत (10/90/30)
[4] रामायण (7/17)

'महाभारत से ज्ञात होता है कि यदि कन्या का कौमार्य भग होने मे उसका अपराध नही होता था तो वह क्षम्य थी ।'[1]

'अपराधश्चते नास्ति कन्याभावं गताह्यसि ।'

'कन्या अक्षतयोनि पर बल दिये जाने के सभ्भ्वत तीन कारण थे । पहला पुरुष अक्षतयोनि कन्या से ही विवाह करना चाहते थे । दूसरा जैसा कि हैवलाक् एलिस का studies in Sex Psychology Part- I मे कहा है, कि लज्जाशील और सकोची कन्याए पुरुष अधिक पसद करते है, तीसरा कारण कन्या पिता की ऐसी सम्पति होती थी, जिसे स्वेच्छा से पिता किसी अन्य योग्य पुरुष को प्रदान करता था, जिस प्रकार नई वस्तु एक बार भी प्रयुक्त हो तो पुरानी पड जाती है, और .उसकी कीमत कम हो जाती है, उसी प्रकार कन्या का कौमार्य भग होने पर वह विवाह के योग्य नही रह जाती थी ।'

इसी कारण उसे जीवन के हर प्रहर मे पुरुष के संरक्षण की आवश्यकता हुई ।

'पिता रक्षति कौमारे भर्त्ता रक्षति यौवने ।

रक्षन्ति स्थविरे पुत्रा न स्त्री स्वातंन्त्र्यमर्हति ।।'[2]

यही कारण था कि रक्षा मे असमर्थ माता–पिता बाल विवाह की महत्ता मानकर यथाशीघ्र पुत्री को पति गृह के लिए बिदा करने लगे——————

'तस्माद् विवाहयेत् कन्यां यावन्नर्तुमती भवेत् ।

विवाहो ह्मष्टवर्षायाः कन्यायास्तु प्रशस्यते ।।'[3]

इन्ही कारणो से स्त्री का समाज मे स्थान ऋग्वैदिक काल की अपेक्षा कम होता गया शिक्षा के क्षेत्र मे पुत्र व पुत्री का समान अधिकार था । ऋग्वेद मे पुत्र के समान ही पुत्री को शिक्षा देने का उल्लेख है ।

---

[1] महाभारत (15/30/2)
[2] मनुस्मृति (9/3)
[3] सम्वर्तस्मृति 68

'ब्रह्मचर्येण कन्या युवान विन्दते पतिम'

ब्रह्मचर्य की समाप्ती पर कन्या का पाणिग्रहण सस्कार होता था [1]।

आश्वलायनश्रौतसूत्र मे समान ब्रह्मचर्यम् कहकर स्त्रियो के लिए भी शिक्षा की अनिवार्यता सिद्ध की ।

वैदिक काल से लेकर ईसवी शताब्दी के प्रारम्भ तक कन्या का वेदाध्ययन उपनयन सस्कार से प्रारम्भ होता था । सूत्र युग मे भी स्त्रियॉ वेदो का अध्ययन करती थी । तथा मत्रोच्चारण करती थी । तैत्तिरीय के उपाख्यान से प्रमाणित होता है कि कन्याए धार्मिक शिक्षा में रुचि रखती थी ।

वृहदारण्यकोपनिषद् मे विदुषी पुत्री की आकाक्षा व्यक्त की गई है ।

'अथ य इच्छेद् दुहिता में पण्डिता जायेत सर्वमायुरियादिति ।

तिलौदनं पचचित्वा सर्पिष्मन्तमश्नीयातामीश्वरौ जनयितवै [2]।।'

त्याग और तपस्या से कन्याऐ ऋषि भाव प्राप्त करती थी। मत्र दृष्टा ऋषियो की तरह घोषा, गोधा, विश्ववारा, अपाला, रोमशा, लोपामुद्रा प्रभृति अनेक ऋषिकाओ का उल्लेख मिलता है । इनकी सूची इस प्रकार है----

	नाम		दृष्टमंत्र और संख्या
1	अगस्त स्वसा	–	ऋग्वेद 10/60/6 एक
2	अदिति	–	ऋग्वेद 10/72/1–9 नौ
3.	अपाला	–	ऋग्वेद 8/91/1–7सात
4.	इन्द्राणी	–	ऋग्वेद 10/145/1–6 छ
	इन्द्राणी	–	ऋग्वेद 10/6/1–23 तेईस
5.	इन्द्र–मातर	–	ऋग्वेद 10/153/1–5 पॉच

[1] अथर्ववेद (11/5/18)
[2] वृहराण्य कोपनिषद (6/4/17)

6	इन्द्र–स्नुषा	–	ऋग्वेद 10/28/1– एक
7	उर्वशी	–	ऋग्वेद 10/95/2,4 नौ
8	कुशिका रात्रि	–	ऋग्वेद 10/127/1–8 आठ
9	गोधा	–	ऋग्वेद 10/134/6–7 दो
10	घोषा काक्षीवती	–	ऋग्वेद 10/39/1–14 चौदह
11	जुहू	–	ऋग्वेद 10/108/117 सात
12	दक्षिणा प्रजापत्या	–	ऋग्वेद 10/107/1–11 ग्यारह
13	यमी	–	ऋग्वेद 10/154/1–5 पॉच
14	यमी वैवस्वती	–	ऋग्वेद 10/10/1,3,6 छ·
	यमी वैवस्वती	–	ऋग्वेद 10/7/11–13 तेरह·
15	रोमशा कक्षीवान् (ब्रह्मवादिनी)	–	ऋग्वेद 1/126/1–7 सात
16	लोपामुद्रा	–	ऋग्वेद 1/179/1–9 छ·
17	वाक् आम्भृणी	–	ऋग्वेद 10/125/1–8 आठ
18.	विश्वाबा रात्रेयी	–	ऋग्वेद 5/28/19 छः
19	राची पौलोमी	–	ऋग्वेद 10/159/1–6 छः
20	श्रद्धा कामायनी	–	ऋग्वेद 10/151/1–5 पॉच
21	शश्वती आगिरसी	–	ऋग्वेद 8/1/1–34 चौतीस
22	सरमा देवशुनी	–	ऋग्वेद10/108/2,4,6,8,10,11 छ·
23	सूर्या सावित्री	–	ऋग्वेद10/85/1–47 सैतालिस
24	सार्पराज्ञी	–	ऋग्वेद 10/189/1–3 तीन
25.	सिकता–निवावरी	–	ऋग्वेद 9/89/11–20 दस[1]

[1] भारतीय सस्कृति – डा0 विरेन्द्र प्रताप सिह पृ0 111–112

शतपथ ब्रह्मण मे याज्ञवल्क की पत्नी मैत्रेयी को ब्रह्मवादिनी बताया गया है । हारितधर्मसूत्र मे भी स्त्रियो के दो विभागो ' ब्रह्मवादिनी और सद्योपवधू' का निर्देश करते हुए उनके उपनयन का विधान किया गया है। पाणिनी अष्टाध्ययी मे उपाध्याया के लिए 'उपेत्याधीयतेऽस्या उपाध्याया',का उल्लेख है । 'यज्ञानुष्ठान काल मे उसे विविध मत्रो का उच्चारण करना पडता था अत उसका शिक्षित होना आवश्यक था ।'

इसके अतिरिक्त कन्याओ को अन्य गृहकार्यो में दक्ष बनाने की भी परम्परा रही है । कन्या को दुहितृ कहा जाता था । जिसका अर्थ है दूध दुहना दधि से नवनीत अलग करना । सीवनकर्म करने का उल्लेख ऋग्वेद मे मिलता है-----

'तन्तुं ततं संवयन्ती समीची यज्ञस्य पेशः सुदुधेपयस्वती [1] ।'

जल भरने का काम भी प्रारम्भ से कन्याओं के हिस्से में रहा है-----

'तास्ते विषं विजभ्रिर उदकं कुम्भिनीरिव [2] ।।'

वेद–कालीन समाज मे युवतियों को उन्मुक्त वातावरण प्राप्त था। वह श्रृगार करके लोक उत्सवों मे जाती थी । ऋग्वेद मे यह उल्लेख है कि स्त्रियॉ (योषा) समनो मे जाया करती थी । सम्भवत. इसी कारण वो श्रृंगार करती थी । 'समग्रुवो न समनेष्वजन् ।' समन के अवसर के लिए उबटन लगाने का वर्णन है। ऋग्वेद की बहुसख्यक उपमाओ से ज्ञात होता है कि युवाजन एक दूसरे से प्रणय निवेदन भी कर सकते थे।

'यूने युवतयो नमन्त'[3]
'जारं न कन्यानूषत'[4]
'युवशेव कन्यानां[5]'
'मित्रं न योषणा'[6]
'जारो न योषणा'[7]

---

[1] ऋग्वेद (2/32/4)
[2] ऋग्वेद (2/32/4)
[3] ऋग्वेद (10/30/6)
[4] ऋग्वेद (9/56/3)
[5] ऋग्वेद (5/15/24)
[6] ऋग्वेद (5/52/14)
[7] ऋग्वेद (6/101/14)

स्मृतिकाल तक आते–आते कन्याओ की ये उन्मुक्तता समाप्त हो गई। सर्व प्रथम गौतम ने – 'अस्वतत्रा धर्मे स्त्री' कहकर धर्म कार्य मे पराधीन कहा । वशिष्ठ ने 'अस्वतत्रा स्त्री पुरुषप्रधाना' कहकर स्त्री को पुरुष के अधीन कर दिया। प्राय यही से स्त्री की पराधीनता का इतिहास हमे प्राप्त होता है । वधू या पत्नी के रुप मे विवाह की आयु पर विचार करते हुए वैदिक काल मे अविवाहित रहने का अधिकार स्त्रियो को प्राप्त था । 'अमाजू' शब्द का तात्पर्य उस वृद्धा स्त्री से है जो आजीवन अविवाहित रहती है । इसके अतिरिक्त उच्च अध्ययनरत नारियॉ भी आजीवन ब्रह्मचारिणी रहती थी । उपनिषद्काल मे सुलभा ने मोक्षप्राप्ती के लिए अविवाहित रहने का व्रत लिया था । किन्तु समय के साथ–साथ हर युग मे इसे मान्यता नही मिली । महाभारत मे दीर्घतमा ने भविष्य मे स्त्रियो के अविवाहित रहने पर रोक लगा दी । अविवाहित स्त्रियो को मोक्ष की प्राप्ती नही होती । उस धारणा के साथ कन्या का विवाह आवश्यक माना जाने लगा और ई0पू0 तीसरी शताब्दी तक विवाह करना अनिवार्य हो गया इसका मुख्य कारण स्त्रियो का माता पिता की अनुमति लिए बिना बौद्ध एव जैन सघो मे प्रवेश लेना माना गया । इस सधो के उच्च आदर्शो का पालन न कर पाने पर इनका पतन होने लगा इस कारण विचारको ने पुत्री का विवाह पुत्र के उपनयन के तुल्य मान लिया तथा ऐसी अविवाहित स्त्रियों को अपनी पवित्रता बनाये रखने मे अनेक कटिनाइयों का सामना करना पडता था ।

> **'वैदिक युग में स्त्रियों का विवाह युवा होने पर होता था । कन्या को बिदा करते समय उसके पिता पलंग, गद्दे आदि देते थे ।'**[1]

इसके अतिरिक्त खजाने की सदूक, गाय, कंबल आदि भी कन्या को दान स्वरुप दहेज में देते थे इस प्रकार कन्या से पत्नी के रुप मे परिवर्तित हो, वधू–पतिगृह मे प्रवेश करती । सास–ससुर पति आदि की सेवा करके पूर्ण–प्रभुता सम्पन्न वधू सभी का ह्रदय जीत लेती वह सेविका न होकर गृह साम्राज्ञी कही जाती थी ।

> **'साम्रज्ञी श्वसुरे भव साम्राज्ञी श्वश्रंवा भव ।**
> **ननान्दरि साम्राज्ञी भव साम्राज्ञी अधि देवृषु [2]।।'**

---

[1] अथर्ववेद (14/2/31,41)
[2] ऋग्वेद (10/85/46)

इस शुभाशसा से प्रतीत होता है कि नववधू को पति के कुटुम्ब में अतिशय आदर प्राप्त होता था । पति अपनी पत्नी से कहता है । – सामवेद मै हूँ । तुम ऋग्युवेद हो, हम दोनो परस्पर प्रिय हो एक दूसरे के साथ प्रभावित हो । हम दोनो के मन परस्पर औदार्य बरते और हम दोनो साथ–साथ सौ वर्ष जीए तुम पत्थर की भाति दृढ बनो । आश्वलायन, गृहसूत्र मे वर कन्या को सम्बोधित करके कहता था मै पुरुष हूँ, तुम स्त्री हो । तुम नारी हो, मै पुरुष हूँ । मै द्यौ हूँ (आकाश हूँ, तुम पृथ्वी हो), मै साम हूँ, तुम ऋक् हो । हम दोनो विवाह करे एक दूसरे के लिए, प्रिय रोचनशील और प्रसन्न मन वाले होकर, हम दोनो सन्तान उत्पन्न करे । इसी प्रकार मनु ने विवाहित दम्पत्ति को उपदेश दिया––

'स्व प्रसूतिं चरित्रं च कुलमात्मानमेव च ।

स्व च धर्म प्रयत्नेन जायां रक्षन् हि रक्षति [1]।।'

अपनी संतान, चरित्र, कुल अपनी और अपने धर्म

की रक्षा कर सकते हो अपनी पत्नी की सुरक्षा करते हुए ।

स्त्रियो की निन्दा भारतीय साहित्य मे अनेक स्थानो पर मिलती है । यह निन्दा सती साध्वी स्त्रियो के लिए नही है । जो माता, गृहिणी, भगिनी या दुहिता के रुप में किसी कुटुम्ब का अंग रही हो । इनको कुल स्त्री कहते थे । इनके विषय मे वात्स्यायन लिखते है––––––––

'धर्ममर्थ तथा कोमं लभन्ते स्थान मेव च ।

निः सपत्नं भर्तार नार्यः सद्वृत्तमाश्रितः [2]।।

निन्दनीय सर्वदा वे ही स्त्रिया रही है जो साधुपथ छोड़कर केवल उत्श्रृंखल व शारीरिक उपभोग की सामग्री बन गई अथवा कुचक्री व पथ भ्रष्ट तत्वो के साथ मिलकर समाज को दूषित करने वाली रही है ।

---

[1] मनुस्मृति (9/7)
[2] कामसूत्र (4/1/55)

गृहशान्ति के लिए पत्नी को विषम स्थिति मे भी सहन–शक्ति और पति सेवा परायण होने की सीख मनु ने दी है ———

'विशीलः कामवृत्तो वा गुर्णेवा परिवर्जितः ।
उपचर्यः स्त्रिया साध्व्या सततं देववत्पतिः[1] ।।'

महाभारत मे आदर्श पत्नी का स्वरुप बताया गया ———

'सा भार्या या गृहे दक्षा सा भार्या या प्रजावती ।
सा भार्या या पतिप्राणा सा भार्या या पतिव्रता ।।
अर्धभार्या मनुष्यस्य भार्या श्रेष्ठतमः सखा ।
भार्या मूल त्रिवर्गस्य भार्या मित्रं मरिष्यतः [2]।।

महाभारत मे दौपदी का आदर्श पत्नीव्रत प्रशसित है । भागवत मे पत्नी की उपयोगिता बतायी गयी है कि उसके साथ समय हासपरिहास मे अच्छा बीत जाता है ।

'अय हि परमो लाभो गृहेषु गृहमेधिनाम् ।
यन्नमैनीयते यामः प्रिया भीरु भामिनी ।।[3]

पत्नी के पश्चात स्त्री का मातृरुप प्रस्तुत किया गया है । वृहदारण्यक उपनिषद् के छठे अध्याय के चौथे ब्राह्मण मे पुत्र जन्म उत्सव का वर्णन मिलता है। उस युग मे पुत्रोत्पत्ति एक धार्मिक कृत्य माना जाता था ।

'सह प्रजापति रीक्षांचके हन्तास्मै प्रतिष्ठां कल्पयनीति सस्त्रियं ससृजे।'

नारी यज्ञ की वेदिका थी और पुत्र उसका फल जो परलोक के लिए हितकारी था ।

---

[1] मनुस्मृति (45/154)

[2] आदिपर्व मनुस्मृति (68/39,41)

[3] भागवत (10/60/31)

'यस्या वेदिरुपस्थो लोमानि बर्हिश्चम्मीधिषवणो समिद्वो मध्य तस्तौ मुष्कौ ।

स यवान ह वै वाजपेयेन यजमानस्य लोके भवति तावानस्य लोकोभवति।।'[1]

आर्यो ने सृष्टि का प्रारम्भ प्रकृति एव पुरुष के पारस्परिक सम्बध से माना है । नारी तथा नर क्रम से प्रकृति तथा पुरुष के रुप है और उनके आपसी मेल से ससार स्थायी है । पति पत्नी के आदर्श प्रेम का उदाहरण भवभूति ने मालती माधव मे रखा है ।

'प्रेयो मित्रं, बंधुता वा समग्रा सर्वे कामाः शेवधिर्जीवितवां स्त्रीणां भर्ता, धर्म दाशश्च पुंसामित्यन्योन्यंवत्सयोज्ञतिमस्तु ।

पत्नी घर की मर्यादा, धर्म, अर्थ, काम की सचालिका मानी जाती थी।''

'गुणवत्युपाय–निलये स्थिति हेतो । साधिक त्रिवर्गस्य ।

मद्भवननीति–विधे । कार्यादार्ये । द्रुतमुपैहि ।।'

प्राचीन आर्य इस बात से भली भांति अवगत थे कि स्त्रियों के प्रति सम्मान तथा उनकी सामाजिक स्वतत्रता से ही सभ्यता का यथार्थ विकसित है , इसी लिए वैदिक आर्यो ने स्त्रियों को सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्र मे पुरुषो के समान अधिकार दिए । इस समानता तथा स्वतत्रता ने आर्य नारी को समाज मे उच्च आसन प्रदान किया । किन्तु वैदिक युग के पश्चात नारी का स्वतंत्र व्यक्तित्व धूमिल पडने लगा । मनु की सामाजिक व्यवस्था में नारी का व्यक्तित्व पूर्णतः पुरुष मे तिरोहित हो गया, तथा वैदिक कालीन स्वतत्र और उन्मुक्त नारी अब मात्र कठपुतली बनकर रह गई पांचवी शताब्दी ई0 पू0 से नारी का पतन प्रारम्भ हो गया । जो स्त्रियॉ न केवल सयुक्त अपितु पृथकरुप से यज्ञ करती थी । अब पत्नी द्वारा किए जाने वाले कई कार्य पुरोहित द्वारा होने लगे । शतपथ

---

[1] वृहदारण्यक (6/4/3)

ब्राह्मण से ज्ञात होता है कि पहले पत्नी द्वारा होने वाला हवि बनाने का कार्य बाद मे आग्नि प्रज्जवलित करने का कार्य पुरोहित करने लगा । इस प्रकार बौद्वकाल के आते–आते स्त्री के साथ दुर्व्यवहार होने लगा । रजस्वला की स्थिति मे पत्नी अपवित्र होती थी। अत उसे सदैव के लिए अपवित्र मानकर कर्मकाण्ड की जटिलता बताकर उससे यज्ञ करने का अधिकर तो छीना ही साथ ही सभी धार्मिक कार्यो के लिए अनुपयुक्त मानकर उन्हे अधिकारो से वचित कर दिया गया । उनकी यह स्थिति दूसरी शर्ता ई0पू0 तक हो चुकी थी। किन्तु पारिवारिक जीवन मे उन्हे अब भी स्थान प्राप्त था । महाभारत मे पत्नी को प्रसन्नता की कुजी कहा गया है, क्योकि पुत्र, पुत्रियो, पुत्र–वधुओ से घर परिपूर्ण होने पर भी व्यक्ति का जीवन पत्नी के बिना सूना होता है ।

'गृंहतु गृहीणीहीनं कांतारा दतिरिच्यते ।[1]'

ब्राह्मण ग्रथो मे तो पति–पत्नी के सबधो को मित्रवता माना गया है।

'सखा ह जाया'[2]

महाभारत मे भी यही बात कही गई है ।

'पुत्र आत्मा मनुष्यस्य भार्या देवकृतः सखा ।[3]'

प्राचीन वाङ्मय में नारी के विषय मे परस्पर विरोधी मान्यताऐ मिलती है । परिस्थितियो के अनुसार स्त्रियों की स्थिति में परिर्वतन होते रहने पर भी सभी युगों मे नारी की प्रशसा और निदा के योग की परपरा पाई जाती है । नारी के सामाजिक विकास पर विचार करते हुए हमारा ध्यान सहज ही उस व्यवस्था की ओर आकर्षित होता है जिसे परिवार की सज्ञा प्रदान की गई । स्त्री और पुरुष दोनो परिवार के मूल है । मनुस्मृति का यह कथन कि 'जो पुरुष है वही स्त्री है। इस बात का घोतक है कि

---

1 महाभारत (12 / 144 / 6)

2 एतरेय ब्राह्मण

3 महाभारत (9 / 374 / 73)

गृहस्थ के जीवन मे जितना पति का विस्तार है उतना ही पत्नी का । डा० वासुदेव शरण अग्रवाल का कथन है कि स्त्री वृत्त का व्यास है और पुरुष उसकी परिधि जिस प्रकार व्यास को तिगुना करके उसकी परिधि बनती है, उसी प्रकार स्त्री के जीवन से गुणित होकर पुरुष का जीवन बनता है । यदि परिवार समाज का केन्द्र बिन्दु है तो नारी इस बिन्दु का विस्तार है । अत· परिवार के अर्तगत उसकी स्थिति एवम् विकास को समझने के लिए हमे उसके स्थिति एवम् विकास को समझना होगा । कन्या और पत्नी के पश्चात स्त्री का मातृ रुप आता है। जिसके द्वारा समाज की स्थिति सदैव सम्मानप्रद रही है । 'मातृदेवो भव' जैसे वाक्य माता की देवता के समान पूजा करने के आदेश देते है । धर्मसूत्रो द्वारा भी माता के गौरव का प्रतिपादन किया गया है । वशिष्ठ द्वारा इस व्यवस्था का विधान है कि पतित पिता तो त्यागा जा सकता है। किन्तु मॉ को नही माता चाहे व्यभिचार आदि दोष से कलकित अथवा अन्य कारणो से जातिभ्रष्ट या पतित हो जा उस अवस्था मे भी माता का भरण पोषण पुत्र का कर्तव्य है । वशिष्ठ के मातनुसार आचार्य का गौरव दस उपाध्यायो से अधिक है। पिता सौ आचार्यो से अधिक है और मात का गौरव एक हजार पिताओ से अधिक है । मनु ने भी वशिष्ठ के समान माता का गौरव हजार गुना माना है । उनके मतानुसार माता, पिता और आचार्य ही तीन लोक, तीन आश्रम तीन वेद और तीन अग्नि माने गए है । मनुस्मृति मे माता को दक्षिणाग्नि एवम् मातृशक्ति को भूलोक की प्राप्ती का कारण बताया गया है । 'दारे किमेक नरकस्य, नारी' जैसा वाक्य लिखने वाले शंकराचार्य भी अपनी माता की मृत्यु के समय उनके पास उपस्थित हुए । सन्यासी द्वारा निषिद्ध होने पर भी उन्होने माता का अन्तिम सस्कार अपने हाथो से सम्पन्न किया । भारतीय सस्कृति मे स्त्री का मातृरुप प्रधान है, जो हमे स्नेह और ममता से आप्लावित करता है । यदि ऐसा न होता तो मातृवत् परदारेषु की दृष्टि अपनाने का निर्देश न मिलता । नारी भोग नही योग का साधन है । इसलिए उसके भोग प्रधान रुप से वितृष्णा पैदा करने के लिए उसकी

निन्दा की है । इस प्रकार वैदिक और स्मार्त मान्यताओ का अतर्विरोध प्रतिभासिक है । यर्थाथ रुप मे नही बल्कि नारी निन्दा का उद्देश्य उसके भोग रुप से दृष्टि हटाकर उसके मातृ रुप की प्रतिष्ठा करना और स्त्री के सास्कृतिक मूल्यो का प्रतिमान मान लिया गया । महाभारत मे माता को सर्वश्रेष्ठ गुरु कहा गया है (माता परम को गुरु नास्ति मातृसमों गुरु) । स्मृतिग्रथो मे भी माता को सर्वोच्च स्थान दिया गया है । माता और सतान के भावत्मक सबध भी सघन थे, क्योकि माता के वियोग मे व्यक्ति शीघ्र वृद्ध हो जाता है और उसी प्रकार माता के लिए भी पुत्र का बिछोह वैधव्य और गरीबी से अधिक कष्टदायी होता था ।

'न मा माधव वैधव्यं नार्थ नाशो न वैरिता ।

तथा शोकाय भवति तथा पुत्रेर्विनाभवः ।।'

जाया श्रेष्ठतम् पद को प्राप्त करती थी, तब वह जननी बनती थी । मातृत्व मे स्त्री के जीवन का चरम् विकास था । प्राचीन वाङ्मय मे हम नारी को हर रुप मे कही न कही निन्दित पाते है किन्तु नारी का मातृत्व ही वह विशुद्ध रुप है जो निन्दा से मलिन नही हुआ है। क्योंकि माता की निन्दा केवल अपवाद के रुप मे ही ली जा सकती है । मार्कण्डेय द्वारा जन्मदात्री के रुप मे माता का माहात्म वर्णित है कि ———

'दस मास तक अपनी कुक्षि मे गर्भ धारण करके आपत्ति उठाने वाली अतुल वेदना सहकर अपत्य को उत्पन्न करने वाली, और स्नेह से उसका पालन पोषण करने वाली से श्रेष्ठ ससार में और कौन है ?'

माता गर्भाशय मे सतान को धारण करती है इस कारण धात्री, जन्म देने कारण जननी, अगसर्वधन के कारण अम्बा और शुश्रूषा के कारण शुश्रू कहलाती है । चिरकारी ने माता की श्रेष्ठता के समर्थन मे यह भी कहा है कि माता सारे दुःख की निवृत्ति है । माता के रहते हुए मनुष्य को कभी चिन्ता नही होती । जो अपनी मॉ को पुकारता हुआ घर आता है वह निर्धन होते हुए भी सधन है । वह वृद्ध होते हुए भी बालक है । मातृहीन

होने पर मनुष्य वृद्ध होता है । और पुत्र पौत्रो से युक्त होने पर भी उसके लिए ससार शून्य होता है । अत.------

'नास्ति मातृसमा छाया नास्ति मातृसमा गतिः ।

नास्ति मातृसमं त्राणं नास्ति मातृसमः प्रियः ।।'

माता के सदृश्य मानी गयी नारियो का भी माता जैसा ही आदर होता था। ज्येष्ठ भगिनी माता के समान पूज्य थी । भ्रातृभार्या, मातामही, मौसी, धात्री एव कुल की वृद्ध स्त्रिया भी माता के समान आदरणीय थी ।

आज भी यह मान्यता है कि स्त्री तभी पूर्ण होती है जब वह मॉ बनती हैं। जब कभी स्त्री को इस सुख से वचित होना पडा, उस विशेष कार्य के लिए एक विशेष प्रथा का प्रचीन काल मे उपयोग किया जाता था । इसे 'नियो.ग' प्रथा कहते है । नियोग का अर्थ है 'पुत्र विहीन पत्नी अथवा विधवा को पुत्रोत्पत्ति के लिए परिवार के वयोवृद्ध सदस्यो द्वारा किसी पुरुष की सभोग के लिए नियुक्ति।'

इस प्रथा का प्राय. विरोध ही हुआ है इसी कारण हम इस प्रथा का विस्तृत उल्लेख स्वतत्र रुप से नही पाते । नियोग अथवा देवरात सुत्तेत्पत्ति (पति के भाई द्वारा सतानोत्पत्ति) की प्रथा कलियुग मे वर्जित मानी गयी । तथा वृहस्पति ने इसे निषिद्ध कर्म माना है । मेधातिथि ने अपनी टीका मे लिखा है

कि नियोग प्रथा को यद्यपि स्मृतियो मे स्थान दिया गया है किन्तु समाज मे इसे मन्यता प्राप्त नही थी और प्रमुख विचारक इसके विरुद्व थे । विधवा को पुर्नविवाह का अधिकार न था । और इसी लिए नियोग प्रथा को भी हीनदृष्टि से देखा जाने लगा । प्राचीन काल में नियोग प्रथा प्रचलित होने के स्पष्ट कारण नही है । डा0 काणें के अनुसार केवल एक सत्य स्पष्ट है कि वैदिक काल से ही पुत्रोत्पत्ति पर बल दिया गया है । ऐसा लगता है कि पुत्र उत्पत्ति समाज की बडी महत्वपूर्ण आवश्कता थी । इस लिए इस प्रथा को भी मान्यता थी । शनैः--शनैः इस प्रथा का भी लोप होने लगा और पूर्व मध्यकाल तक तो इसका नाम भी नही बचा ।

डा0 चन्द्रबली त्रिपाठी नियोग प्रथा के लुप्तहोने के कारणो पर प्रकाश डालते हुए लिखते है कि नियोग से स्त्रियो को घृणा थी । साथ ही उसके लिए निर्दिष्ट सयमित विधि का पालन असाध्य मालूम पडा । फलस्वरुप मनीषियो ने नियोग प्रथा पर पूर्णत रोक लगा दी । इसका कारण यह है कि सतयुग व त्रेतायुग मे तपोनिष्ठ ज्ञानी पुरुष ऐसा कर सकते थे परन्तु अब कामसक्त पुरुष ऐसा करने असमर्थ है । बृहस्पति स्मृति से स्पष्ट है कि नियोग प्रथा मे कामवासना का निरोध असाध्य है । मनु ने नियोग को पशुधर्म घोषित कर उसे निषिद्ध कर दिया ।

वस्तुतः**'अपुत्रस्य गतिर्नास्ति'** की मान्यता से एक स्त्री की पूर्णता का सिद्धान्त ध्यान मे रखते हुए नियोग प्रथा मान्य थी । उसके उन्मुक्त प्रयोग को वर्जित मान गया किन्तु विभिन्न लोक कथाओ के माध्यम से ऐसा प्रतीत होता है कि राजकुल को आगे बढाने के लिए नियोग प्रथा का प्रयोग करते थे। जैसा की लोककथा है कि गुरु आश्रम में दशरथ को एक फल देते है । इसी प्रकार पाण्डु पुत्रोत्त्पत्ति में असमर्थ थे फिर भी कुन्ती और माद्री पुत्रों को जन्म देती है। सूर्य के पुत्र कर्ण थे और लोक मर्यादा के पालन हेतु कुती कर्ण को नदी मे प्रवाहित कर देती है । इन्ही अमर्यादित व्यवहार को रोकने के हेतु नियोग प्रथा प्रतिबन्धित कर दी गयी । प्राचीन साहित्य मे वर्णित सती प्रथा अर्थात पति के मृत्यु के पश्चात पति की चिता पर जल कर भस्म हो जाना । यह प्रथा डा0 काणे के मतानुसार ई0 से कुछ शताब्दी पूर्व ब्राह्मणवादी भारत मे प्रचलित हुई । किन्तु वैदिक साहित्य मे इस प्रथा के विषय मे कोई निर्देश नही है । सूत्रयुग मे भी यह प्रथा प्रचलित नही थी । ऐतिहासिक युग मे यह प्रथा प्रारम्भ हुई एव पूर्वमध्यकाल के आगमन तक इस प्रथा ने समाज मे अपनी जडे दृढकर ली थी। यर्थाथ मे सती प्रथा मे इस युग में वैधव्य दुख से त्राण पाने का साधन बन चुका था । उच्चकुलो मे धार्मिक भावनाए दृढ होती जा रही थी । परिणाम स्वरुप एक बाल विवाह तथा दूसरा प्रेरित वैधव्य । इन दोनों प्रथाओ ने विधवा वर्ग को जन्म दिया । नियोग प्रथा का समाज में विलोप

होने तथा पतिव्रत्य की उदात्त कल्पना के कारण विधवाओ के लिए सती प्रथा जैसी क्रूर प्रथा का जन्म हुआ । डा0 काणे की यह भी मान्यता है कि जब सती प्रथा ने अपनी जडे जमा ली तब निबन्धकारो तथा टीकाकारो ने भी इस प्रथा का बल देकर सतियो के भविष्य मे मिलने वाले पुरस्कारो की घोषणा कर दी। कुछ स्मृतिकरो ने इस धारणा का प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया कि जो विधवा स्त्री अपनी पति की चिता पर जलकर भस्म हो जाती है वह स्वर्ग मे अनन्त सुख प्राप्त करती है ।

अशिक्षित व अज्ञानी स्त्रियो ने इन स्मृतिकारो के भुलावे में आकर स्वर्ग प्राप्ति के लोभ मे सती होना सहर्ष स्वीकार कर लिया । सतीप्रथा के पीछे एक और कारण यह भी था कि विधवा स्त्री के कुछ आर्थिक अधिकार थे । कम से कम भरण–पोषण का अधिकार तो था ही । पुत्र हीन विधवा का आजीवन भरण–पोषण का भार उठाना अथवा सम्पत्ति मे से भाग देना आवश्यक था । सती होने पर परिवार के लोग उक्त भार से मुक्त हो सकते थे ।

सती होने का प्रथम प्रमाण छठवी शताब्दी का एरण का प्रस्तर स्तम्भ लेख है जिसमे भानु गुप्त के सेनापति गोप राज की पत्नी का पति के साथ सती होने का विवरण है ।

'भक्तानुरक्त च प्रिया च कान्ता भार्यावलग्ना नुगताग्नि रशिम् ।'

राजस्थान मे सती प्रथा अत्यधिक प्रचलित थी । उत्तर–भारत की सती प्रथा की पुष्टि साहित्य से भी होती है । किन्तु ब्राह्मण वर्ग के लिए सती प्रथा समान्य तौर पर वर्जित थी । डा0 अल्तेकर का अनुमान है कि ब्राह्मण कुल की स्त्रियो ने इस प्रथा का अनुगमन एक हजार ई0 के पश्चात किया। पैठिनसि , अगिरा, व्याघ्रपाद आदि धर्म शास्त्रकारों ने ब्राह्मण विधवाओं का सती होना वर्जित माना था । परन्तु मिताक्षरा उनके लिए भी श्रेयस्कर मानते है । गुप्त कालीन स्मृति कारो ने विधवा के लिए दो मार्ग प्रति पादित किये है या तो वह ब्रह्मचारिणी का जीवन व्यतीत करे अथवा

सती हो जाय । शुक्र के अनुसार भी विधवा स्त्री को या तो सती हो जाना चाहिए अन्यथा ब्रह्मचर्य के पालन की शपथ लेनी चाहिए।

बाणभट्ट ने हर्षचरित मे हर्ष की माता रानी यशोमती के सती होने का वर्णन किया है । हर्ष ने जब अपनी माता को अग्नि प्रवेश से रोका तब यशोमती ने तर्क दिया था कि वह विधवाओ के यश से इस संसार में रहना चाहती है शरीर से नही– हर्ष चरित पचम उच्छवास————

'वत्सः विश्रव स्ताना यशसा स्थातु मिंच्छाभिलोके न वपुषा'

अत यह धारणा स्त्रियो मे समा चुकी थी कि सती होने से यश की प्राप्ति होती है । यह धारणा नारी की अज्ञानता की द्योतक थी क्योकि शिक्षा के अभाव मे नारी की स्वय की वैचारिक शक्ति लुप्त हो चुकी थी, और उसकी इस अज्ञानता का पुरुष वर्ग ने लाभ उठाया तथा विधवा नारी का अग्नि मे भस्म हो जाना ही उसका पति व्रत धर्म का प्रतीक बना दिया गया । अलबेरुनी के अनुसार रानी की इच्छा हो अथवा न हो सती होना ही पडता था । गर्भवती विधवास्त्रियो का सती होना अनुचित माना जाता था । तथा अल्पवयस्क पुत्र की माताओ को भी सती होना वर्जित था । ऐसे अनेक उदाहरण है जिनमे अल्पवयस्क शासको का माताओ वे अभिवावक के रुप में देखभाल करने के लिए सती होने का विचार त्याग कर राज्य का शासन किया । साहित्यकारो मे बाणभट्ट ने अपने ग्रंथ कादम्बरी मे नायक चन्द्रापीड को सती प्रथा का विरोधी दिखाया है ।

'चन्द्रापीड महाश्वेता को समझता है कि मरे हुए पति के पीछे प्राण त्याग करना अत्यत निष्फल है तथा अज्ञानियो द्वारा अवलम्बित मार्ग है । भ्रम का व्यवहार है अज्ञान की रीति है तथा अविवेचकता है। अत्यत अनवधनता है, असार बुद्धि की विवेचना है । मूर्खता जनित कर्तव्य की त्रृटि है कि पिता भ्राता, मित्र अथवा पति के मरने के पीछे अपना भी प्राण परित्याग करे , प्राण यदि अपने आप न जाए तो उनका परित्याग करना उचित नही ।'

बौद्धधर्म मे इस प्रथा का विरोध मिलता है । दिवाकर ने राज्यश्री को सती न होने की सलाह दी थी ।

हिन्दू विधवा की स्थिति अत्यत शोचनीय थी उसका भाग्य तो किसी भी स्थिति मे स्पृहणीय नही माना गया । मगल उत्सवो मे उसे उपस्थित होने का अधिकार नही था ।

शुभ अवसरो पर उनका मुख देखना अवशगुन माना जाता था । बाल्यावस्थाओ मे ही विधवा होने वाली अभिशप्त कन्या को आजीवन सन्यासी का जीवन व्यतीत करना पडता था । विधवा के साथ गृह के अन्य सदस्यो का व्यवहार अनुचित होता था । अलबेरुनी ने लिखा है कि विधवा के रुप मे जब तक वह जीवित है उसके साथ बुरा व्यवहार किया जाता है ।

विधवा शब्द का प्रयोग ऋग्वेद में अनेक बार हुआ है किन्तु उसकी सामाजिक स्थिति का बोध नही होता एक स्थान पर वर्णन है कि------ 'मरुत के वेग से जिस प्रकार पृथ्वी कापने लगती है उसी प्रकार पति के बिछोह मे स्त्री दुख अथवा दुर्व्यवहार के भय से कापती है ।[1]

इस वर्णन यह अनुमान लगता है कि विधवा का घर और समाज मे सम्मान घट जाता था । वैसे भी यह स्वाभाविक है कि जब किसी का सम्मान अधिक हो, घर या समाज मे तो इसका अर्थ है समाज या घर मे उसकी उपयोगिता अधिक है । यह स्वभाविक है कि पति की अनुपस्थिति में उस स्त्री का सम्मान बढेगा तो कदापि नही बल्कि कम हो जायेगा। उसकी उपयोगिता के आधार बाद मे उस पर अनेक नियम लाद दिये गये।

'पति की मृत्यु के पश्चात एक वर्ष तक मधु, नमक तथा मांस मदिरा को त्याग कर भूमि पर शयन करना पडता था। तत्तपश्चात यदि वह पुत्रहीन है तो घर के बडो की सलाह तथा अनुमति से देवर से सन्तान उत्पन्न कर सकती थी।[2]

---

[1] ऋग्वेद (1/87/3)

[2] बौधायन धर्मसूत्र (2/2-66-68)

विधवा धर्म के पालन की अनिर्वायता उच्चवर्ग की स्त्रियो के लिए थी । तथा उन्हे विधवा विवाह से भी वचित रखा गया था ।

साहित्य मे 'पुर्नभू' शब्द मिलता है । वशिष्ठ धर्म सूत्र के अनुसार यह शब्द विधवा स्त्री के लिए प्रयोग हुआ है । जिसने पुनर्विवाह किया हो। जो स्त्री अपनी युवावस्था मे पति को छोडकर अन्य व्यक्ति के साथ कुछ समय रह कर पुन पति के पास वापस आ कर रहने लगती थी, उसके पुत्र को 'पुनर्भव' कहा जाता था अथवा ऐसी स्त्री के पुत्र को भी पुनर्भव कहा जाता था जिसने अपने अयोग्य पति को त्याग कर दूसरा विवाह किया हो ।

अथर्ववेद मे उल्लिखित विधवा विवाह से सिद्ध होता है कि वैदिक समाज मे विधवा पुनर्विवाह प्रचलित था किन्तु नियोग प्रथा को पुनर्विवाह की अपेक्षा अधिक मान्यता प्राप्त थी । धर्मशास्त्रकारो के अनुसार------

'पति की मृत्यु हो जाने अथवा मृत्यु की सम्भावना होने पर ही पुनर्विवाह की अनुमति दी थी । ब्राह्मण स्त्री को परदेश गये पति की पॉच वर्ष तक राह देखने के पश्चाात विवाह करने की अनुमति तो दी गयी किन्तु साथ ही यह बन्धन भी लगा दिया कि परिवार मे उपयुक्त व्यक्ति के रहते हुए अन्य बाहरी व्यक्ति से विवाह नही कर सकती थी ।[1]

'न तु खलु कुलीने विद्यमाने परगामिनी स्थात् ।'

गृहसूत्र स्त्री के पुनर्विवाह सदर्भ मे मौन है अत· अनुमानत. उस समय इस प्रथा को मान्यता नही थी । कौटिल्य ने परदेश गये पति के लौठने की राह देखने का समय कुछ माह ही रखा तत्तपश्चात स्त्री का धार्मिक रीति से विवाह करने की अनुमति दे दी ।

वेसन्तर जातक में एक उदाहरण है कि मृत्यु शैय्या पर पडा हुआ पति स्वय अपनी पत्नी को उसकी मृत्यु के पश्चात दूसरा विवाह करने को प्रेरित कर रहा है । ताकि वह अपनी युवावस्थ का उपयोग कर सके ।

---

[1] वशिष्ठ धर्मसूत्र (17/67/)

इस प्रकार हम समाज के सापेक्ष स्त्री की भूमिका मे इस निष्कर्ष पर पहुचते है कि वैदिक और उपनिषद् साहित्य मे नारी का जो रुप प्राप्त होता है , वह नारी जीवन को अधिक उच्च स्थान प्रदान करता है । उस समय नारी आध्यात्मिक क्षेत्र मे समानाधिकार रखती थी । नारी के प्रति उदात्त भावना रखी जाती थी । किन्तु परवर्त्ती साहित्य मे नारी के सम्मान असम्मान, प्रशस्ती और अप्रशस्ती दोनो ही स्वरुपो का उल्लेख मिलता है ।

न्याय व्यवस्था के अन्तर्गत वैदिक युग मे इसका स्पष्ठ उल्लेख नही मिलता किन्तु मृत्युदण्ड तो उन्हे कदापि नही मिलता था । शतपथ ब्राह्मण के अनुसार स्त्रियो को मारना वर्जित था । महाभारत मे कहा गया है कि धर्म के ज्ञाताओ ने स्त्रियों की हत्या की मनाही की है । स्त्रियों के द्वारा किये गये अपराधो की वृद्धि के कारण कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में स्त्रियो के लिये भी शारीरिक दण्ड की घोषणा कर दी । कात्यायन ने कुछ विवेक पूर्ण नियमो के अन्तर्गत यह कहा है कि जो स्त्रिया स्वतत्र नही होती उन्हे व्यभिचार के मामले मे बदि नही बनाया जाता, केवल पुरुषो को ही अपराधी सिद्ध किया जाता है । स्त्रिया अपने स्वामी द्वारा (जिन पर वह आश्रित हो) दण्डित होनी चाहिए किन्तु पति के लौटने पर उसे मुक्त कर देना चाहिए ।

स्मृतिकारो ने पुरुषो की अपेक्षा स्त्रियों पर कम दण्ड की व्यवस्था की थी। कात्यायन के अनुसार एक ही प्रकार के अपराध में पुरुष की अपेक्षा स्त्रियों को आधा दण्ड दिया जाता है । अर्थशास्त्र मे यह भी कहा गया है कि उसको मृत्युदण्ड न देकर उसका कोई अग काट लिया जाता था । वैदिक साहित्य के अनुसार यह तय था । रामायण मे राम के द्वारा ताडका के वध का उदाहरण है किन्तु यह राम के लिए आवश्यक हो गया था क्योकि ताडका यज्ञ में रत तपस्वियों को प्रताडित कर उनकी हत्या करने मे सलग्न थी ।

रामायाण से ही यह ज्ञात होता है कि रावण ने कई बार सीता की हत्या करने पर विचार किया किन्तु स्त्री का वध और अशौर्य पूर्ण कार्य था

अत उसने यह विचार त्याग दिया । महाभारत मे भी अनेक स्थलो पर कहा गया है कि ब्राह्मण, गाय, स्त्री को नही मारना चाहिए ।

'अवध्याः स्त्रिय इत्याहुर्धर्मज्ञा धर्म निश्चये ।

धर्मज्ञानादासा–प्रहुर्न हन्यात्सखहा च मामपि ।।[1]'

वैदिक युग में भी भाई युक्त कन्या को सम्पत्ति मे (रिक्थ) मे से हिस्सा प्राप्त नही होता था ।

'न जामये तान्तो रिक्थमारैक ।[2]'

सभवत सम्पत्ति पर अधिकार की कसौटी पिडदान को माना गया है चूकि पिडदान का अधिकार कन्या को नही था अत उसे सम्पत्ति के अधिकार से भी वचित रखा गया किन्तु ऋग्वेद के अनुसार————————

'जो कन्या पिडदान करती अथवा भाई के अभाव मे अपने पुत्र द्वारा पिडदान करवाती तब वह सम्पत्ति की अधिकारी हो जाती थी

'अभ्रातेव पुंसएति प्रतीची गर्तारुगिव सनये धनानाम् ।'[3]'

'अमाजू' अर्थात अविवाहित पुत्री को सदैव पैतृक सम्पत्ति पर अधिकार रहा है । महाभारत मे भी औरस पुत्र की तुलना मे पुत्री को ऊचा स्थान दिया गया है ।

'दुहितांन्यंत्र जाताद्वि पुत्रादपि विशिष्यते ।[4]'

सूत्रयुग से कन्या प्रति धर्मशास्त्रकारो का रुख कडा हो गया । बौधायन, वशिष्ठ, गौतम सम्पत्ति पर कन्या के अधिकार के सम्बध मे मौन है । आपस्तम्भ ने कन्या को अधिकार तो दिया किन्तु सपिड दमाद, आचार्य व शिष्य के अभाव मे उसे अन्तिम अधिकारी माना ।

'पुत्राभावे सः प्रत्यासन्नः सपिण्डः । तदभावे आचार्यः–

---

[1] महाभारत (1/172/41)

[2] ऋग्वेद (3/31/2)

[3] ऋग्वेद (1/124/7)

[4] महाभारत (13/80/11)

आचार्या भावे अन्तेवासी । हत्वा तदर्शेषु धर्मकृत्येयु ।

वोपयोजयेत् । दुहिता बा ।'[1]

इसी प्रकार चौथी शती ई0पू0 तक पुत्री को पिता की सम्पत्ति का अधिकार समाप्त हो गया था ।

इसके पश्चात कौटिल्य ने कन्या को सम्पत्ति का अधिकार दिलाया उन्होने वैदिक परिपाटी को मान्यता दी किन्तु स्पष्ट रुप से कुछ नही कहा । इसके पश्चात मनु ने भाई के सम्पत्ति का चौथा भाग बहन को देने को कहा । मनु ने पुत्रियो के लिए यौतक धन की व्यवस्था की । यह वो धन था जो वर–वधू को उनके बाधवो द्वारा विवाह के समय दिया जाता था ।

मनु ने कन्या के लिए भाई के हिस्से मे से चतुर्थ अश का विधान तो बना दिया परन्तु कोई निश्चित स्वरुप न होने के कारण वह मान्यता प्राप्त नही कर सका तथा आगे जा कर कन्या का चतुर्थ भाग उसके विवाह खर्च तिरोहित हो गया ।

धनार्जन करने वाली स्त्रियो का एक अलग वर्ग था । इन नारियो के आदर्श तथा मर्यादाए कुलीन नारियो के आदर्श और मर्यादाओ से भिन्न होते थे। इसके अन्तर्गत गणिकाएं देवदासियॉ वारांगनाएॅ सेवावृत्ति में रहने वाली दासियां और अन्य व्यवसाय करने वाली स्त्रियां ।

वेश्यावृत्ति का इतिहास अत्यंत प्राचीन है और ससार के प्राय सभी देशो मे सदैव से प्रचालित रहा है । पचचूडा नामक अफसरा से वेश्याओ की उत्पत्ति मानी गयी है । समाज के कुछ धनी वर्ग के लोग बिना विवाह किए ही किसी स्त्री विशेष से सम्बध स्थापित कर लेते थे । याज्ञवल्कस्मृति मे ऐसी स्त्रियो के दो भागों मे बटा–प्रथम–अवरुद्धा द्धितीय–भुजिष्या । महाभारत मे ये दोनो नाम दासी वर्ग के अर्तगत माने गये है ।

विधवाविवाह तथा नियोग प्रथा के समाप्त हो जाने के पश्चात इस वृत्ति की वृद्धि हुई । पूर्वमध्यकाल में इस ओर लोगो का झुकाव और

---

[1] आपस्तम्ब धर्मसूत्र (2/14/2–4)

अत्यधिक बढ गया। जब विधवाऐ त्याग और तपोमय जीवन नही व्यतीत कर पाती। तब उनपर दुराचारी होने का आरोप लगाकर उन्हे परिवार से बाहर कर दिया जाता । परिवार के इस व्यवहार के विद्रोह स्वरुप वे वेश्यावृत्ति अपनाने को बाध्य हो जाती । (दशकुमार चरित, उत्तर पीठिका–द्विती उच्चवास)

साधरणत सौन्दर्य यौवन कला कौशल द्वारा धनार्जन करने वाली स्त्रिया वेश्या कहलाताी थी और इनका व्यसाय स्वतत्र और परम्परागत होता था। वेश्या की पुत्री को इच्छा न होते हुए भी वेश्यावृत्ति अपनानी पडती थी ।

अलबेरुनी के अनुसार इस वृत्ति को राजाओ ने प्रोत्साहन दिया था । 'यदि न हो तो केई भी पुरोहित अपने मूर्ति मन्दिरो मे उन स्त्रिया को सहन न करे जो गाती नाचती और क्रीडा करती है । राज केवल आर्थिक कारण से अपने नगरो के आकर्षण और अपनी पूजा के लिए प्रमोद का प्रलोभन बनाते है।

गणिकाओ के सन्दर्भ मे समाज मे दो विराधी धाराएं थी । उन्हे समाज मे सदैव हेय दृष्टि से नही देखा जाता था । वे समस्त कलाओ मे निपुण होती थी उन्हे जन ससद मे स्थान प्राप्त था । नगरो और दरबारो का आर्कषण का क्रेन्द बनती थी । समाज मे अपरिहार्य न माने जाने का मुख्य कारण उनका सौन्दर्य तथा दाक्षिण्य था । कभी–कभी तो समाज मे उन्हे कुव्यक्तियो के समकक्ष स्थान प्राप्त हो जाया करता था । (हर्षचरित चतुर्थ उच्द्वास पृष्ठ 214)

'समान शिष्टा शिष्ट जनो दुर्ज्ञैयमन्तामत्त प्रविभागस्तुल्य कुलयुवति वेश्यालय विलासः ।'

अनेक ऐसी गणिकाओ का इतिहास मे उल्लेख मिलता है जो अपने उच्च चरित्र के कारण समाज में प्रतिष्ठित थी । दशकुमार चरित में वसत सेना उच्च चरित्र की गणिका थी । रागमजरी ने वेश्या जनोचित धर्म (धन ग्रहण करना) का परित्याग कर समाज में सम्मान प्राप्त किया था ।

रागमजरी कहती है । 'मै गुणशुल्का हूँ, धन शुल्का नही मेरा मूल्य गुण होगा धर्म मे नही बिकूगी और (मेरे साथ) विवाह किए बिना कोई मेरे यौवन का उपभोग नही कर सकता ।'

इतना विशिष्टगुण होते हुए भी उनके प्रति सामान्य भावना उचित नही थी और समाज मे उनसे स्वाभाविक व्यवहार की उम्मीद नही की जाती थी । **'अज्ञातनाम् वर्णैष्वात्मापि मयार्प्यते धनांशेन ।**

तस्याअपि सद्भावं मृगयन्ते मोक्षासंकल्पाः ।।'

भारतीय समाज के सर्वाधिक प्रभावित दो जातीय महाकाव्य और रामायण और महाभारत प्रमुख है जिन्हे हम धार्मिक और पवित्र महाकाव्य मानते है इनसे प्राचीन सामाजिक व्यवस्था पर भी प्रकाश पडता है ।

· रामायण के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि उत्तर भारत मे आर्य सभ्यता पूर्ण विकसित थी । धार्मिक एव सामाजिक एव नियम दृढ हो चुके थे । रामायण मे नारी का जीवन विविध परिस्थितियो और सम्बधो के मध्य चित्रित हुआ है । कन्या का जन्म परिवार की चिता का कारण बन गया क्योकि उसके विवाह के उत्तरदायित्व का अनुभव उसी समय से किया जाने लगता था । कन्या का लालन पालन तथा सम्यक शिक्षा की पूर्ण व्यवस्था होती थी तथा विवाह भी युवावस्था मे होते थे । कन्याओ का विवाह पिता की इच्छानुसार होते थे । स्वतंत्र रुप से वर का चयन नही था । अतर्जातीय विवाह अस्तित्व मे थे । वधू को स्नेह एव सम्मान मिलता था और वह पति के साथ धार्मिक अनुष्ठानो मे भाग लेती थी । वह पति से भरण पोषण और सरक्षण प्राप्त करने की अधिकारिणी थी।

स्त्री की यौन पवित्रता और पतिव्रत्य पर अत्यधिक बल दिया जाता था पति को पत्नी का स्वामी एव देवता माना जाता था । पति की सेवा पत्नी के लिए अत्यत आवश्यक और महत्व पूर्ण थी । रामायण मे पतिहीन स्त्री के जीवन को तंत्रीहीन वीणा एव चक्रहीन रथ के समान निरर्थक बतलाया गया है ।

'ना तत्री वाद्यते ना चक्रो विद्यते रथः नापति· सुखम् ।'[1]

---

[1] रामायण (2/39/29)

बहुपत्नी प्रथा थी । स्त्री पति की सम्पत्ति के समान मानी गयी कभी–कभी उसके साथ उपेक्षा एव तिरस्कार का व्यवहार किया जाता था । वनवास के समय राम ने कैकेयी से कहा था कि पिता की आज्ञा से भरत को राज्य ही नही अपनी पत्नी सीता भी दे सकता हूँ । युद्ध मे लक्ष्मण के मूर्छित होने पर उन्होने भाई के सम्मुख स्त्री को तुच्छ बताया एव रावण वध के पश्चात सीता के चरित्र पर सदेह किया और उसे तिरस्कृत किया एव लोकापवाद के कारण सीता का परित्याग कर दिया । इन सभी अधिकारो का उपयोग राम ने पुरुष आदर्श निभाने के लिए किया। तथा सीता के प्रति तुच्छता एव तिरस्कार को दर्शाने वाले कथन राम के जीवन के अत्यत दुर्वल क्षणो को अभिव्यक्त करते है । कुछ प्रसगो के आधार पर यह निष्कर्ष नही निकालना चाहिए कि स्त्रियो को समाज मे सम्मान नही मिलता था। सामान्य परिस्थितिओ मे स्त्री का स्थान सम्मान एव महत्वपूंर्ण था । कौशल्या, सुमित्रा, सीता, अनुसूया आदि आज भी आदर्श मानी जाती है । रामायण मे चित्रित समाज मे नारी जीवन के मूल्य स्थिर हो चुके थे। एव वे मूल्य इतने महान थे कि आने वाले युगो के लिए आदर्श बन गये ।

महाभारत मे स्त्री के सामाजिक पतन के सकेत मिलते है । स्त्रियो की अवस्था मे भी तद्नुरुप परिवर्तन हुए । महाभारत मे चित्रित समाज मे कन्या का जन्म दुख कारण माना जाता था । किन्तु पुत्र की ही भाति कन्या के जातक कर्म इत्यादि सस्कार कर्म किये जाते थे । स्त्री शिक्षा का ह्मस होने लगा था । किन्तु ऐसा होने पर भी शकुन्तला, द्रौपदी, सावित्री आदि अनेक सुशिक्षित एव सुसस्कृत स्त्रियो की चर्चा हुई है । कन्याओ का विवाह अभिभावक की स्वीकृति से युवावस्था मे सम्पन्न होते थे । अतर्जातीय एव अनुलोम विवाह होते थे । आर्येत्तर कन्याओ से आर्यो के विवाह सपन्न होते थे ।

भीम ने हिडिम्बा नामक राक्षस–कन्या से विवाह किया था । महाभारत मे राक्षस विवाहो के उल्लेख भी मिलते है । इन्हे क्षात्र विवाह भी कहा गया है । अर्जुन ने सुभद्रा से और कृष्ण ने रुक्मिणी का अपहरण कर विवाह किया था । किन्तु ये अपहरण कन्याओ की स्वीकृति से हुए थे । स्त्री का परिवार मे बडा

महत्व था । द्रौपदी के प्रति युधिष्ठिर का कथन पत्नी के महत्व और उसके प्रति दृष्टि कोण का अत्यत सुन्दर उदाहरण है ।

'इयं हि नः प्रिया भार्या प्राणेभ्येपि गरीयसी ।

मातेव परिपाल्यश्च पूज्या जेष्ठेव च स्वसा ।।'[1]

महाभारत मे पत्नी को मनुष्य का मित्र माना गया है । यह कहा गया है कि जो हमेशा पुत्र मुख दर्शन की भाति पति मुख दर्शन मे आनन्दित होती है , वही साध्वी है जो पति के कठोर वचन सुन कर भी प्रसन्नमुख और सद्व्यवहार कर सके वही वास्तव मे पतिव्रता होती है । अब तक समाज मे सती प्रथा का अविर्भाव हो चुका था, स्त्री के सती होने पर उसकी प्रशसा होती थी ।

किन्तु उस समय के सामाजिकह्रास के कारण स्त्री की स्थिति मे पतन देखने को मिलता है । सामाजिक नियम शिथिल हो रहे थे नैतिक पतन हो रहा था । 'क्योकि महाभारत काल मे जितने अपहरण और दुराचार की घटनाओ का उल्लेख है उतना पूर्ववर्ती साहित्य मे नही मिलता । स्त्री को दुर्बल, हीन, प्रदर्शित करने वाले कथन अधिक मिलते है । नारद, पचचूडा सवाद मे स्त्री को सम्पूर्ण दोषो से परिपूर्ण बताया गया है । भीष्म पितामह के अनुसार ———————

'जब देवताओ को धर्मात्मा से स्वर्ग भर जाने की आशंका सताने लगी तभी ब्रह्मा स्त्री की सृष्टि की जिसमें पुरुषों को पतित बनाया जा सके और धर्मात्माओ की संख्या अधिक न बढे ।'[2]

गीता मे ही स्त्रियो शुद्रो वैश्यों को पापयोनी का बताया गया है । युधिष्ठिर का द्रौपदी को जुए मे हार जाना पति के सर्वाधिकार को प्रदर्शित करता है । तथा प्रतीत होता है कि पत्नी के प्रति सपत्ति जैसी भावना थी । सम्पूर्ण सस्कृत साहित्य का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि हिन्दू समाज मे

---

1 महाभारत विराटपर्व (3/17)

2 गीता (9/32)

सुसस्कृत और सुशिक्षित वर्ग स्त्रियो के समस्त गुणो से भली भाति परिचित थे। उनकी चारित्रिक शुद्धता उनका सबसे बडा गुण था । स्त्रियो की निन्दा प्राय· उन्ही लोगो द्वारा की गयी है। जो स्त्री से दूर रह कर सन्यास साधना मे अपना चित्त रमाना चाहते थे । वे अपनी आत्म सतुष्टि के लिए स्त्रियो की निदा कर उनसे दूर होना चाहते थे । या जो किसी कारण थे स्त्रियो से असतुष्ट और क्रुद्ध थे ।

साहित्य मानव समाज की भावानात्मक स्थिति और गतिशील चेतना की अभिव्यक्ति है । उसके प्रेरक तत्वो के रुप मे मनुष्य का परिवेश बहुत महत्वपूर्ण है। किसी भी साहित्य से हमे उस समाज के दर्शन का परिचय भली भाति हो सकता है। अत इसी कारण साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है क्योकि मुखमण्डल सुन्दर हो या कुरुप दर्पण बिना कोई तथ्य छुपाये उसे यथावत मनुष्य को दिखा देता है वैसे ही साहित्य हमारे इतिहास और तत्तकालीन समाज की अच्छी हो या बुरी हर स्थिति को हमारे समक्ष ला कर रख देता है ।

(ख) बौद्ध एवं जैन काल में

बौद्ध साहित्य :– से केवल बुद्ध के जीवन की ही झलक नही मिलती बल्कि उसमे चित्रित तत्तकालीन समाज मे स्त्रियो की अवस्था पर सम्यक् प्रकाश पडता है। बौद्ध दर्शन निवृत्ति मार्गी है वह कामनाओ के त्याग की अपेक्षा रखता है किन्तु बौद्ध धर्म मे स्त्रियो को भी ज्ञान प्राप्ति, साधना एव मुक्ति की अधिकारिणी माना गया है। इससे स्त्री शिक्षा को बल मिला और स्त्रियो के लिए व्यक्तित्व निर्माण का मार्ग प्रशस्त हुआ । बौद्ध धर्मानुसार विवाह एक प्रकार का बधन है इसी लिये अनेक कन्याए अविवाहित रह कर बौद्ध धर्म सघ मे सम्मिलित हो गई । अनेक स्त्रियो ने विपुल–धन व परिवारिक जीवन के सुखो को त्याग कर बौद्ध धर्म की दीक्षा ली। कुछ स्त्रियो ने परिवारिक जीवन की कठिनाओ एव कलह से बचने के लिए बौद्ध धर्म की शरण ली । थेरी गाथा के अनुसार लगभग सत्तर विदुषी बौद्ध भिक्षुणियो के गीत सग्रहित है । ये भिक्षुणियो आध्यात्मिक दृष्टि से किसी भी बौद्ध विद्वान से निम्न न थी । फिर भी क्या कारण थे कि भिक्षुणियो का स्थान भिक्षुओ से नीचा था। सघ के नियमानुसार सौ वर्ष की भिक्षुणी को भी किसी भिक्षु के आने पर उठ कर खडा हो जाना चाहिए चाहे वह भिक्षु बिल्कुल नया ही क्यो न हो भिक्षुणियों, भिक्षुओ की सभाओ मे उपदेश नही दे सकती थी ।

जातको मे विदुषी, गृहकार्य कुशल एव शिक्षिता स्त्रियो की चर्चा हुई है इनसे यह प्रतीत होता होता है कि यद्यपि अनेक बौद्ध भिक्षुणियॉ अविवाहित रहती थी तथापि जन साधारण की दृष्टि मे विवाह जीवन का आवश्यक अग था। उन दिनो धर्म एव दर्शन के अतिरिक्त ललित कलाए भी शिक्षा का महत्व पूर्ण अग थी । स्त्रियॉ कृषि कर्म करती थी । सूत कात कर कपडा बुनती थी। स्त्रियो के पुर्न विवाह की चर्चा मिलती थी । सती प्रथा की कोई चर्चा नही है । समाज मे गणिका वर्ग की स्त्रियॉ थी जो कि बौद्धिक एव सास्कृतिक दृष्टि उत्कृष्ट स्तर की थी । मगध राज्य की राजनर्त की आम्रपाली के द्वारा बुद्ध को निमत्रण भेजना और बुद्ध का आतिथ्य स्वीकार करना समाजिक रुठिगत विचारो

से परे है । उनके धर्म का मार्ग सभी वर्गो के स्त्रियो व पुरुषो के लिए खुला था।

बौद्ध साहित्य मे स्त्रियो की निन्दा प्राय की गई । निन्दा प्राय. स्त्रियो की कामुक भावना के कारण है ।

जैनधर्म के प्रमुख तीर्थकर महावीर स्वामी गौतम बुद्ध के समकालीन थे । इसी लिए बौद्ध एव जैन साहित्य मे चित्रित समाज सामान्यत एक ही है इसी लिए स्त्रियो की समाजिक अवस्था भी वही है । दोनो ही धर्मो मे त्याग एव तपस्या के माध्यम से मोक्ष प्राप्ती करने की बात है । बौद्ध धर्म मध्यम मार्ग की शिक्षा देता है किन्तु जैन धर्म निवृत्ति की शिक्षा देता है इसी कारण विपरीत लिग के व्यक्ति से किसी भी प्रकार का ससर्ग रखना निषिद्ध है । जैन मुनियों का स्त्रियो से वार्तालाप करना उनकी ओर देखना ओर मन मे उनका चिन्तन करना मना है । इसी प्रकार जैन तपस्विनीयो का पुरुषो से बातचीत करना, देखना, चिन्तन करना सभी कुछ वर्जित है । महावी स्वामी ने पुरुषो एव स्त्रियो दोनो को अपने धार्मिक संघो मे स्थान दिया।

कौशाम्बी के राजा सहस्रानीति की पुत्री जयन्ती एव चम्पानदेश की पुत्री चन्दना ने अपने उच्च बैद्धिक स्तर का परिचय दिया । किन्तु जैन धर्म के श्वेताम्बर एव दिगम्बर मे विभाजित हो जाने पर श्वेताम्बर तो स्त्रियो को मोक्ष की प्राप्ती का अधिकारी मानते थे किन्तु दिगम्बर जैनो के अनुसार स्त्रिया पुरुष के रुप मे जन्म लेकर ही मोक्ष प्राप्त करने वाली कुछ अविवाहित स्त्रियो के साधना के कठोर मार्ग से दिग्भ्रमित हो जाने से सदाचार की भावना को आधात लगता था अत पथ भ्रष्टता की सभावना को आधात लगता था। अत पथ भ्रष्टता की सभावना को दूर करने के लिए स्त्रियों की मोक्ष प्राप्ति के त्याग मार्ग को निषिद्व कर उनके लिए विवाह को अनिवार्य कर दिया गया । इन्ही कारणो से स्त्रियो के लिए चौथी शती के बाद से हिन्दू धर्म से सन्यासिनी स्त्रिया नही दिखाई देती ।

(ग) बौद्धोत्तर काल में :–

भारतीय इतिहास का प्रारम्भ प्राय चन्द्रगुप्त मौर्य के काल से माना जाता है क्योकि सिकन्दर के आक्रमण के समय उसके साथ जो इतिहासकार भारत आए उन्होने जो तथ्य अपनी भाषा मे प्रस्तुत किए उन्ही से प्रमाणिक भारतीय इतिहास का प्रारम्भ माना गया है । बुद्ध से अशोक तक का समय बौद्ध धर्म का उत्कर्ष काल है । गुप्तधर्म के अभ्युदय से पुन वैदिक विचार धारा प्रभावी होती है । यह सूत्र साहित्य की सामाजिक परम्परा का द्योतन करता है । साथ ही स्मृति साहित्य (मुख्यत मनुस्मृति) के नियमो पर आधारित है । चन्द्रगुप्त के समय की सामाजिक, आर्थिक व शासन सम्बधी जानकारियो को कौटिल्य के अर्थशास्त्र मे पाया जा सकता है । उन दिनो स्त्रियॉ जीवकोपार्जन के लिए कारीगरी एव कृषि से सम्बन्धित पेशे अपनाया करती थी । कुछ स्त्रिया राजमहलो मे परिचारिका का कार्य भी करती थी । चन्द्रगुप्त की शोभायात्रा के समय उनके चारो ओर ग्रीक युवतिया अगरक्षको की भाति चलती थी । वैवाहिक जीवन मे स्त्रियो को विधिक अधिकार प्राप्त थे। आवश्यकता पडने पर वह अपने अधिकारो की रक्षा के लिए न्यायालय का सहारा भी ले सकती थी ।

पुर्न विवाह का प्रचलन था । स्त्रियो व पुरुषो के वैवाहिक अधिकारो के प्रति कौटिल्य का दृष्टिकोण समानतापूर्ण था । किन्तु मनु के काल तक आते–आते स्त्री व पुरुष के मध्यविभाजक रेखा खिच गई थी ।

'कालिदास का भारत' के रचयिता भगवतशरण उपाध्याय ने कालिदास का काल 4 शती0 ईसवी सन् ने 5वीशती के मध्य माना है । उनके साहित्य से यह प्रकट होता है कि उस युग का जीवन आमोद प्रमोद से पूर्ण होता था । गधर्व विवाहो का अभाव न था । पत्नी पर पति का सम्पूर्ण अधिकार था । परिवार मे स्त्री को आदर व सम्मान प्राप्त था । परदा प्रथा न थी किन्तु स्त्रिया स्वय को पुरुष समाज से दूर रखती थी । प्राय एक विवाह होता था किन्तु राजाओ सामन्तो व धनी वर्ग के लोग वहु पत्नीया रखते थे । स्त्रिया सुन्दर वस्त्र आभूषण धारण करती थी । पुरुषो के अतिरिक्त स्त्रिया भी मदिरापान करती थी।

सस्कृत नाटको मे पुरुषो का सस्कृत व स्त्रियो का प्राकृत बोलना स्त्रियो की अशिक्षा का प्रमाण है । सती प्रथा अब तक लोकप्रिय हो गई थी । स्त्रियो को आर्थिक अधिकार नही प्राप्त थे । वात्स्यायन भास, कालिदास और शूद्रक इन सभी के साहित्य मे सती की चर्चा हुई है । हर्षवर्धन की मॉ सती हो गई थी बहन राज्य श्री को स्वय हर्ष ने बचाया था । हर्षवर्धन के समय हवेनसाग नामक चीनश्री चात्री भारत आया उसके वर्णन के अनुसार इस समय तक जाति प्रथा दृढ हो चुकी थी बाल विवाह का प्रचलन था, विधवा विवाह नहीं होते थे ।

हर्षवर्धन के पश्चात् उत्तर भारत अनेक भागो मे विभक्त हो गया । समाज मे अनेक जातिया व उप जातियो का गठन हुआ। सामाजिक नियम एकदम रुढ हो गये । यह स्थिति सस्कृति व समाज के स्वास्थ्य के लिए अच्छी न थी । स्त्रियो के लिए सामाजिक नियमो की जड़ता अधिक नुकसान दायक सिद्ध हुई । आठवी शती तक अनुलोम विवाह होते थे। उसके पश्चात ऐसे विवाहो की निन्दा होने लग गई । लगभग 8 वीं व 9वीं शती तक बलात्कार व अपहरण किए जाने पर स्त्रियो को शुद्ध करके परिवार मे सम्मिलित कर लिया जाता था । दसवी शती के पश्चात् अपहृत स्त्रियो के प्रति समाज का दृष्टिकोण कठोर हो गया और समाज के द्वार उनके लिए बद हो गये । हिन्दू समाज की इस आत्मधाती नीति को देख कर अलबेरुनी ने आश्चर्य व्यक्त किया है । दसवी शती के पश्चात् से बाल विधवाओ के विवाह का प्रचलन भी उठ गया सती प्रथा का प्रचलन बढा । सती होने को सामाजिक श्रेष्ठता का प्रमाण माना जाने लगा । पहले यह प्रथा केवल क्षत्रियो मे ही सीमित थी किन्तु इस युग मे ब्राह्मण व अन्य वर्णो की स्त्रियो भी सती होने लग गई । केवल सम्पत्ति के क्षेत्र मे स्त्रियो का अधिकार बढता गया । स्त्री धन की सीमा बढती गई ओर सातवीं शती के विज्ञानेश्वर ने उत्तराधिकार को भी स्त्री धन मे सम्मिलित कर लिया । इसके पूर्व उत्तराधिकार स्त्री को नहीं मिलता था । अब बाल विवाह का प्रचलन बढ़ा तथा नियोग प्रथा एवं विधवा विवाह की प्रथाए मिट गई परिणामत समाज मे बाल विधवाओ की सख्या मे तेजी से वृद्धि हुई । इन बाल विधवाओ मे अनेक पुत्र हीन बाल विधवाएं थी । जिनके लिए अब जीवन निर्वाह की समस्याओ पर

उदारता पूर्वक विचार करके विज्ञानेश्वर जैसे स्मृतिकारो ने ऐसी स्त्रियो की समस्या पर उदारता पूर्वक विचार किया जिससे सामाजिक अवनति के उस युग मे स्त्री के जीवन यापन का यह एक सबल बना। विधवा पति की सम्पति का उपभोग कर सकती थी उसे बेच नही सकती थी । सातवी शती के बाद शासन प्राय राजपूतो के हाथ मे रहा यह युग अतिम हिन्दू सम्राट पृथ्वी राज चौहान के समय तक चला । राजपूतो मे वीरता के साथ–साथ कलाओ के प्रति भी प्रेम था। राजकुमारियो को ललित कलाओ के अतिरिक्त शस्त्र सचालन की भी शिक्षा दी जाती थी । राजपूत स्त्रियो के आदर्श अत्यत उच्च थे । उनमे पतिव्रत्य, सतीत्व तथा देश प्रेम की भावना कूट–कूट कर भरी हुई थी । विपत्ति के समय वे अद्भर साहस, त्याग और बलिदान को तैयार हो जाती थी । जौहर व्रत इसका ज्वलत उदाहरण है। जो कि राजस्थान के इतिहास मे कई बार देखा गया ।

राजपूत अपनी आन, बान, शान के लिए मर मिटते थे । वे स्त्रियो के सम्मान के लिए मर मिटना अपना आदर्श मानते थे । उनमे मुस्लिम युग की तरह परदा प्रथा न थी किन्तु बलिका वध की क्रूर प्रथा थी । ये विलासी प्रवृत्ति के होने के कारण बहुविवाह करते थे । सुन्दर कन्या की प्राप्ति के लिए युद्ध तक कर डालते थे । इस समाज मे साधारण स्त्रिया पिछडी हुई थी । उच्चवर्ग की स्त्रियो को कलाओ और विविध विधाओ की शिक्षा दी जाती थी। मडनमिश्र की पत्नी का शकराचार्य से शास्त्रार्थ करना। राजशेखर की विदुषी पत्नी अवन्तिसुन्दरी सस्कृत की विद्वान थी । इन्दुलेखा, मरुला, विज्जिका मदालसा लक्ष्मी आदि श्रेष्ठ श्रेणी की कवियत्रिया इसी युग मे हुई है । कश्मीर की सुगधा एव दिद्दा नामक रानियो ने अपने पुत्रो के शैशव काल मे सफलता पूर्वक शासन किया । दक्षिण भारत की भी अनेक रानियो ने आवश्यकता पडने पर शासन कार्य सभाला इस युग मे जो धर्म प्रचलित थे उनमे वैष्णव, शैव और बौद्ध प्रमुख है । बौद्ध धर्म का पतन गुप्तयुग से ही प्रारम्भ हो गया था । फिर भी यह धर्म जन सामान्य मे काफी प्रचलित था । इन धर्मो की जो निवृत्ति मूलक भावना थी

उसमे काम–दमन भावना के प्रतिक्रिया के रुप मे परवर्ती साधको मे काम का अति विकृत रुप देखने को मिला ।

तीसरी शताब्दी के लगभग बौद्ध धर्म मे गुह्म साधना का प्रवेश हुआ । इसमे यह माना गया कि निवृत्ति का मार्ग काम दमन की भावना मे ससारिक सुखो को त्याग कर नही अपितु कामतृप्ति को साधना मे प्रवृत्त होना चाहिए। तभी से साधक स्त्री सेवा को अपनी साधना का प्रमुख अग मानने लगे । कालान्तर मे बौद्धो की वज्रयान शाखा के अर्तगत महासुखवाद का प्रवर्तन हुआ और स्त्रीपुरुषो के युगबद्ध चित्र अनेक अश्लील मुद्राओ मे बनने लग गये । ह्वेनसाग के भारत आने के बाद सातवी शती ई0 के यात्रा विवरण के अनुसार भारत मे बौद्ध भिक्षु किकर्तव्यविमूढ, पतित और आलसी हो गये थे । हर्षवर्धन के परवर्तीकाल मे बौद्ध साधना से दुराचार एव विकृति का आधिक्य हो गया । इन विकृत साधको के चक्कर मे प्रजा–काम व्यसनी मद्यप और मूढ विश्वासी बन गई । शैवधर्म की भी अनेक शाखाऐ हो गयी । पाशुपत, कापालिक, लिगायत, वीर शैव आदि ये भी गुह्य साधना की ओर प्रवृत्त हुए और इनके साधक अनेक निन्द्य कार्य करने लगे । कोणार्क, भुवनेश्वर, खजुराहो के मदिरो मे नर नारी की अश्लील सम्भोग मुद्राओ की मूर्तिया उस युग की धार्मिक साधना मे यौन अतिचार के प्रवेश की प्रमाण है । इन धार्मिक सम्प्रदायो के कलुषित कार्यो ने स्त्री को साधना का सोपान न बनाया बल्कि आगे आने वाले समय की स्त्री की पृष्ठभूमि को नष्टभ्रष्ट कर दिया । साहित्य मे नारी सम्बंधी अनुरागात्मक अथवा विरागात्मक या घृणात्मक भावना तत्तकालीन राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक परिस्थितियो के आधार पर बनती है । और किसी सभ्यता के मानदण्ड इन्ही पर आधारित होते है । डा0 शैल कुमारी के शब्दो मे 'जिस काल मे समाज धर्म (आध्यात्मिकता) की ओर अधिक झुक जाता है, उस काल मे वह नारी को घृणा की दृष्टि से देखने लग जाता है , क्योकि लगभग सभी धर्मो ने नारी को काम का प्रतीक होने के कारण आध्यात्मिक मार्ग की बाधा माना है ।

सम्भवत इसी कारण मुस्लिम पूर्व युग मे भारत मे अनेक धार्मिक सम्प्रदायो मे काम–दमन के साथ ही साथ नारी निदा की भावना का विस्तार

हुआ जो आगे चलकर तुर्क अफगान और मुस्लिम काल मे निरन्तर बढता ही गया । उस काल मे जो स्त्री का समाजिक पतन हुआ उसे समझने के लिए हमे इस्लाम धर्म और समाज दोनो का अध्ययन करना होगा । क्योकि इस्लामी जीवन मूल्यो ने भारतीय समाज को बहुत हद तक प्रभावित किया । अरब का समाज हजरत मोहम्मद साहब के जन्म के पूर्व अत्यत बर्बर और अव्यवस्थित था। लोग कबीलो मे बटे हुए थे और ये कबीले खानाबदोशो की भाति शिकार कर अपनी आजीविका चलाते थे । डा0 ताराचन्द्र की पुस्तक इनफ्लूएस ऑव इस्लाम ऑन इन्डियन कल्चर के पृष्ठ– सख्या 49 के अनुसार ' समाज मे विवेक, सदाचार एव नैतिकता का महत्व नही था । उनमे वेश्यगमन का प्रचलन भी अधिक था। विवाह ओर यौन सबधो के विषय मे कोई सुनिश्चित नियम नही थे । बहुविवाह की प्रथा थी और स्त्रियो का समाज मे कोई आदर या अधिकार नही था । हजरत मुहम्मद साहब ने अपने क्रान्तिकारी व्यक्तित्व से उस समाज मे अनेक परिवर्तन किए जिनके फलस्वरुप स्त्रियो की अवस्था मे भी सुधार हुआ– विवाह के समय निर्दिष्ट धन राशि निश्चित की जाने लगी, जिससे स्त्री को तलाक देते समय पुरुष उसे देने को बाध्य होता है था । विधवा और परित्यक्ता स्त्रियों का पुनर्विवाह हो सकता था । और स्त्री अपने पति की आज्ञा से अपने विवाह सम्बध को समाप्त कर सकती थी । इन सुधारो से तत्तकालीन मुस्लिम समाज की अव्यवस्था तो कुछ कम अवश्य हुई किन्तु व्यापक दृष्टि से स्त्रियो को समाज मे उचित स्थान प्राप्त न हुआ । इस्लामी समाज मे अपने प्रारम्भिक वर्षो से ही परदा प्रथा के द्वारा पुरुष समाज से अलग स्त्रियो को अलग रखने का प्रावधान था । तात्पर्य यह था कि स्त्रिया घरो के अदर ही रहे और पुरुष शासन और उद्यम के द्वारा अर्थोपार्जन करते रहे और इसी कारण स्त्रियो का स्थान सदैव पुरुषो से हीन माना गया । हजरत साहब ने स्त्रियों को उत्तराधिकार व सम्पत्ति मे अधिकार अवश्य दिया किन्तु उन्होने स्त्रियो का अभिभावक पुरुषो को माना । स्त्रियो पर पुरुषो के विशेषाधिकार की भावना सदैव रही तथा स्त्रियो की स्वतत्रता को सदैव शका की दृष्टि से देखा गया ।

कुरान बहुपत्नीत्व की अनुमति देता है । एक समय मे चार पत्नियो को रखना वैद्य है फिर भी दासियो के लिए कोई सीमा रेखा नही रही । पुरुष स्त्री को बिना कारण निर्दिष्ट किए तलाक दे सकता है । अभिजात वर्ग की स्त्रियो पर निगरानी रखने के लिए हिजडो को रखा जाने लगा । इस्लामी समाज मे स्त्री शिक्षा को समर्थन नही मिला उन्हे केवल अपने निकट सम्बधियो से साक्षात्कार की अनुमति थी । इस्लाम के सबसे महत्वपूर्ण दर्शनाचार्य अल गजाली ने परदा प्रथा एव स्त्रियो की दासता का कठोर समर्थन किया है । इस्लाम धर्म एव समाज मे नारी के स्थान का अध्ययन किया जाय तो हम यह पाते हे कि वह हिन्दू समाज की तुलना मे कही अधिक निम्न था ।

भारतीय समाज मे मुसलमानो से पूर्व बहुविवाह प्रथा थी किन्तु इसका प्रचलन राजवशो अथवा उच्चस्तर के लोगो तक ही मान्य था । मुसलमानो के प्रभाव से इस प्रथा का जन सामान्य मे विस्तार हुआ । सामाजिक समारोहो मे स्त्री वर्जित हो गई । घर की चहर दिवारे उसके कर्म क्षेत्र की सीमा रेखा बन गयी। विधवा विवाह प्रथा पूर्णत समाप्त हो गई और सती प्रथा जो स्त्री की इच्छा पर निर्भर थी । अब स्त्री को सती होने के लिए बाध्य किया जाने लगा। यह प्रथा पहले क्षत्रियो में ही प्रचलित थी अब ब्राह्मणो ने भी आत्म सम्मान की रक्षा की भावना से इस प्रथा को अपना लिया । कालान्तर मे यह प्रथा इतनी बढ गई कि यदि कोई स्त्री सती होना न चाहती तो उसे हेय दृष्टि से देखा जाता और एक प्रकार से बर्बरता पूर्वक उसे अग्नि मे गाजे बाजे के साथ झोक दिया जाता ।

मुसलमानो मे सम्बध विच्छेद पति की सम्पत्ति पर पत्नी का अधिकार तथा विधवा विवाह आदि प्रथाए प्रचलित थी। परन्तु ब्राह्मण आदर्शो से निर्देशित भारतीय समाज विदेशियो की इस प्रथा को अपना सकने मे असमर्थ रहा। स्त्रियों के लिए अपने प्राचीन बधनो को तो कायम रखा ही साथ ही मुसलमानो के समाज से उधार लाकर अन्य बधन और बढा लिये ।

हिन्दू समाज मे रुढिवादिता एव सकीर्ण भावना का विकास आत्म रक्षा के उद्देश्य से क्रिया गया था किन्तु कालान्तर मे यह भावना परिपाटी के रुप मे

चलकर सकीर्ण से सकीर्णतर होती चली गई । बौद्धधर्म के विरुद्ध शकराचार्य का अभ्युदय 8वी शती मे हो चुका था । उन्होने ज्ञान के बल पर उच्चता को पुनर्स्थापित करने की चेष्टा की । किन्तु जन–सम्पर्क की न्यूनता के कारण जन समान्य तक उनका मतव्य न पहुच सका । उनके उपरान्त 12वी शताब्दी मे मुगलो के आगमन के पश्चात रामानुज ने अपने भक्ति आन्दोलन के माध्यम से प्राणी मात्र मे स्नेह व समानता का सन्देश दिया । भक्ति आन्दोलन की यह लहर 12वी शती से प्रारम्भ होकर 15वी 16वीशती तक देश के कोन–कोने मे व्याप्त हो गई सगुण भक्ति मार्ग लोगो मे जीवन इच्छा का सदेश देने लगा उसी समय माधवाचार्य गुजरात मे वैष्णव धर्म का प्रचार कर रहे थे । पूर्वी भारत मे जयदेव और विद्यापति कृष्णभक्ति मे लीन थे । 15वी शती रामानद रामभक्ति का प्रचार कर रहे थे उत्तर भारत मे स्वामी वल्लभाचार्य कृष्ण भक्ति के महात्म्य मे लगे थे । भक्ति के इस युग मे रामानुज, निम्बार्कमुनि, माधवाचार्य चैतन्य जैसे महात्मा थे तो दूसरी ओर रामानद, कबीर नानक, तुलसी, सूर मीरा नरसिह, नामदेव तुकाराम जैसे सतो और भक्तो ने भक्ति की इस धारा को जीवन शाक्ति से जोडे रखा । ये महात्मा भिन्न–भिन्न वर्गो एव जातियो से सम्बन्धित थे अत जाति एव लिग की समानता का स्वर मुखरित हुआ । अत स्त्री को फिर एक बार विचरण के लिए उन्मुक्त वातावरण उपलब्ध हुआ । और इस युग ने स्त्री भी भक्ति के माध्यम से मोक्ष प्राप्त करने की अधिकारी हो गई । पुराणो और स्मृतियो मे पतिव्रत धर्म के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग मोक्ष प्राप्त करने की अधिकारी हो गई । पुराणो और स्मृतियो मे पतिव्रत धर्म के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग मोक्ष प्राप्ती के लिए न था परन्तु भक्ति काल मे पतिता वेश्या और अकुलिना स्त्री भी भगवत भक्ति के माध्यम से मोक्ष प्राप्ति के लिए स्वतत्र थी। अत इसी कारण मीरा, मुक्ता, क्षेमा आदि पारिवारिक जीवन से विमुख होकर त्याग और तपस्या से जीवन व्यतीत कर सकी । कीर्तन भजन धार्मिक मागलिक कार्यो पर स्त्रियॉ पुरुषो के साथ बैठने और भगवत् भजन करने लगी जिसके कारण पदे की प्रथा कुछ कम हुई । सत अमरदास ने अपनी शिष्याओं मे पर्दे को उठा दिया था । सन्यासी बनने से पूर्व पति को पत्नी की आज्ञा लेना

अनिवार्य था । यदि किसी अवसर पर पत्नी भी सन्यासिनी बनना चाहे तो, मोक्ष प्राप्ती मे पति का साथ दे सकती थी भक्तिकालीन युगल पूजन से स्त्रियो को पुन एक बार गौरव प्राप्त हुआ । लक्ष्मीनाराण, सीता–राम , राधाकृष्ण शिव–पार्वती, आदि युगल देवताओ की आराधना से स्त्री के प्रति एक मनोवैज्ञानिक सम्मान का दृष्टिकोण स्थापित हुआ ।

धार्मिक एव सामाजिक क्षेत्र की इस प्रतिष्ठा के अतिरक्ति भक्तो एव उपदेशको ने स्त्री को कटुवचनो के कुछ ऐसे घेरे मे ला दियाा जिससे स्त्री फिर–आहत हुई ।

सत–एकनाथ ने साधको को स्त्री से दूर रहने का आदेश दिया । उन्होने कहा कि पुरुष का स्त्री से आवश्यकता से अधिक सम्पर्क स्थापित करना उचित नही । सत तुकाराम ने भी नारी ससर्ग से दूर–रहने की इच्छा प्रकट की। क्योकिं ससर्ग से भगवत्भक्ति मे बाधा पडती है तथा मनोभाव सयमित नही रह पाते । चैतन्य उस पुरुष से किसी भी प्रकार का सम्बध नही रखना चाहते जो स्त्री से सम्बन्ध रखने का आदि है । मध्यकालीन सतो ने स्त्री के सम्बध मे कही–कही बडे कटुता पूर्ण वचनो को उद्गारित किया है । ये सभी नारी मे केवल यौन भावना से उत्पन्न वासना ही देख पाये उसके चारित्रक गुणो से उनका परिचय ही नही हुआ। परन्तु जहॉ कही उन्होने नारी को मॉ व देवी के रुप मे देखा है । वहॉ उनकी वाणी उनके गुणमान मे लगी रही थकी नही। अत ऐसा प्रतीत होता है । कि दैहिक आर्कषण मोक्ष प्राप्ती मे बाधक था। मोक्ष प्राप्ती इन सभी सतो का लक्ष्य था अत अपने आपको स्त्री से दूर रखने के लिए इन्हे स्त्री की उपेक्षा करना आवश्यक था इसी कारण इन्होने नारी के प्रति सामान्य रुप से उपेक्षा का भाव बनाऐ रखा नारी के प्रति इनकी यह भावना होते हुए भी उत्तर मध्यकाल तक नारी की स्थिति उत्तरोत्तर पतित होती गई ।

इसका मूल कारण हिन्दू समाज की निर्माण शक्ति का कम होना हे । भक्ति युगीन साधको के सुधारो को अपना सकने में भारतीय समाज असमर्थ रहा । धार्मिक क्षेत्र मे स्त्री को जो भी स्वतंत्रता मिली सामाजिक क्षेत्र सकीर्ण होने के कारण उस स्वतत्रता का कुछ भी मूल्य नही रह गया । वह काल था

जबकि जन साधारण का आर्थिक शोषण हो रहा था । जागीरो के रुप मे बटे लोगो को जागीरदारो और सामन्तो के माध्यम से शोषित होना पड रहा था । ये जागीरदार और सामन्त प्रजा की खून पसीने की कमाई अपने विलास और भोग मे उडा रहे थे, आर्थिक व्यवस्था विषम हो चुकी थी अर्थ सुव्यवस्था के बिना किसी भी सुधार का विकास और प्रसार असभव है । इन साधको ने धार्मिक क्षेत्र मे भले ही स्त्री को मान्यता दी हो किन्तु सम्पत्ति, परिवार और सामाजिक सम्मान की ओर ध्यान नही दिया । इन सुधारको न धर्म के प्रसार–प्रचार मे बौद्धिकता की अपेक्षा भावुकता तथा अपने आराध्य के प्रति अगाध विश्वास की भावना को ही मुख्य स्थान दिया । भक्त समाज स्वय मे सगठित नही था । ये दो विरोधी सस्कृतियो हिन्दू व मुसलमान के मेल से निर्मित एक विषम काल था अत स्त्री के सम्बध मे भी कुछ ऐसी ही मिश्रित भावना पनपती गयी ।

आलोच्य काल के पूर्व साहित्य में स्त्रियों की सामाजिक भूमिका

(क) भक्ति काल और रीति काल में.

सम्पूर्ण भक्ति साहित्य मे नारी की सामाजिकता मुख्यत दो रूपो मे दिखाई देती है– पत्नी और माता का रूप। हिन्दू सस्कृति मे माता के साथ जो गौरवमयी भावना जुडी है वह सूर और तुलसी के साहित्य मे स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। माता अपने पुत्र के गुणो के कारण गौरवान्वित और अवगुणो के कारण निन्दित होती है। जिस प्रकार सीता ने पति प्रेम और पत्नीत्व का आदर्श प्रस्तुत कियाहै, उसी प्रकार यशोदा और कौशल्या ने वात्सल्य का । कौशल्या के व्यवहार मे वात्सल्य के साथ साथ गभीरता, सयम और विवेक का भी समन्वय है। सम्पूर्ण भम्तिकालीन साहित्य मे नारी का चरित्र प्रेम और निष्ठा से पूर्ण माना गया है। यह प्रेम आत्मसमर्पण तथा प्रतिदान की भावना से मुक्त है। प्राय सभी चरित्र आदर्श की भावना से युक्त है। यह सदाचार और आदर्श भावना विषम परिस्थितियो में विरह या पति द्वारा त्याग किए जाने पर अपहरण होने पर या परपुरूष द्वारा प्रलोभन दिए जाने पर भली भाति प्रकट होती है। इस प्रकार भक्तो ने अपने साहित्य में सत् सत् भाव वाली स्त्रियो के हृदय को चारित्रिक तेज से सम्पन्न दिखाया है।

स्त्री के इन गुणो के अतिरिक्त उसमे अनेक दोष भी है। समाज मे प्राय सभी भक्तिकालीन साहित्यकार स्त्री को हीन भावना से देखते है। उसे बुद्धिहीन, मूर्ख एव जड माना है। इस हीन भावना के कारण उसे सीमा मे रखने की सलाह भी दी है। घर की सीमा मे आबद्ध कर देने के कारण स्त्री का स्वतत्र विकास बाधित हुआ है। शिक्षा एव व्यक्तित्व का विकास न होने से वह कुठित मानसिक रूप से पिछडी हुई दिखती है।

सामाजिक जीवन मे वह अधिकार विहीन है। स्त्री की ये सीमाए उस युग विशेष की सीमाएं है। इन्ही कारणो से पराधीनता प्राप्त हुई है।

"पराधीन सपनेहू सुख नाहि"

और स्त्री सदैव के लिए पराधीन बना दी गई तो सुख की कल्पना वह कैसे कर सकती थी।

सीता के विवाह के अवसर पर स्त्रियॉ स्वय प्रश्न करते हुए कहती है कि जब स्त्री पराधीन है तो विधाता ने उसकी सृष्टि क्यो की?

इस प्रकार की स्त्रियॉ की स्वय के विषय मे सोच क्यो? इसका कारण सभवत यह रहा होगा कि समाज मे स्त्री के प्रति हीन भावना थी इस कारण स्त्री स्वय को हीन मानने लग गई। इसी कारणवह स्वय को बोझ स्वरूप मानने लगी थी। वह समाज एक ओरजनके के मुख से कहलाता है।

पुत्री पवित्र किये कुल दोऊ।

(सीता का व्यवहारदेखकर जनक चित्रकूट मे मुग्ध होकर कहते है।) अत जहॉ स्त्री ने मर्यादाओ का पालन किया वहॉ उसकी सराहना की गई। किन्तु जहॉं स्वतंत्रता की बातआती है वहॉ तुलसी दास स्वय ही कहते है–

"अति वर्षा चलि फूटि कियारी

जिमिस्वतंत्र होइ बिगरहि नारी।।"

अत स्त्री के लिए चाहे कोई भी भक्त कवि हो मध्यम और सीमा बद्ध जीवन ही सराहते है उसके स्वतत्र होने की कल्पना मात्र से उपदेश देना प्रारम्भ कर देते है।

उत्तर भारत गृह कलह, पारस्परिक स्पर्धा, एव द्वेष के कारण छिन्न–भिन्न होकर अनेक राज्यो मे बॅट गया। उधर मुसलमानो के आक्रमणो ने यहॉ की संस्कृति को ध्वस्त करना आरम्भ कर दिया। महमूद गजनवी ने पजाब से कन्नौज तक का प्रदेश विजित करते हुए सन् (1025 ई0) मे गुजरात पर आक्रमण किया और सोमनाथ के मंदिर को लूटा। वहॉ की प्रसिद्ध मूर्तियो को तोडा। तुर्क अफगानो द्वारा भारत में अनेक राज्य स्थापित हुए और इन शासको मे से ज्यादातर शासको ने हिन्दुओ पर अत्याचार ही किए। सन् 1398 ई0 मे तैमूर लग का आक्रमण हुआ, जिसने हिन्दुओ की शेष मान मर्यादा को एक बार पुन रौद डाला।

मुसलमानो के पहले भी अनेक जातियॉ भारत आयी थी। किन्तु उनका उद्देश्य सैनिक विजय प्राप्त करना और लूट–पाट कर धन अपने साथ ले जाना था। उनकी कोई धार्मिक भावना और दृढ सस्कृति नही थी इसलिए राजनीतिक

दृष्टि से विजयी होने पर भी सास्कृतिक क्षेत्र मे उन्हे पराजय मिली। भारतीय सस्कृति ने घुलमिल कर आत्मसात कर लिया। लेकिन मुसलमानो का आक्रमण बिल्कुल भिन्न प्रकार की घटना थी। इन आक्रमणकारियो ने की अपनी एक मजबूत सास्कृतिक परम्परा थी और उनका अपना साहित्य था। दुर्भाग्यवश इस्लामी सस्कृति व धर्म के अनेक ब्रह्म सिद्धान्त भारतीय सस्कृति एव धर्म के प्रतिकूल थे। फलस्वरूप दोनो का सघर्ष अनिवार्य हो गया।

तत्तकालीन जीवन धर्मानुशासित था। आपसी मारकाट खून खराबा रोकने का और शाति बनाये रखने का एकमात्र तरीका धर्म ही था। किन्तु किसी एक धर्म का नेता दूसरे धर्म को मान्य नही था। ऐसी परिस्थितियो मे दोनो धर्मो के मूलभूत समान तत्वो की ओर ध्यान आकृष्ट करना आवश्यक था।

वर्ण व्यवस्था की अमान्यता तथा एक मूर्तिपूजा विरोध इस्लाम धर्म के दो सुस्पष्ट लक्षण है। भारतीय धर्म मे र्निगुण उपासना के लिए स्थान था, वर्ण–व्यवस्था काखडन बौद्ध धर्म भी कर चुका था। सिद्धो की रचना मे इस प्रकार के कथन मिलते है। भारतीय सतो ने इन्ही दो मान्यताओ को अपना लिया। इन्होने वेद पुराण और कुरान का पक्ष न लेते हुए दोनो का ही खडन करना श्रेष्ठ समझा। दूसरे शब्दो मे कहा जाय कि मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाया । सतो ने मूर्ति पूजा खडन तथा वर्ण व्यवस्था के विरोध पर ज़ोर दिया।

पाहन पूजै हरि मिलै.... .

तोमैं पूजूँ पहाड

तथा– कांकरपाथर जोरि कै

मस्जिद लई चुनाय

ता चढि मुल्ला बांग दे

बहरा हुआ खुदाय

इन्होने वेद पुराण और कुरान के स्थान पर अनुभव को उचित माना उन्होने मनुष्य मे प्रेम, दया को महत्व दिया।

दूसरी ओर सगुण भक्ति के उपासक कट्टरपथी थे। वे स्वय को और अपने धर्म को मुसलमानो से अछूता रखना चाहते थे। वल्लभाचार्य ने कृष्णाश्रय मे लिखा है कि "देश म्लेच्छाक्रात है।" गगा आदि तीर्थ दुष्टो द्वारा भ्रष्ट होरहे है। अशिक्षा एव अज्ञान के कारण वैदिक धर्म नष्ट हो रहा है। ऐसी स्थिति मे कृष्णाश्रय मे ही जीवन का कल्याण है।" इस कथन से यह सिद्ध होता है कि धर्म की हानि तथा अधर्म का अभ्युदय देखकर ही इन लोगो ने राम और कृष्ण को पुकारा। इन्ही कारणो से व्यासजी ने कृष्ण के मुख से यही बात कहलायी थी –

"यदा–यदा ही धर्मस्य ग्लार्निभवति भारत·

अभ्युत्थानं धर्मस्य तदात्मानं सृजम्यहम्।"

धर्म प्राण जनता के लिए यह बहुत बडा अवलम्ब था कि ईश्वर उनके लिए धरती पर उतरेगे। मुसलमानो से संघर्ष करते–करते राजपूतो का दम उखडने लगा था। दिल्ली, जौनपुर, और बगाल भी मुसलमान शासको के हाथो मे था। गुलाम वश के पश्चात दिल्ली की बाग डोर खिलजी वश के हाथ मे आ चुकी थी। मुसलामानो के बढते हुए प्रभाव को रोकने के लिए तथा आत्मसम्मान की रक्षा के लिए विजयनगर और बहमनी साम्राज्य मे नोक झोक चलती रहती थी। तात्पर्य यह है कि दूर–दूर तक मुसलमान शासक थे। और बीच–बीच मे जो हिन्दू शासक गिने–चुने बचे थे वो भी इन मुसलमान आक्रान्ताओ के आये दिन होने वाले आक्रमणो से त्रस्त थे। घोर निराशा के इस काल मे हिन्दू जनता को मार्ग नही मिल पा रहा था। वह असहाय होकर अपनी आस्था के प्रतीक मदिरो और देवालयो का ढहाया और मूर्तियो का तोडा जाना सहन कर रहे थे। इस अवस्था मे वो ईश्वर से प्रार्थना करने के अतिरिक्त और क्या कर सकते थे। और कोई साधन शेष नहीं था। वो ईश्वर की अनुकम्पा पर ही भरोसा करके बैठ गये। कभी जब वीरत्व की कोई चिनगारी भी कही दिख जाती तो वह दूसरे ही क्षण बुझ जाती। इस प्रकार दुष्टो को दण्ड देने का कार्य उन्होने ईश्वरके ऊपर ही डाल दिया और वे सांसारिक वस्तुस्थिति से दूर पारलौकिक और आध्यात्मिक वातावरण मे बिहार करने लगे।

ऐसी अदृश्य शक्ति का आधार इसी लिए खोजा जाने लगा जिसका कोई भौतिक स्वरूप न हो और जिसे कोई खण्डित न कर सके। इन भक्तो ने भक्ति साहित्य के रूप मे उत्कृष्ट एव लोकप्रिय साहित्य प्रदान किया। भक्ति काल को हिन्दी साहित्य का स्वर्णयुग कहा जाता है।

भक्ति आन्दोलन के आधार पर ही भक्ति सहित्य रचा गया। भक्ति साहित्य एक वैचारिक भूमि पर स्थित है। भक्ति आन्दोलन की यह विशेषता है कि इसमे धर्म साधना का नही, भावना का विषय बन गया। इस आन्दोलन का ऐतिहासिक आधार क्या था? इस प्रश्न पर प0 रामचन्द्र शुक्ल ने इसे इस्लामी आक्रमणा से पराजित हिन्दू जनताकी असहाय एव निराश मन स्थिति से जोडा था। वे इसे दक्षिण भारत से आया हुआ मानते थे, दूसरी ओर यह भी मानते थे कि अपने पौरूष से हताश जाति के लिए भगवान की शक्ति एव करूणा की ओर ध्यान ले जाने के अतिरिक्त दूसरा मार्ग ही क्या था।

हिन्दी सहित्य को ध्यान से देखने पर हम यह पाते है कि साहित्य के योगदान के क्षेत्र मे अवर्णों और नारियो की सहस्थिति है। हिन्दी मे अवर्ण साहित्यकार अधिक सख्या मे या तो भक्तिकाल मे हुए है या आधुनिक काल मे। नारी रचनाकारो की भी यही स्थिति है। हिन्दी की श्रेष्ठ कवियत्री मीराबाई भी एक भक्त थी। इसका कारण खोजे जाने पर यह तथ्य सामने आये कि स्त्री घर के अदर रहकर अपने स्वामी या पिता के साथ ईश्वर चिन्तन और भक्ति करने लगी। और रही बात अवर्णो की तो प्रो0 इरफान हबीब का इस सदर्भ मे जो कथन है उसका आशय यह है कि– भक्ति आन्दोलन की निर्गुण भक्तिधारा के उत्तर भारतके कवि–एकेश्वरवाद की उपासना करने लगे और इन एकेश्वरवादियो मे शिल्पियो और जाटो की प्रमुख भूमिका रही। इन नए शासको ने अपना वैभव और शक्ति दिखाने के लिए बडे–बडे वैभवशाली भवनो का निर्माण करवाने के उद्देश्य से 13वी 14वी शताब्दी मे भोग विलासकी सुविधाओ की माग रखी। केन्द्रीय सत्ता स्थापित होनेपर सडको, भवनो का निर्माण कार्य तेजी से होने लगा। इस विलास सामग्री सडको भवनो आदि के निर्माण के काम से इस वर्ग

की आर्थिक स्थिति सुधरी और इनमे सामाजिक मर्यादा की स्वीकृति की भावना पेदा हुई।

इस भक्ति के वातावरण मे भी स्त्रियो के साथ पूर्ण न्याय नही हुआ। जैविक कारणो से पुरूष की अपेक्षा कमजोर स्त्री विदेशी आक्रमणकारियो की कुदृष्टि से स्वय की रक्षा करने मे पूर्ण समर्थ नही थी अत उसने इसके उपाय खोजने के लिए स्वय को ही आवरण मे ढक लिया उसने अपने सामाजिक उत्सवो और समारोहो से स्वय को दूर रखना ही उचित समझा। इब्नबबूता का इस सदर्भ मे जो दृष्टिकोण है उसके अनुसार – हिन्दू कन्याओ को सम्पन्न मुसलमान आधिकाधिक संख्या मे क्रय करके अपने घरो मे रख लिया करते थे। कुलीन नारियो का अपहरण कराके अमीर लोग अपना मनोरजन किया करते थे। मुहम्मद बिन तुगलक ने चीन के सम्राट के पास भारतीय काफिरो मे से एक–एक सौ स्त्री पुरूषों को सौगात के रूप में भेजा था। कारण कोई भी रहा हो अत्याचार स्त्रियो पर ही हुआ। समाज मे बहु–विवाह तथा सती प्रथा भी प्रचलित थी। (जर जोरू और जमीन) युद्ध के कारण प्राय बनते थे अत स्त्रियो को परदा प्रथा, बाल विवाह, सती प्रथा, आदि का पालन करना ही पडा। क्योकि वे स्वय भी नही चाहती थी कि उनके कारण पिता, भाई या पति किसी को किसी परेशानी का सामना करना पडे।स्त्री सदैव से लज्जाशील, सकोची व भावुक रही है। इसी कारण उसे ये बधन स्वीकार्य हो गये ओर उसकी स्वतत्रता और प्रगति बाधित कर दी गई और अब उसका समाज घर की चाहरदीवारी के अदर सीमित हो गया तथा विवाहिता की सीमा रेखा शयनकक्षों और रसोई मे सिमट कर रह गई।

पुरूषत्व का क्षेत्र स्त्री पर अधिकार करने ओर उस पर अपने नियम लागू करने पर आकर ठहर गया।

स्त्रियो का नैसर्गिक गुण कोमलता, सुन्दरता अब उसके शत्रु बन चुके थे। कन्यासे बालिका बनने के पूर्व ही उसका विवाह करना उचित समझा गया जिससे कि पिता को अपनी पुत्री के कारणकोई जोखिम न उठाना पडे ।सभवत यही कारण था कि बाल हत्या भी हुई जिससे स्त्रियो का अस्तित्व संकट में पड

गया। कन्या का जन्म बोझ बन गया। मुस्लिम महिलाओ की स्थिति की हिन्दू स्त्रियो से अधिक भिन्न न थी। बहु–विवाह प्रथा के कारण हरमो मे इनकी दुर्गति हुआ करती थी। फिर भी यद्यपि मुस्लिम समाज मे स्त्रियॉ को आदर व सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था कयोकि मुस्लिम धर्म के प्रर्वतक मुहम्मद साहब ने स्त्रियो व पुरूषों को समान अधिकार दिए तथा उनकी पवित्रता पर बल दिया परन्तु फिर भी वे उनकी स्वतत्रता को पूर्णत स्वीकार नही कर पाये। स्त्रियो को अपने अस्तितव तथा अस्मिता के कारण पर्दे का इस्तेमाल करना पडता था। हिन्दू तथा मुस्लिम दोनो ही समाज मे परदा प्रथा विद्यमान थी। कुछ इतिहासकार इस बात को मानने से इकार करते है कि इस्लाम के भारत मे प्रवेश के पूर्व हिन्दू समाज मे परदा प्रथा विद्यमान थी। पहनावे का ढग अवश्य पृथक था। हिन्दू स्त्रिया घूंघट के द्वारा अपने चेहरे को ढकती थी। तथा मुस्लिम स्त्रियों को चेहरा ढकने के लिए बुर्का का इस्तेमाल करना पडता था। सम्भ्रान्त परिवार की स्त्रियो केलिए परदा अनिवार्य था। क्योकि समाज तीन वर्गों मे विभक्त था।– उच्च, मध्यम, निम्न। उच्च वर्ग मे शाही परिवार, अमीर, राजा इत्यादि थे। मध्यम वर्ग मे चौधरी, खुत, मुकद्‌दम, जमीदार आदि का तथा तीसरा वर्ग किसान बढई, चमार इत्यादि का था। वर्ग के अनुसार इसका रहन सहन भी था। आर्थिक सम्पन्नता ही उनके जीवन स्तर को निर्धारित करती थी। स्त्रियो मे शिक्षा की सुविधा धनी परिवारो तक ही सीमित था। उच्च वर्ग में लडकियो को पढाने के लिए घर पर ही शिक्षक की व्यवस्था की जाती थी। ताकि समाज मे बाहर आये गये बिना ही राजकुमारियो या कुलीन कन्याओ को शिक्षा भी प्राप्त हो सके। इन स्त्रियो को हर प्रकार की सुविधापूर्वक शिक्षा दी जाती थी। राजनीति, घुडसवारी, तलवार बाजी, तैराकी साहित्य इत्यादि। गुलबदनबेगम, नूरजहॉ, जहॉआरा, रोशन आरा, जेबुन्निसाबेगम जीतुन्निसा बेगम आदि ऐसे ही महत्वपूर्ण नाम है कुछ ऐसे भी महत्वपूर्ण स्त्रिया हुई है । जिन्होने हर क्षेत्र मे अपने–अपने योग्यता का प्रर्दशन किया है ।रजियाबेगम व नूरजहॉ (मेहरुन्निसा) ने राजनीति मे हमेशा के लिए यह सिद्ध कर दिया कि स्त्री समय आने पर अच्छी शासक बन सकती है । इसके अतिरिक्त हिन्दू स्त्रियो मे रानी

दुर्गावती, कर्णवती, जोधाबाई, इत्यादि ने राजनीति के अतिरिक्त समाज मे अपना अलग स्थान बनाया ।

गुलबदन बेगम की कृति हुमायूँनामा उनकी स्वतत्र प्रवृत्ति तथा उपलब्धि का प्रमाण है ।

मध्यमवर्ग मे ज्यादातर, छोटेराजा, जमीदार, खुत, मुकद्दम चौधरी आते थे। जिस प्रकार इनका जीवन मध्यम वर्ग का था उसी भाति उनकी स्त्रियो का जीवन भी मध्यम थे । यद्यपि ये उच्चवर्ग के समान आर्थिक स्तर मे नही थे तथापि वे वैभवपूर्ण जीवन ही जीते थे इनकी स्त्रियो को खाने, पहनने के अतिरिक्त शिक्षा के भी उचित अवसर प्राप्त होते थे । ये मन्दिरो, मस्जिदो और सार्वजनिक उत्सवो मे जाती तो अवश्य थी किन्तु परदा इनके लिए अनिवार्य था।

तीसरे वर्ग की स्त्रियो मे दलित तथा निर्धन वर्ग था । इस वर्ग की स्त्रियो की दशा बिलकुल ही खराब थी । ये आर्थिक रुप से इतनी त्रस्त रहती थी कि इन्हे दो समय की रोटी के अतिरिक्त और कुछ सोचने का मौका ही नही था। ये स्त्रिया घर मे काम करती खेतौ मे जाती । कटाई , बुनाई मे अपने पतियो का साथ देती क्योकि यही उनकी रोजी रोटी का साधन था । उन पर भी पति के समान परिवार के भरण पोषण की जिम्मेदारी थी । आराम इनके जीवन मे नाममात्र का भी नही था । शरीर का हर अग ढके इसकी भी इन्हे सुध नही रहती थी । अत इनके लिए परदा अनिवार्य नही था । इनको शिक्षा के नाम पर घर के काम काज की ही शिक्षा प्राप्त होती थी । बाल्यावस्था मे ही इनका विवाह हो जाता था ।

कभी–कभी राजमहलो और जगीदारो के यहॉ घर के अन्दर रह कर भी ये नौकरो या दासियो का कार्य करती थी । इस स्तर की स्त्रियो का जीवन कुछ बेहतर अवश्य हो जाता था। अत इन स्त्रियो की इच्छा इस प्रकार के घरो मे काम करने की होती थी । इसी वर्ग की एक परिणति वेश्या के रुप मे थी । इन वेश्याओं का एक अलग ही वर्ग था । इन्हे समाज मे घृणित दृष्टि से देखा जाता था । जबकि इनका निर्माण यही समाज करता था । सुन्दर स्त्रियो को

राजा मन्दिरो मे देवदासी के रुप मे रख देते थे । ये काफी समय से भक्ति सगीत तथा नृत्य का कार्य करती आ रही थी । किन्तु कालान्तर मे ये बहुत भ्रष्ट हो गई थी । इनके कार्य भी अनैतिक हो गये थे । अलाउद्दीन खिलजी के समय मे तो इनकी सख्या इतनी अधिक हो गई थी कि सुल्तान ने एक आदेश पारित करवाकर इन्हे विवाह के लिए विवश किया । इस वर्ग की स्त्रियो ने सारा समाज दुषित कर रखा था। परन्तु पेट के कारण (रोजी रोटी का साधन होने के कारण) इन्होने अपनी मर्यादा और मान सम्मान को बेचना प्रारम्भ किया था ।

यदि हम मध्यकालीन समाज की स्त्रियो की दशा को देखे तो निष्कर्ष स्वरुप यह कहा जा सकता है कि इस काल मे स्त्रियो का एक छोटा वर्ग उच्चवर्ग के रुप मे अच्छा जीवन व्यतीत कर रहा था । वह भी आर्थिक दृष्टिकोण से फिर भी कुछ जटिल परम्पराओ पर्दाप्रथा, सतीप्रथा, जौहर प्रथा आदि ने इनके जीवन को मुश्किल बना रखा था । जबकि निर्धन वर्ग की स्त्रियॉ सामाजिक मर्यादाओ से बधी नही थी। उन्हे आर्थिक सकट ने मुश्किल जीवन जीने पर मजबूर कर दिया था । अत किसी न किसी रुप मे हर वर्ग की स्त्रियॉ कष्टमय जीवन का निर्वाह कर रही थी।

राजनैतिक वातावरण का पूरा–पूरा प्रभाव अर्थतत्र पर पडता है और अर्थिक व्यवस्था समाज का एक बहुमूल्य अग होती है अत त्तत्कालीन राजनीतिक स्थिति का सर्वेक्षण करना अनिर्वाय प्रतीत होता है । यह काल मुगलो के शासन, वैभव के चरमोत्कर्ष के पश्चात उत्तरोत्तर पतन का युग माना जा सकता है । जहॉगीर के शासन काल मे राज्य का विस्तार हुआ शाहजहॉ ने उसमे और वृद्धि की । राजकोष भरा पूरा था । इसके पश्चात 1658 ई0 में शाहजहॉ का बीमार पडना और सत्ता के लिए शहजादो का आपसी सघर्ष मुगलो के पतन का कारण बना । शाहजहॉ का ज्येष्ठ पुत्र दाराशिकोह विद्वान, सहिष्णु और उदार था उसको शाहजहॉ के उत्तराधिकारी के रुप मे सभी जागीरदार और राजा मान्यता देते थे । जबकि छोटा पुत्र औरगजेब अपने अहकार और असहिष्णुता के कारण अत्यत अप्रिय माना जाता था । दारा की हत्याकर ज्यो ही औरगजेब ने बागडोर सभाली चारो ओर से विद्राह प्रारम्भ हो गये जिसके

फलस्वरुप उसका अधिकाश समय इन विद्रोहो को दबाने मे व्यतीत होने लगा । जिसके कारण इतने विस्तृत साम्राज्य को सुसगठित न कर सका । और यही क्रम औरगजेब के पश्चात् (1707 ई0 के पश्चात) उसके पुत्रो मे भी राजगद्दी के लिए सघर्ष प्रारम्भ हो गया इसका परिणाम यह हुआ कि छोटे–छोटे राजाओ और जागीरदारो ने अपने को स्वतत्र घोषित कर लिया ओर दिल्ली साम्राज्य दिल्ली से आगरा तक के क्षेत्र मे सीमित हो गया । इसी बीच नादिरशाह का 1738 ई0 मे आक्रमण हुआ और शासन की नीव तक हिलगई । जो भी कुछ शेष बचा था उसकी कसर 1761 ई0 मे अहमदशाह अब्दाली ने पूरी कर दी । इधर अग्रेज भी भारतीय राजनैतिक माहौल को समझ चुके थे उन्होने इस परिस्थिति का पूरा–पूरा लाभ उठाया और 1803 ई0 तक सम्पूर्ण उत्तरी भारत पर उनका वर्चस्व स्थापित हो गया । वास्तविक सत्ता अब अग्रेजो के हाथ मे चली गई । 1857 तक हम वास्तविक रुप से अग्रेजो की शक्ति पहचान लेते है । या यूँ कहे की 1857 की क्रान्ति को कुचल कर अग्रेजो ने अपनी शक्ति और भारतीयो की कमजोरी का ढिढोरा पीट दिया । सामाजिक दृष्टि से विशेषकर स्त्री समाज के लिए घोर अधकार का काल था । स्त्री का केवल श्रृगारिक रुप ही इस काल मे दृष्टिगत होता है । स्त्री को अपनी सम्पत्ति मानकर उसका भोग करना इनके जीवन का उद्देश्य हो गया था। विलासिता की खोज और उनका संग्रह इन राजाओं और जागीरदारो का शौक हो गया था । किसी की भी कन्या का अपहरण इन तथा कथित अभिजात्य वर्ग के लोग करवा लेते थे । हरम और महलो मे सैकडो रानियो और बेगमो के होते हुए भी ये अमीर वेश्याओ के कोठो पर पडे रहते थे । शिक्षक वर्ग भी इन अमीर जादो को काम कला की शिक्षा देकर शिक्षक के कर्म से निवृत्त हो जाते थे । बहुविवाह, बालविवाह, परदा प्रथा, सती प्रथा इत्यादि कुप्रथाऐ उसी भाति आगे बढती रही । इस काल की मुख्य विशेषता यह रही कि स्त्री का उज्वल ह्रदय पक्ष न लेकर रुप और सौन्दर्य का भौतिक पक्ष ही इन साहित्यकारो पर हावी रहा इन्हे स्त्री मॉ या पत्नी के रुप मे नहीं मात्र नायिका का रुप में ही मिलते है । इन कवियो ने जब कभी कृष्ण और राधा को स्मरण भी किया तो नायक और नायिका बना लिया ।

भक्ति के कठिन मार्ग पर चलते हुए और राम का नाम पुकारते बाट जोहते हुए **अंषडिया झाई पडी पंथ निहारि–निहार जीभड्या छाला पड्या राम पुकार–पुकार**। कवि थक गये थे उन्हे 'वाक्य रसात्मक काव्य' से प्रक्षालन की आवश्यकता थी । डा0 नगेन्द्र के अनुसार– **'जीवन की उदात्त साधना और कदाचित सिद्धियो का भी निरुपण इस काव्य में उपलब्ध होता है । किन्तु जीवन सरसता का मूल्य नगण्य नही है–जीवन के मार्ग मे धीर और प्रबुद्ध गति से बढना तो श्रेयस्कर है किन्तु कुछ क्षणों के लिए किनारे पर लगे वृक्षो की शीतल छॉह में विश्राम करने का भी अपना मूल्य है ।'**

रीतिकाल ने इसी शीतल छॉह का कार्य किया । यद्यपि आलोचको ने इस काल को अभिशप्त कहा है । द्विवेदी युगीन आलोचको ने इसे सदाचार विरोधी कहकर नैतिक आधार पर इसका तिरस्कार किया । छायावादी सूक्ष्मकाव्य के प्रति मोह और स्थूल मासल सौन्दर्य के प्रति हीन भाव रखते थे । प्रगतिवादियो ने समाज विरोधी और प्रतिक्रियावादी कहा । प्रयोगवादियो ने इस काव्य को और इसकी विषय वस्तु को एकदम बासी कहा है ।

काव्य कला के माध्यम से नैतिक मूल्य और जीवन दृष्टि पर प्रभाव तो निश्चित रुप से पडा होगा किन्तु यह भी नही भूलना चाहिए काव्य जीवन की समीक्षा है और यह सभव नही है कि हम कुछ सोचे और कुछ जिये । सभवत· इसी निष्क्रियता और स्वतत्रता के माहौल मे ऐसा साहित्य रचा गया जो अपने तेज प्रभाव मे नैतिकता के सभी सेतूओ को बहा ले गया ।

इन कवियो के काव्य मे मौलिकता का सर्वथा अभाव रहा है ये चाहते हुए भी स्वयं को श्रृगारिकता के मोह से दूर नही कर सके । रीतिकालीन साहित्य मे नारी का प्राय एकागी रुप ही व्यक्त हो सका । उसके माता, पुत्री , भगिनी आदि रुपो की व्यजना नही हो सकी । उसकाल मे काव्य कवियो की वाणी विलास का ही विषय बन कर रह गयी । कविगण अपने आश्रय दाताओ की मन की सन्तुष्टि का ही कार्य करते रहे । अत काव्य साहित्य मे जीवन के उदात्त तत्वों का अभाव दिखता है ।

इस शान्ति के काल मे कला की उन्नति के साथ–साथ मुगल दरबार मे विलास प्रियता की भावना को स्थान मिला । कविता श्रृगारिकता की बीथिकाओ मे बहने लगी । सूर की आराध्या राधा अब श्रृगार की साम्राज्ञी बन इस के जलाशयो मे क्रीडा करने लगी । कामिनी का दैहिक सौन्दर्य कवियो के अतर्मन को गुदगुदाने लगा । भक्तिकालीन नारी भावना की प्रेरणा पुराणो व स्मृतियो से आयी थी, वही रीतिकाल की भावना का मूलाधार सस्कृत साहित्य बना ।

जहॉ भक्ति काल की नारी भावना वैराग्य मूलक तथा स्त्री के प्रति उपेक्षापूर्ण थी । वही रीतिकाल मे आकर मनोविनोद व ऐन्द्रिक सुख प्राप्ती का सहज साधन बन गई । डा0 राम कुमार के अनुसार————————

'धार्मिक काल की पवित्रता नष्ट होने लगी थी । उसमे श्रृगार के अत्यधिक प्राधान्य ने वासना के बीज बो दिये थे । राधा और कृष्ण की विनय अब कवित और सवैयों मे प्रकट होकर नायिका और नायक के भेदो की कौतुहल–वर्धक पहेलियां सुलझाने लगी थी ।'

भक्ति काल के समय की राजनैतिक अस्थिरता अब समाप्त हो चली थी और मुगलशासन स्थापित हो चुका था । अकबर के हरम मे पॉच हजार रुपसियॉ थी । जहॉगीर का स्त्री प्रेम तो जगजाहिर है । शाहजहॉ ने अपनी पत्नी की स्मृति मे ताजमहल बनवाया जिसे बनवाने मे बाइस वर्ष लगे । डा0 रामकुमार वर्मा ने ताजमहल के लिए कहा है – **'समय के कपोल पर रखा हुआ वह उज्जवल अश्रुबिन्दु शाहजहॉ के कलापूर्ण ह्रदय की चित्रशाला है । सम्राट ने अपनी श्रृंगार प्रियता और प्रणय चिन्ह के रुप में ताजमहल की साकार विभूति बाइस वर्षो में निर्मित की जिसकी नीव विरह के आसुओ से भरी गई थी ।'**

मुगलबादशाह कला, सुन्दरता, साहित्य के बडे शौकिन थे । अब इनकी आमदनी से पहले से अधिक हो चुकी थी और राजनीतिक स्थिरता और शान्ति स्थापित थी । खजाने से तनख्वाह देने की बजाय जागीर देने की प्रथा चल पडी । इस कारण मनसबदार और जागीरदार हुए । जिन्होने मुगल शासको को की देखा देखी अपने वैभव और विलासप्रियता मे कवियो और कलाकारो को सरक्षण दिया । कविगण सरक्षण पाने के लिए इन राजाओ और जागीरदारो की

प्रशस्तिगान करने लगे । भक्तिकाल के प्रारम्भ मे धर्म की जो माला सत , भक्त कवियो ने अपने काव्य से पिरोयी थी अब वह विश्रृखलित होने लगी थी । 'प्रेम के क्षेत्र मे प्रेम का ही पतन हुआ है और उसमे ससारिक और पार्थिव आकर्षण की दूषित गध आ गई फल यह हुआ कि श्रीकृष्ण सूरदास के **'प्रभु बाल संधाती'** न रह कर गोपियो द्वारा होली खेलने के लिए बार–बार निमत्रित किए जाने वाले **'लाला फिर आइये खेलन होरी'** वाले श्रीकृष्ण हो गये ।'

'राधिका कन्हाई सुमिरन्' का बहाना लेकर कवि इस हृदय का सविस्तार वर्णन करने लगे । और जो एक कवि का इस के लिए सम्मान देखा तो दो चार और साथ हो लिए फिर तो परम्परा चल निकली । अब कवि को कोई कष्ट नही रहा तो वह कृष्ण और राम को क्यो भजे सो उन्हे करुणा पूर्ण भक्ति की आवश्यकता नही रह गई अब उन्हे दरबारी कवि की प्रतिष्ठा का सम्मान प्राप्त था अत राग रग, मदविलास मे डूबे इन राजाओ को स्त्री के अगो की मादकता के पराग मे डूबा कर कवि कर्म की इतिश्री हो गई ।

इस काल का कवि एक विशेष वातावरण और मनोवृत्ति को अपने आश्रयदाता को सुनने के लिए लिखता था इस कारण अब–**'नहिंपराग नहि मधुर मधुनहि विकास एहि काल'** बनकर रह गया ।

इन कारणो से नारी की स्थिति **'जबरा मारे रोवन न देय'** हो गयी नारी के शरीर को सार्वजनिक रुप से दरबारो मे तथा कथित बुद्धिजीवियो द्वारा निरखा परखा गया और नारी चुपचाप सहने को बाध्य थी ।

श्रृगारिकता की भावना इतनी बढ गई कि इसने सभी सीमारेखाऐं ध्वस्त कर दी । विलासी राजाओ और शासकों के प्रोत्साहन के कारण अब विरह मे प्रकृति भी नारी हो गई थी । इस काल मे स्त्री की कोई और भूमिका नही रह गई न तो वह बेटी थी न मॉ और न ही बहन वह केवल रसास्वादन की उपभोग्य वस्तु मात्र रह गई थी । अपनी आनबान के लिए जौहर कर दिखाने वाली नारी झरोखो से प्रियतम की बाट जोहती और मिलन की तैयारी करती जिनके प्रियतम न आते वो विरह मे इस तरह जलती कि उसके गाव के पास से

निकलने वाले लू लगने से परेशान होते। नायिका का स्नान भी कवि कर्म हो गया------

'कंज नयनि मंजन किए बैठी ब्यौरतिबार ।

अगुरिस बिच डीठि दै चितवाते नंद कुमार ।।'

कवि उस चितवन को तलाश करने लगे—**'वह चितवनि औरै कछू, जेहि बस होत सुजान'**—और इसी चितवन के बस मे हो गये ।

प्रेम के अतीन्द्रियरुप वासना के उच्चत्तम शिखर पर पहुचने मे ये कवि नैतिकता को बहुत पीछे छोड आये । आश्रयदाता को सतुष्ट करने मे इन्होने नारी के ब्रह्म रुप को ही काव्य का माध्यम बनाया । लेकिन नारी की बौद्धिक और आन्तरिक गुणो की अवहेलना कर दी ।

सामन्तीय दृष्टिकोण मे उलझे ये कवि 'पुरुष के समकक्ष समाज की चेतन इकाई अथवा पुरुष की अर्द्धांगिनी न मानकर उसे भोग्य वस्तु के रुप मे उपस्थित किया । स्त्री के समस्त चेतन कर्म श्रृगारिकता और विलासिता के हेतु थे । कामतृप्ति और अतृप्ति के बीच नारी का समस्त अस्तित्व आका गया । प्रेम, ममता, त्याग की प्रतिमूर्ति समस्त रीति काल मे काम की देवी हो गई हो यह बात गले नही उतरती किन्तु साहित्य जो समाज का दर्पण होता है इसी बिम्ब को रुपायित करता है । वह क्या कारण थे कि नारी अपने शारीरिक सौन्दर्य को दरबारी होने से बचा नही पायी और तो और उसने इसके विरुद्ध कोई आवाज भी नही उठायी । कभी किसी काल मे किसी कवियित्री द्वारा नायक के रुप का वर्णन क्यों नही किया गया? इस दृष्टिकोण और नारी की चुप्पी का अर्थ यही लगाया जा सकता है कि स्त्री ने सदैव सीमा का पालन किया है और पुरुष समाज ने अपने सुख की खोज मे सीमा का अतिक्रमण किया है ।'

डा0 नगेन्द्र विलासिता पूर्ण उन्मुक्त प्रेम की अभिव्यक्ति नारी के प्रति सामान्तीय दृष्टि के होते हुए भी इस प्रवृत्ति मे गार्हस्थिक प्रेम की व्यापक स्वीकृति देखने को मिलती है ।—

'छोड़ि आपनो भौन तुम, भौन कौन के जात,
ते धनि जे ब्रजराज लखे, ग्रह काज करै अरु लाज सभारे ।
(मतिराम)'

नायको की रसिकता अपनी पत्नियो के साथ किए गये उचित अनुचित प्रेम व्यवहार से प्राय बाहर नही जा पायी । इसमे सन्देह नही कि परकीया और सामान्या–प्रेम का वर्णन भी इन कवियो ने किया है किन्तु ऐसा उन्हे नायिका भेद विवेचन को पूर्ण बनाने के कारण करना पडा–इसमे व्यापक रुप से इनकी प्रवृत्ति नही रही । '**पारस चाहै परकिया, तजै आपु गुन गोत**' तथा प्रेमहीन त्रिया वेश्या है श्रृगाराभास (देव) के द्वारा पर किया प्रेम मे मर्यादा ध्वनि तथा सामान्य प्रेम मे अनैचित्य को जिस प्रकार व्यक्त किया है वह इस पुष्टि के लिए पर्याप्त है ।

(ख) हिन्दी कहानी का उद्भव और विकास

हिन्दी कहानी की पृष्ठ भूमि मे मूल रूप से प्राचीन भारतीय सस्कृत कथा परम्परा के दर्शन होते है। भारतीय साहित्य मे वैदिक वाङ्मय से लेकरपुराणो, उपनिषदो, जातक कथाओ और पचतत्र आदि मे कहानी के पुराने स्वरूप को देखा जा सकता है। इन रचनाओ का आवरण भले ही उपदेश है परन्तु वास्तव मे इनका स्वरूप कहानीनुमा है।

धार्मिक सिद्धान्तो के इन स्पष्टीकरणो को आज के आधुनिक अर्थ मे कहानी नही कहा जा सकता। आज कहानी का अर्थ है जिन्दगी के एक हिस्से से अतरग पहचान जताना।

कहानी का मूल उद्भव और विकास मानवता के उद्भव और विकास से जुडा हुआ है। निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि किस विशेष समयावधि या देशकाल में साहित्य की इस विधा का प्रादुर्भाव हुआ।

ऋग्वेद को ससार का प्राचीनतम ग्रथ मानते है और उसमे कथात्मकता के मूल सूत्र संवादों के रूप में प्राप्य है। अत भारत वर्ष को ही कहानी का मूल जन्म स्थान माना जा सकता है। कहानी के मूल मे कहने और सुनने की वृत्ति है जिसका मानवता के साथ अतर्सम्बन्ध है।

मानव सभ्यता के अदिम युग मे एक मनुष्य ने दूसरे से कुछ कहा होगा। इस कथन को जब तीसरे व्यक्ति से बताया गया तभी कहानी का जन्म हुआ। प्राचीन भारतीय कथा साहित्य मे कहानी के पर्यायवाची अनेक कथा रूप मिलते है। इनमे सर्वप्रथम कथा है। जिसकी व्युत्पत्ति कथ् से हुई है। और जिसका अर्थ है कोई कथन कराना। कथा की श्रेणी मे ऐतिहासिक, पौराणिक अथवा कल्पना मूलक कहानियॉ आती थी। एक अन्य रूप आख्यायिका है। इसमे उपदोशात्मकता की प्रधानता होती है इसका उदाहरण आचार्य दडी ने हर्षचरित को बताया है। कहानी का तीसरा पर्यायवाची रूप आख्यान है। आचार्य विश्वनाथ ने आख्यान का उदाहरण पचतत्र को बताया है। इसी के साथ आख्यानक का उल्लेख भी आवश्यक है। जिसका आधार लोक परक होता है। उपाख्यान आख्यान के लघु रूप को ही कहते है। नलोपाख्यान तथा नासिकेतोपाख्यान इसके उदाहरण है।

मूलत करूण रस प्रधान रचना को कथानिका की श्रेणी मे रखा जाता है। इसी का एक निकटवर्ती रूप कथालिका है जिसमे घटनात्मकता और चमत्कारिकता की प्रधानता रहती है। कथा के ही पर्यायवाची रूप मे कथानक का प्रयोग भी दृष्टिगत होता है।

बहुत सी कथाओ के बडे सग्रह के लिए वृहतकथा का प्रयोग देखा गया है। आचार्य हेमचन्द ने वृहतकथा का उदाहरण 'नरवाहनदत्त चरित' को बताया है। आचार्य अभिनव गुप्त ने सकल कथा के रूप मे ऐसी प्राचीन शास्त्रीय कहानी परम्परा को बताया है जो घटना समस्त फलो की प्राप्ति दिखाये। छोटी कहानी के लिए कथा का प्रयोग किया गया है जिसका उदाहरण 'इदुमती' को बताया गया है।

कथा के किसी एक भाग को उपकथा कहते है। आचार्य हेमचन्द्र ने इसके उदाहरण के रूप मे चित्रलेखा का उल्लेख किया है। परिकथा प्राय पशु पक्षियो को आधार बना कर लिखि गयी कहानियो को कहते है। हेमचन्द्र के विचार से यह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष मे से किसी एक को लक्ष्य बनाकर लिखी जाती है। उन्होने परिकथा का उदाहरण शूद्रक को बताया है। उन्होने इसी प्रसंग मे 'निदर्शक' नामक कथा रूप का भी उल्लेख किया है इसका उदाहरण पचतत्र को बताया है। 'चेतक' नामक ग्रन्थ को हेमचन्द्र ने प्रवल्लिका की सज्ञा दी है 'मातािल्लका' का उल्लेख उन्होने क्षुद्र कथा के रूप मे किया है। और इसका उदाहरण लवगवती को बताया गया है।

स्मृतिपरक शैली मे लिखी गयी कथा को इन्होने मणिकुल्या कहा और उदाहरण 'मत्स्यहसित' को बताया है कहानी के पर्याय के रूप मे जीवन परक रचना को वार्ता की सज्ञा दी है। कथा के अर्थ मे गाथा का उललेख किया गया है।छोटी कहानी के रूप मे गल्प की चर्चा मिलती है। जिसका विकास गप्प अथवा छोटी कल्पना से हुआ है। किस्सा शब्द का भी प्रयोग कहानी के पर्यायवाची के रूप में हुआ है। बहुत सी लघुकथाओ के सग्रह को किस्सा कहते है। आधुनिक युग के पूर्व स्वप्न और वृत्तान्त का उल्लेख भी कहानी के पर्यायवाची के रूप मे हुआ है।

इस प्रकार प्राचीन भारतीय साहित्य परम्परा मे कहानी साहित्य की एक प्राचीन विधा है और इसके पर्याय अनेक कथा रूप मे उपलब्ध है। इसके स्वरूपगत साम्य और वैषम्य की दृष्टि से इसकी तुलना अन्य अनेक कथात्मक माध्यमो के साथ–साथ साहित्य की अनेक विधाओ और वाड्मय के अन्य शास्त्रो से भी की जा सकती है। यह तथ्य कहानी के स्वरूपगत विविधता तथा क्षेत्रगत विस्तार का भी सूचक है। क्योकि एक ओर यदि कहानी साधारण मनोरजन की दृष्टि से सामान्य रोचक तत्वो से मुक्त है तो दूसरी ओर गम्भीर उद्देश्य से युक्त होने के कारण इसका ऐतिहासिक मनोवैज्ञानिक और नैतिक आधार भी सुदृढ है वैयक्तिक अनुभूति से लेकर विश्वजनीन भावनाये विशुद्ध कल्पना से लेकर अति यथार्थ तथा साधारण घटना से लेकर एक महायुद्ध तक कहानी की पृष्ठभूमि तक निर्मित कर सकता है साथ ही आधुनिक युग मे भी ज्यो–ज्यो इसकी लोकप्रियता बढती जाती है वैसे–वैसे इसका विस्तार भी होता जा रहा है।

साहित्य मे कहानियो का स्थान बडा ही मार्मिक और महत्वपूर्ण है। कुछ आलोचको का कथन है कि कहानी का कोई विशेष आकार–प्रकार नही होता जबकि वेल्स का मत है कि कहानी वह चित्रण है जिसे साहस और कल्पना के साथ एक घटे से कम मे पढा जा सकता है। दूसरे लोगो का कथन है कि किसी वस्तु या व्यक्ति विशेष के परिभार्जित एव कलापूर्ण वर्णन का नाम ही कहानी है। काव्य की कल्पना की अपेक्षा कहानी मे सामान्य जीवन की सत्यता का ही आधिक्य रहता है। कहानी मे इस बात का पूरा ध्यान रखा जाता है कि जिस प्रकार भावना ही जीवन नही है कल्पना ही वास्तविकता नही है उसी प्रकार कठारे सत्य ही एक मात्र सत्ता नही है, चिन्तन ही अस्तित्व नही है।

समष्टि रूप से भावना तथा चिन्तन का सयोजन कल्पना और सत्य का सश्लेषण और इन दोनो के तत्वो से सम्मिश्रित तथा सुसम्बन्धित चेतना का नाम ही मानव जीवन है। कहानी इसी जीवन की इकाई है स्वभावत कहानी को जीवन के भावात्मक तथा विचारात्मक दोनों छोरो को छूते हुए चलना होता है आत्म अभिव्यजना के साथ ही कहानीकार को दूसरे की भावनाओ का उल्लेख भी करना पडता है क्योकि अपने मनोभावो की तुष्टि व्यक्ति, काव्य तथा अपने

प्रियजनो एव पुरजनो के मध्य भी प्राप्त कर सकता है। किन्तु दूसरे के मनोभावो तथा प्रवृत्तियो का परिचय देने की उत्सुकता ही उसे कहानी की ओर प्रेरित करती है। अपनी कहने और दूसरे को सुनाने की प्रवृत्ति ही कथा साहित्य के जन्म का कारण बनी।

मनुष्य का जीवन कभी एक सीधी रेखा की गति से नही गुजरता। उसपर जीवन और जगत के नाना व्यापारो के घात प्रतिघात होते रहते है। जो उसकी गति को अव्यवस्थित करते रहते है। शायद सरल गति से चलने पर जीवन मे विशिष्टता भी न रह जाती, क्योकि भावो के उत्थान पतन का अभाव जीवन का नही मृत्यु का लक्षण है। लेखक भावो के अर्न्तद्वन्द्व से जीवन शक्ति और साहस का चयन करता है। साहित्यकार भावो के इस अन्त विरोध का साधनात्मक समन्वय करना जानता है क्योकि भावो के स्वाभविक परिवर्तन और गति क्रम को दिखाना कला का उच्चतम आदर्श है।

कहना न होगा कि ह्वदय मे भावो के जो भिन्न–भिन्न वृत्ति चक्र है वे सब मानव सृष्टि मे न्यूनाधिक रूप से एक ही प्रकार के उपकरणो से निर्मित है। यदि दुख दुख है और सुख सुख है तो इसमे धनी और गरीब का भेद मिट जाता है। सीता हरण पर राम का विलाप एक सामान्य पुरूष का विलाप है किसी भगवान या राजकुमार का नही। तात्पर्य यह है कि भावो की सत्ता मे व्यक्तित्व की विशेषताये प्राय समाहित हो जाती है। भाव दो प्रकार के होते है। एक सामान्य और दूसरा उद्दीप्त। सामान्य भाव इदिय जनित होते है और सीमित होते है किन्तु उद्दीप्त भाव अधिक तीव्र और व्यापक होते है। साहित्य मे रागात्मक भावो की मान्यता होती है। व्यक्ति जीवन और जगत की सयोजित प्रभाव राग से ही कहानी कला का निर्माण होता है। भाव–विज्ञान की इस अन्विति का पूर्ण निर्वाह केवल कथा साहित्य मे ही सम्भव है अन्यत्र नही। राग के आधार को जानने की इच्छा से ज्ञान तथा ज्ञान से कर्म की प्रेरणा पाता हुआ कथाकार अपने निश्चित पथ का अनुसरण करता है।

कहानीकार कवि की भॉति केवल रूप–सौन्दर्य पर मुग्ध नही होता। वह गुण सौन्दर्य का भी चित्रण करताहै। वह उपवन मे खिले पुष्प को कवि की

सौन्दर्य प्रियता और वैज्ञानिक की विवेचन प्रियता को सम्मिलित दृष्टि से देखता है। उसका क्षेत्र बहुत व्यापक होता है। यह सच है कि केवल तर्क और बुद्धि वृत्ति के अनुसार मनुष्य अपना जीवन नही चला सकता, उसके प्रत्येक कर्म के पीछे किसी न किसी प्रकार का भाव अवश्य छिपा होता है क्योकि भाव स्वत ही प्रत्यक्ष नही हो सकता बल्कि कर्म के रूप मे ही वह अपनी उपस्थिति दर्ज करता है। सम्भवत इसी कारण मनुष्य की कोई भी क्रियाकर्म तब तक नही मानी जाती जब तक उसमे इच्छा का समावेश न हो।

कहानी मे जब तक भाव से कर्म का योग नही होता तब तक वह अपनी सार्थकता की सीमा मे प्रवेश नही कर पाती।

कहानीकार को जीवन और जगत के प्रति सदैव एक सवेदनात्मक दृष्टिकोण रखना आवश्यक हो जाता है। कहानीकार स्थिती प्रेमी होता है जबकि कवि सौन्दर्य प्रेमी। जीवन मे स्वार्थ, परार्थ और परमार्थ तीनो की भिन्न–भिन्न विशेषताये है। स्वार्थ के बिना व्यक्ति का जीवन सम्भव नही है। परार्थ के बिना समाज विधान का अस्तित्व नही है और परमार्थ के अभाव मे लोक कल्याण की भावना का विकास नही हो सकता। जीवन के पोषण, वर्धन व विकास के सभी उपादान प्रत्येक व्यक्ति के पास ह्रदय वृत्तियो के रूपमे उपस्थित रहते है और कहानीकार इन वृत्तियो के सम्यक समन्वय से जीवन की वास्तविक अभि व्यक्तियों में सहयोग देताहै।

कहानी क्या है? इस प्रश्न का उत्तर क्या कहानी की परिभाषा है या और कुछ। इस पर विचार करने के लिए कुछ गणमान्य विद्वत जनो का आश्रय लेना होगा । डॉ0 श्याम सुन्दर दास ने कहानी को प्रत्यक्ष अथवा अभिनयात्मक विधा माना है। उनके विचार से आख्यायिका लेखक सदैव पाठक के सन्मुख उपस्थित होकर आमने–सामने बातें करता प्रतीत होताहै। उसकी शैली प्रत्यक्ष शैली कही जा सकती है। आख्यायिका लेखक की शैली पाठक के अंतरग मित्र की सी होती है। वह घरेलू और आपस के आदमियों की भॉति गपशप करता हैं यह व्यक्ति प्रधान शैली की कला हैं। इसी प्रसग मे डा0 श्याम सुन्दर दास ने कहानी मे विश्वसनीयता पर विशेष बल देते हुए आगे कहा हैकि "बौद्धिक वृत्ति जागरूक

रहने के कारण आख्यायिका का पाठक उसके लेखक से बहुत अधिक विवेक की अपेक्षा रखता है। लेखक को तदानुसार ही अधिक कौशल पूर्वक अपना कार्य करना पडता है। वह अपनी आख्यायिका मे कही भी अविश्वसनीय अश न आने देगा। ऐसा अश जो पाठक की कल्पना को कुछ भी खटके। वह आख्यान को अधिक स्थायी प्रभाव कारक बनाने के आशय से वस्तुओ के रूप, गुण, यश, रस, गध, स्पर्श आदि कासूक्ष्म वर्णन करेगा। ये तन्मयताये पाठके के मन मे बैठ जाती है। और उसकी स्मृति को दृढ करती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने आधुनिक कहानी की पृष्ठ भूमि मे पाश्चात्य प्रभाव की निहिती स्वीकार की है। उनकी यह धारणा है कि 'पुराने ढग की कथा–कहानियो मे कथा का प्रभाव अखड गति से एक ओर चलता रहता था जिनमे घटनाये क्रमश जुटती चली जाती थी। परन्तु यूरोप मे जो नये ढग के कथानक नॉवेल के नाम से चले और बग भाषा मे आकार उपन्यास कहलाये मराठी मे वे कादम्बरी कहनाने लगे। वे कथा के भीतर किसी भी परिस्थिति से शुरू होकर चल सकते है तथा उनमे घटनाओ की कडिया लगातार सीधी न होकर इधर–उधर और श्रृखलाओ से गुम्फित होती चलती है। घटनाओ के विन्यास की यह वक्रता या वैचित्र्य उपन्यासो और आधुनिक कहानियो की वह प्रत्यक्ष विशेषता है जो उन्हे पुराने ढग की कथा कहानियो से अलग करती है।'"

डॉ0 गुलाब राय ने आधुनिक कहानियों में काल्पनिकता के स्थान पर यथार्थता की ओरउन्मुख प्रवृत्ति की ओरसकेत किया है। उनके विचारानुसार, "आधुनिक कहानियॉ प्राय मानव केन्द्रीत होती है और उनमे राजा, मत्री और साहूकार के बेटे–बेटियो की अपेक्षा साधारण श्रेणी के लोग जिनका हमे निकटतम परिचय होता है अधिक रहते है। आधुनिक कहानियो मे पहले की अपेक्षा कौतूहल की मात्रा कम हो गयी है और नित्य नया रूप धारण करने वाली नवीनता और बुद्धिवाद को अधिक स्थान मिलता जा रहा है। हिन्दी के विशिष्ट और सुप्रसिद्ध कहानीकार मुन्शी प्रेमचन्द ने कहानी की प्रभावात्मकता पर विशेष बल दिया है उनका यह मत है कि **कहानी वह ध्रुपद की तान है जिसमें गायक महफिल शुरू होते ही अपनी सम्पूर्ण प्रतिभा दिखा देता है। एक क्षण में चित्त को इतने माधुर्य**

से परिपूरित कर देता है जितना रात भर गाना सुनने से भी नही हो सकता। आधुनिक कहानी के विभिन्न भेदो को दृष्टि मे रखते हुए प्रेमचन्द ने अपने इस मत का प्रतिपादन किया है कि "सबसे उत्तम कहानी वह होती है, जिसका आधार कोई मनोवैज्ञानिक सत्य हो।"

साधु पिता का अपने कुव्यसनी पुत्र की दशा से दुखी होना मनोवैज्ञानिक सत्य है। इस आवेश मे पिता के मनोवेगो को चित्रित करना और तदानुकुल उसके व्यवहारो को प्रदर्शित करना कहानी को आकर्षक बना सकता है। बुरा आदमी भी बिल्कुल बुरा नही होता, उसमे भी कही न कही देवता छिपा रहता है, यह मनोवैज्ञानिक सत्य है उस देवता को खोलकर दिखा देना सफल आख्यायिका का काम है।

प्रेमचन्द युग के एक अन्य विशिष्ट साहित्यकार सुदर्शन ने आधुनिक कहानी को वास्तविक अर्थ मे समाज का प्रतिबिम्ब बताया है। उनके अनुसार वर्तमान युग का लेखक बाहर का कहानी लेखक नही अन्दर का कहानी लेखक है, दुनिया को देखने वाले बहुत हो चुके अब दिल और घर को देखने वालो की आवश्यकता है। बाहर क्या हो रहा है किस तरह हो रहा है यह हर कोई देखता है परन्तु घर और ह्रदय के अन्दर क्या हो रहा है वहॉ प्रवेश करना उसे देखना और फिर जो कुछ वहॉ दिखाई दे उसे ससार के सन्मुख रखना आसान नही, यही समस्या है जिसे हल करने के लिए बीसवी सदी का कहानी लेखक साहित्य मे उतरा है।

यशपाल ने समाजपरकता पर बल दिया है उनके विचार से कहानीकार की कहानी सुनाने की इच्छा का स्रोत पाठको या श्रोताओं से सामाजिक सम्बन्ध के आवश्यकतानुकूल काल्पनिक चित्रो के द्वारा अनुभूति के और विचारो के आदान–प्रदान का अवसर पाना ही है। इस सामाजिक चित्र से कथाकार और श्रोता दोनो मे अनूभूतिगम्य आत्मीयता होना आवश्यक है।

आधुनिक कहानी का जन्म 1900 ई0 के आस–पास माना जा सकता है। साप्ताहिक और मासिक पत्र–पत्रिकाओ के प्रकाशन का आरम्भ ही इसके जन्म के कारणों में से एक है। ज्यो–ज्यों मनुष्य अपनी–अपनी परिस्थितियो मे उलझता

गया। उसके लिए मनोरजन आवश्यक होता गया साथ ही भौतिकता की दौड मे अधिक काम अधिक उलझने और समय कम इस कारण महान और विशाल साहित्य के स्थानपर छोटी–छोटी कहानियो का जन्म हुआ जो अपने छोटे से कलेवर मे कला का सम्पूर्ण आनन्द दे सके। साथ ही पत्र–पत्रिकाओ मे छपने के लिए बडे उपन्यास उपर्युक्त नही होते अत छोटी कहानियो की रचना हुई। जो आज कहानी के रूप मे हमारे समक्ष है।

(ग) हिन्दी में कथा परम्परा का विकास

ऋग्वेद काल के साहित्य मे ऋग्वेद के सवाद–सूत्रो मे यम–यमि सवाद तथा पुरूरवा उर्वशी सवाद, स्त्री पात्र प्राय अप्सराये ही है।

ब्राह्मण ग्रन्थ मे वास्तव मे वेद की टीकाये है। तथा इनकी कथाओ मे स्त्रीयो का सामाजिक स्तर भी मालूम होते है। किन्तु प्राय ब्राह्मण ग्रन्थो मे वैदिक सहिताए तथा पूजा सबन्धी ऋचाये दी गयी है। ब्राह्मण ग्रन्थो मे यज्ञ व अनुष्ठान के प्रयोजन और फल पर ही प्रकाश पडता है। यजुर्वेद के शतपथ ब्राह्मण मे आया हुआ पुरूरवा उर्वशी सवाद मनुष्य से गधर्वत्व की प्राप्ति के लिए किये जाने वाले अनुष्ठान की महत्ता प्रतिपादित करने के लिए है मत्स्योपाख्यान का प्रयोग इडा के प्रति किये गये यज्ञ का महत्व प्रदर्शित करता है। पुन शेष का आख्यान ऊषा की स्तुति की महत्ता प्रतिपादित करता है।

ब्राह्मणो मे कुछ कथानको के माध्यम से "सोम की चोरी" मे स्त्रियो की सगीत एव नृत्य के प्रति आकर्षण के कारण स्त्रियो का गधर्वों की अपेक्षा देवताओ की ओर रूझान दिखाया गया है।

पुराणो मे विभिन्न स्थानो पर नारी के लिए कथा रूप मे उपदेश निहित है। पतिव्रत धर्म का महत्व प्रदर्शित करने के लिए "शुक्ला का आख्यान" आया है। श्री विष्णु द्वारा नैमित्तिक और आभ्युदिक आदि दोनो का वर्णन किया गया है। और पत्नी–तीर्थ के प्रसग मे सती सुक्ला की कथा कही गयी है।

महाभारत काल की विभिन्न कथाओ मे स्त्री का सामाजिक स्तर प्राय· विभिन्न स्तरो पर दिखाई गयी स्त्रियों के पतिव्रत बल की महत्ता है। साथ ही अन्तर्कथाओ के माध्यम से स्त्रियो का विभिन्न धर्मों की ओर ध्यान आकर्षित किया गया है।

कुन्ती का सूर्य के पुत्र को जन्म देना और इसी भॉति पान्डु की पत्नी रहते हुए भी नियोग प्रथा से पांचो पाण्डवो का जन्म, द्रोपदी को पॉचो पाडवो की पत्नी बनाना, गाधारी का धृतराष्ट्र के नेत्रहीन होने के कारण स्वय भी नेत्रो पर पट्टी बांधकर रखना, द्रोपदी का स्वयवर, कृष्ण का रूक्मिणि का अपहरण, युधिष्ठिर का

स्वय अपनी पत्नी को दाव पर लगाना, द्यूत क्रीडा मे हारना इससे ऐसा प्रतीत होता है कि स्त्रियो का मान सम्मान पूर्व काल की अपेक्षा कम होता जा रहा था।

रामायण काल मे राम का एक पत्नी व्रत, राजा दशरथ का कैकेयी को वचन देना, कैकेयी का उस वचन के लिए तीन वरदान मे राम को वनवास, भरत को राजगद्दी, सीता का वनगमन पति के साथ जगल मे कद–मूल खाना और अतत उसी सीता को तमाम अग्निपरीक्षाओ के बावजूद धोबी द्वारा लाछन लगाने पर राम द्वारा परित्याग करना और सीता का धरती मे समा जाना ऐसे सदर्भ है जो स्त्रियो के सामाजिक उत्थान और पतन की कथा कहते है।

इसके बाद साहित्य के बढते हुए क्रम मे पालि साहित्य मे जातक कथाओ मे जैन कथाओ के माध्यम से धर्म प्रचार का मार्ग प्रशस्त किया। जातक कथाओ ने साहित्य के एक बहुत बडे भण्डार को भरा एव प्राचीन सामाजिक जीवन का उनसे बहुत कुछ पता चलता है। समाज के अनेक स्तरो, रीति–रिवाजो, धार्मिक, नैतिक और मानसिक धरातल का उनसे पर्याप्त परिचय मिलता है। इन धर्म कथाओ मे नैतिक दृष्टिकोण, कर्तव्य, अकर्तव्य का निरूपण तथा परिस्थितियो का चित्रण मिलता है। व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक चित्रण का अभाव है किन्तु उसको दृष्टि मे रखकर समाज का मूल्याकन किया गया है। व्यक्ति धर्म और समाज धर्म के निर्माण पर जोर दिया गया है। इन कथाओ का प्रधान उपयोग धर्म और राजनीति के प्रचार के लिए किया गया है। प्रत्येक जातक कथा बौद्ध सस्कृति के समर्थन के रूप मे मिलती है।

काल क्रमानुसार जातक कथाओ का स्थान परवर्ती सस्कृत कथाओ के पहले आता है ये कहानियॅा ईसा पूर्व पॅाचवी शताब्दी से भी पहले से लेकर ईसा के बाद की प्रथम या द्वितीय शताब्दी तक रची गयी होगी। जातक शब्द का अर्थ होता है – जन्म सम्बन्धी।

जातक और पचतत्र की कहानियों ने समूचे सभ्य जगत को प्रभावित किया है। गुणाढ्य की पैशाची प्राकृत मे लिखी हुई सुप्रसिद्ध 'वृहत–कथा' अपने ढग का अनोखा साहित्य है।

जिस प्रकार रामायण और महाभारत ने भारत वर्ष के काव्य और नाटको को प्रभावित किया उसी प्रकार वृहत कथा ने भी इस देश के कवियो को लौकिक रस के कथानक दिये है। परवर्ती काल मे केवल पद्य ही नही अपितु सस्कृत का कथा साहित्य भी बहुत समृद्ध रहा। कथा, आख्यायिका, चपू इत्यादि काव्य रूपो से भारतीय साहित्य भरा पडा है। मध्यकाल मे पौराणिक और लौकिक दोनो प्रकार का जीवन चित्रित किया गया है। मुस्लिम काल की कथा परम्परा मे हिन्दू तथा मुस्लिम दोनों प्रकार की सस्कृति का मिलन हुआ प्रभाव दिखाई पडता है। इन कहानियो मे साहित्यिक एव मौखिक दोनो प्रकार की परम्परा की कहानियॉ लिखी गई। इस काल की कहानियो मे घटित घटनाए उपदेशात्मक और मनोरजनात्मक दोनो प्रकार की है। इनमे पात्रो से अधिक घटनाओ परबल दिया गया है। जिनमे तिलस्म तथा जासूसी प्रवृत्ति को स्थान मिला है। भारतेन्दु युग मे अनेक रचनाकारो ने कहानी के भिन्न–भिन्न रूप प्रस्तुत किए। इस काल की पत्र–पत्रिकाओं मे हिन्दी गद्य की जिन नवीन शैलियो अथवा रचना के लघु रूपो का जनम हो रहा था। उन्होने आगे चल कर कहानी का आकार ग्रहण किया। इस काल मे हीरामन तोते की कहानी, उदयमन की कथा, विक्रमादित्य तथा भोज की कहानियॉ, बेताल पच्चीसी आदि मौखिक परम्परा का समर्थन करती है। काशी नागरी प्रचारिणी सभा के पुस्तकालय मे इस काल की मौखिक परम्परा की जिन कहानियो का सग्रह है उनके नाम इस प्रकार है। – *'बीरबल अकबर का उपहास, चतुर चचल देवरानी जेठानी की कहानी, लडको की कहानी, इसाफ सग्रह, 'कहानी टका कमानी', 'किस्सा शाहरूम', 'छबीली भटियारी', 'निलाह दे की पुस्तक', 'शीरी फरहार', 'सालिगा सदा ब्रज का वृत्तान्त', 'ठगलीला', 'किस्सा गुलवकावली', 'मर्द औरत का किस्सा'। इस काल की पठित परम्परा के कहानीकारो लल्लूलाल, इशा अल्लाखॉ, सदल मिश्र, जटमल, शिव प्रसाद सितारे हिन्द,भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, गौरी दत्त शर्मा, सूर्य नारायणसिह, मुंशीदेवी प्रसाद, मुशी शादी लाल, हरिकृष्ण जौहर, गणेशीलाल, गोपाल राम गहमरी,* आदि।

मध्य काल के समय मे हिन्दी गद्य की पहली कहानी रानी केतकी की कहानी ईशा अल्ला खॉ के द्वारा लिखित है। रानी केतकी और उदयभान के प्रथम मिलन के समय रानी केतकी का उदयभान के प्रति जो व्यवहार है वह नारी प्रकृति का सुन्दरतम उदाहरण है।

"वही झूले वाली लाल जोडा पहने हुए जिसको सब रानी केतकी कहती थी उसके भी जी में चाह में घर किया पर कहने सुनने को बहुत नाह नुह की और कहा इस लग चलने को भला क्या कहते है। तक न धक जो तुम झट से टहक पडे। यह न जाना यहॉ रंडिया झूल रही है। अजीजा तुम इस रूप के साथ इस बखत चले आ रहे हो। ठडे–ठडे चले जाओ।"

उक्त अश से यह स्पष्ट होता है कि ईशा अल्ला खॉ ने यह अनुभव किया कि नारी किसी के ह्रदय से चाहते हुए भी अपनी चाहत को ओठो तक नही लाती बल्कि यथा सभव छुपाती है तभी तो उदयभान ने जब अपना परिचय दिया तो वह बेरूखी से कहती है।

"हॉ, जी बोलियॉ ठोलियॉ न मारो और इन को कह दो जहॉ जी चाहे पडे रहे और जो कुछ खाने को मॉगे इन्हे पहुँचा दो" परन्तु वह मन ही मन व्याकुल है और अपने मन के भाव को वह मदनभान पर प्रकट करती है, "अरी वो तुने कुछ सुना है? मेरा जी उस पर आ गया है और किसी गैर से थम नही सकता। तूं सब मेंरे भेदों को जानती है अब होनी जो हो सो हो सिर रहता रहे जाता जाय मैं उसके पास जाती हूँ तू मेरे साथ चल पर तेरे पॉव पकडती हूँ कोई सुनने न पाये। अरी मेरा जोडा मेरे और उसके बनाने वाले ने मिला दिया।"

उदयभान के केतकी के भाग चलने के प्रस्ताव के उत्तर मे –

"ऐ मेरे जी के गाहक जो तू मुझे बोटी–बोटी करके चील कौओं के दे डाले तो भी मेरी ऑखों चैन और कलेजे की सुख हो। पर यह बात चलने की अच्छी नहीं हैं। इसको एक बाप दादों की चिट लग जाती है।"

यह भारतीय नारी के चारित्रिक आदर्श की परिचायक है। किस्सा तोता–मैना मे मुस्लिम सस्कृति तथा फारसी प्रेमाख्यान काव्यो की परम्परा से आये है।

कथा का आरम्भ इस प्रकार होता है कि एक पेड पर एक मैना रहती थी। उसी पेड पर मेघो से डरा हुआ एक तोता रात्रि विश्राम के लिए आ जाता है। मैना कहती है–

"न हर जन जनस्ती न हर मर्द मर्द

खुदा पंज अंगुस्त, यमसां न कर्द"[1]

अर्थात मैना कहती है कि मर्द विश्वासघाती होते है। इसलिए वह वहॉ से भाग जाय। इस पर तोता कहता है कि यो तो उसने स्त्रियो के विश्वासघात की अनेक दास्तान सुनी है परन्तु सभी स्त्री पुरूष एक से नही होते। तोता और मैना क्रमश स्त्री और पुरूष के बेवफाई की कहानियॉ एक दूसरे को सुनाते है। अन्त मे एक हस यह कहकर उनके झगडे का निपटारा करवाता है कि ससार मे सभी स्त्री पुरूष बेवफा नही होते और अत मे दोनो का विवाह कर किस्सा समाप्त हो जाता है।

इस किस्से मे तोता और मैना क्रमश पुरूष और स्त्री प्रतीको के रूप मे आये है। उनका आपसी कलह आदिकाल से चले आ रहे नोक झोक का प्रतीक है। यहॉ हमे इससे यह पता चलता है कि स्त्री अपने अधिकार के प्रति सचेत हो चली है। वह मैना के रूप मे पुरूष के कार्यो की मीमासा करनेतथा उसके दोषो को बतलाने मे नही हिचकती। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि जिस् समय यह किस्सा लिखा गया उस समय नारी मे अपने अधिकारो के प्रति चेतना आने लगी थी और पुरूष द्वारा किये गये अत्याचारो के प्रति विद्रोह करने को वह उद्यत होने लगी थी। इस किस्से मे रसास्वाद पूर्ण रूप से हो जाता है। इसमे फारसी के प्रेमाख्यानो की वह प्रेम परम्परा दिखती है जिसमे प्रथम दर्शन मे ही नायक–नायिका एक दूसरे से प्रेम कर बैठते है।

इस परम्परा के स्त्री प्राय देवी, वेश्या, राज कुमारी रानी, भठिहारिन मेहतर की लडकी आदिहै। निम्न वर्ग के स्त्री पात्र का समावेश केवल उनके दैहिक सौन्दर्य के कारण हुआ है।

---

[1] पडित रगीला– किस्सा तोता मैना–पृ0 7

किस्सा साढे तीन—यार—इसमे भी लेखक रतनकुमारी और घनश्याम सिह के माध्यम से स्त्री और पुरूष के बेवफाई के किस्से सुनाता है। और किस्से के अन्त मे रतन कुमारी अपनी पराजय स्वीकार करके घनश्याम से विवाह कर लेती है।

इस किस्से के सभी स्त्री पात्र प्राय राजकुमारी, परी, राजकुमारी की सखियॉ, मालिन आदि है। जनाना बाग की मालिन प्रेमी और प्रेमिका का मिलन कराने का प्रमुख माध्यम है। जनाना बाग और उसमे किसी भी पुरूष का न जा सकना उस समय की पर्दा प्रथा का द्योतक है। उस समय हिन्दू—मुसलमान का परस्पर विवाह अच्छा नही माना जाता था। मोहन सिह के पिता उसके राहत—जान के साथ विवाह करने को पसन्द नही करते और उसका मित्र शिवचन्द्र भी इसे बुरा मानता है उसक समय प्रचलित बहु—विवाह प्रथा भी दिखलाई पडती है।

मोहन सिह केसरी नामक जादूगरनी से विवाह करके फिर राहत जान से भी विवाह कर लेता है।

वर्णनो मे जगल, बाग—बगीचे, राजसी वैभव का वर्णन अधिक है देवो और परियो के सम्बध मे अलौकिक तत्त्व आया है। वो हवा मे उड सकते है। स्थान—स्थान पर राजपूती शान तथा क्षत्रित्व का घमड भी दिखता है। हसीना को गर्व है कि वह क्षत्रिय कन्या है फकीर द्वारा परेशान करने पर वह ऐसा कहती है। बीच—बीच मे स्वप्न मे ही भविष्य का निर्देश हो जाता है। मोहन सिह के ब्राह्मण स्वप्न मे कहता है कि राहत जान से उसका भला नही होगा।

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य किस्से— —'किस्सा शाहरूम', 'किस्सा गुलाब केवडा', 'किस्सा चम्पा चमेली,' 'किस्सा मर्द औरत का' तथा 'किस्सा छबीली भटियारी' — भी मिलते है। इनमे से प्रथम तीन पद्य में लिखे गये है शेष की भाषा गद्य है। गद्य के बीच—बीच मे पद्य भी आता रहता है। इन सब मे एक न एक प्रेम कथा चलती है। ये किस्से प्रसिद्ध किसी सामाजिक समस्या को व्यगय पूर्ण शैली मे अभिव्यक्त करते है।

इसके अतिरिक्त कुछ कहानियाँ लल्लू लाल और सदल मिश्र के द्वारा भी लिखी गई। ऐतिहासिकता के नाम पर लल्लू लाल का नाम इशा अल्ला खॉ की 'रानी केतकी की कहानी' के पूर्व आता है किन्तु मौलिक होने के कारण इशा की रानी केतकी को उन्नीसवी शताब्दी की कहानियो मे सर्वप्रथम माना जाता है। लल्लू लाल ने सस्कृत की कहानियो का हिन्दी अनुवाद उपस्थित किए है। 'सिहासन बत्तीसी', 'बेताल पच्चीसी', 'राजनीति, माधोनल का नाम विशेष है।

सिंहासन बत्तीसी की कहानियो मे घटनाओ का कल्पना प्रधान तथा रोमाचकारी रूप प्रस्तुत किया गया है। इनके प्रति पाठको का कौतूहल बढता ही जाता है।

बेताल पच्चीसी मे 25 कहानिया है। ये अमानुषी, अतिमानुषी, तिलस्म अथवा जादू की घटनाओ वाली है। इनमे मुर्दों को पुनर्जीवित करने की कला का वर्णन है। इस दृष्टि से ये कहानियाँ पूर्णतया अलौकिक है। इनकी रचना का उद्देश्य मनोरंजन है तथा ये सस्कृत कहानियो का अनुवाद है। इसमे सामाजिक समस्याओ की व्याख्या और उनके निदान उपस्थित किए गये है।

सदल मिश्र की कहानियो मे नासिकेतोपाख्यान (1803) की कथा पौराणिक है। घटना प्रधान कानी है इसकी विषयवस्तु मे दो कथाएँ, एक चन्द्रावती की तथा दूसरी नसिकेत की बराबर चलती है। इसका वातावरण प्रेम व भक्तिमय है। यह उपदेशात्मक कहानी है तथा इसका उद्देश्य है – 'पिता की आज्ञा का पालन करना चाहिए।'

संस्कृत निष्ठ पक्ष के अतिरिक्त राजा शिव प्रसाद की कहानियाँ, अरबी –फारसी शब्दो के साथ ठेठ हिन्दी का पक्ष लेकर चली है। शिक्षा विभाग के इस्पेक्टर राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द को अनेक हिन्दी पुस्तको के प्रकाशन का श्रेय है। इन्होने शिक्षा विभाग का पाठ्यक्रम निर्धारित करते समय पठनीय सामग्री के अतर्गत सन् 1852 व 1862 के मध्य कुछ कहानी पुस्तको की रचना की। राजा भोज का सपना , वीरसिह का वृत्तान्त, आलसियो का कोडा, सेटफोर्ड और मरटन तथा वामभन रजन लडको की कहानी।, अतिम कहानी की रचना 1876 ई0 मे बच्चो के उपदेश देने के लिए की गई। जैसे– प्रत्येक वस्तु को उसकी जगह पर रखना चाहिए। जगह से बेजगह होने से बडी कवाहत निकलती है (विलियम आलिस की कहानी) 'किसी की रखी हुई चीज न छूनी

(नैशेरवा के लडके की कहानी) उठने–बैठने और रास्ते के चलने मे 'खबरदारी बरतना' जानवरो को कभी न छेडना (सिकन्दर ओर उसका उस्ताद अरस्तू) 'आलस्य' कभी न करना चाहिए। इन कहानियो मे उर्दू मिश्रित भाषा का प्रयोग हुआ है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की कहानियॉ– भारतेन्दु बाबू ने साहित्य के प्रत्येक अगो का निरूपण और विकास करने मे अपना योगदान दिया है। इन्होने एक कहानी 'कुछ आप बीती कुछ जग बीती' तथा 'एक अद्भूत अपूर्व स्वप्न' की रचना थी । पहली कहानी मे बीच–बीच मे उर्दू शब्दो का प्रयोग हुआ है। इसके अतिरिक्त 'हमीर हठ' राजसिह, मदालय सीलवती, सुलोचना, आदि इनकी अन्य कहानियॉ है।

पडित गौरी दत्त शर्मा– ने देवनागरी की हिमायत की और इसी उद्देश्य से कुछ कहानियॉ भी लिखी इनमे 'कहानी टका कमानी' तथा 'देवरानी जेठानी की कहानी' प्रसिद्ध है। 'कहानी टका कमानी' को लेखक ने केवल मनोरजन के लिए नही लिखा अपितु तत्तकालीन चाल–ढाल और बोलचाल की भाषा का उदाहरण उपस्थित करना भी उद्देश्य था।

"इस कहानी मे पहिले समय की स्त्री ने कैसे–कैसे बढ कर काम किये ह कि आजकल के पुरूषों से होने कठिन है – यह कहानी मुझसे एक दिल्ली वाले ने कही थी। "[1]

"एक स्त्री अपने पुरूषार्थ से धनी बन जाती है" यह इस कहानी की विषय वस्तु है। इसमे साहित्यिक परम्परा के स्थान पर मौखिक परम्परा का अधिक पालन हुआ है।

दूसरी कहानी देवरानी जेठानी की भूमिका मे इन्होने लिखा है–

"इस पुस्तक मे मैने स्त्रियो ही की बोल–चाल लिखी है और इस पुस्तक मे ये दर्शा दिया है, दिखा दिया है कि पढी हुई स्त्री जब एक काम को करती है उससे क्या लाभ होता है और कुपढ स्त्री जब उसी काम का`करती है उससे क्या हानि होती है।" इसी कहानी के अत मे लिखते है – **"जो स्त्रियाँ इसको पढेगी या ध्यान देकर सुनेंगी वह सुशील होकर अपनी सतान का पालन–पोषण अच्छी रीति से करेंगी और कुरीतियों से बचकर गृहस्थ के प्रबन्ध मे उनकी रूचि होगी पति की सेवा और विद्या की तरफ उनका स्नेह बढेगा और ये ही उनके सुख भोगों का कारण होगा।"**[2]

[1] कहानी टका कमानी– देवनागरी गजट मेरठ (1888ई0)
[2] देवरानी जेठानी की कहानी– हरदेव सहाय ज्ञान सागर प्रेस मेरठ

(घ) समाजिक सुधारों के उपरान्त स्त्री की सामाजिक स्थिति

किसी युग विशेष एव वर्ग विशेष के व्यक्तियो के जीवन के विभिन्न पहलू को अभिव्यक्त करने की क्षमता साहित्य मे होती है। वह किसी समाज को नवीन और अतीत की तुलना के द्वारा यह निर्देशित करता है कि हम कल कहॉ थे और आज कहॉ आ पहुँचे। हमारी प्रगति क्या है? साहित्य और समाज का घनिष्ठ सम्बध है और दोनो का ही सृजन मनुष्य के द्वारा हुआ है। दोनो के निर्माण का एक ही स्त्रोत होने के कारण ये दोनो एक दूसरे पर पूर्णतया आश्रित है। "साहित्य जीवन और जगत के गयात्मक सौन्दर्य की वह भावमयी झाकी है जिसके सहारे नित्य नये आनन्द और कल्याण का विधान होता है।" साहित्य मे युग विशेष के मनुष्य प्रतिबिम्बित होते है। साहित्य मे समाज के प्रत्येक वर्ग के लोगो का शैक्षिक, बौद्धिक, मानसिक, आर्थिक और इन सभी के समन्वय से बनने वाले सामाजिक जीवन की आलोचना एव व्याख्या होती है।

किसी विकास की परम्परा को क्रम से देखनेपर यह किसी एक घटना विशेष का प्रभाव नही दिखता प्रत्युत यह एक निरन्तर चलने वाली विभिन्न सामाजिक घटनाओ का एक श्रृखलाबद्ध स्वरूप होता है। विकास की इस परम्परा को निरन्तर हम एक परिवर्तित व्यवस्था के रूप मे देखे तो यह विदित होता है कि पिछली परम्पराऐ तथा आदर्श सदैव नये आकार लेते रहते है। एक परिवर्तित पुरातन परिपाटी जब अपना रूप बदल कर नवीन दृष्टिकोणो से निर्मित धरातल का निर्माण करती है तब नये युग का सूत्रपात होता है।

यदि हम भारतीय समाज मे होने वाले परिवर्तनो की श्रखला को राजनीति से जोड कर देखे तो हम पाते है कि ईस्ट इडिया कम्पनी का भारत आगमन और मुगल सस्कृति का शनै–शनै पतन एक नवीन आचार विचार से अभिप्रेरित नये युग का आवाहन कर रहा था। एक सस्कृति का दूसरी सस्कृति से मिलना एक मिलीजुली नयी संस्कृति का निर्माण यह सब मिलकर एक समाज का ढॉचा बनता है। इग्लैण्ड से आने वाले व्यापारी जिन व्यापारिक उद्देश्यो से भारत आये वह तो सर्वविदित है किन्तु उनके आने से भारतीय समाज मे जिस प्रकार के परिवर्तन हुए वह रूई मे लगी आग के समान धीरे–धीरे अदर आग सुलगती रही

किन्तु उसकी लपट किसी को दिखाई नही दी। अत यह कहना कि अग्रेजो के आगमन से भारतीय सामाजिक व्यवस्था नष्ट हुई यह उचित नही वास्तव मे भारतीय समाज को अपने आप को स्वय नये सिरे से देखने समझने की आवश्यकता थी। जर्जर हो चुकी इस व्यवस्था को अग्रेजो ने एक नया आलम्बन दिया। सन् 1600 मे रानी एलिजाबेथ से भारत मे व्यापार करने की अनुमति मॉगते समय लन्दन के उन व्यापारियो ने स्वप्न मे भी यह न सोचा था कि वे भारत मे व्यापार करने की अनुमति मॉगकर भारत मे ब्रिटिश सम्राज्य की नीव डाल रहे है तथा भारतीय राजनीति एव शासन मे सदियो पुराना पुरूष वर्ग का वर्चस्व अब उनके हाथो से फिसलकर सात समन्दर पार बैठी ब्रिटिश साम्राज्ञी के हाथो मे जा रहा था। जिसका एक प्रभाव यह भी पडा कि भारतीय समाज जो अग्रजो के साथ एक नये सम्बन्ध का सूत्रपात करने जा रहा था अपने समाज की तुलना ब्रिटिश समाज से करने लगा। पुरानी रूढियो के अनुसार समुद्र पार जाना गलत था और वहॉ से वापस आने पर समाज मे स्थान प्राप्त करने के लिए शुद्धि सस्कार होता था। अठारहवी शताब्दी के अन्त मे राजा राम मोहन राय ने एक नवीन धर्म के द्वारा मृत समाज को सजीवनी देने का कार्य किया। राम मोहन राय तथा दयानन्द सरस्वती इन दोनो ने ही हिन्दू–धर्म की ईसाई धर्म के आक्रमणो से रक्षा की और साथ ही साथ समाज मे व्याप्त कुरीतियो को दूर करने का अथक प्रयास किया। राम मोहन राय का कार्य समाजिक एव धार्मिक दोनो क्षेत्रो मे महत्वपूर्ण है। वे हिन्दू धर्म को मुख्यत मूर्तिपूजा तथा बलि प्रथा दोनो के दोषो से मुक्त कराना चाहते थे। सन् 1827 मे उन्होने ब्रिटिश इडियन यूनिटेरियल एसोशियेशन की स्थापना की परन्तु इसके पूर्णतया पाश्चात्य दृष्टिकोण से वे कदापि सतुष्ट नही थे। और अगले ही वर्ष 1828 ई0 मे उन्होने ब्रह्म–समाज की स्थापना की जिसमे उन्होने इस्लाम के एकेश्वरवाद तथा बाइबिल की नैतिकता उपनिषदो के दर्शन का समन्वय किया और इसे ही भविष्य के विश्वधर्म का स्वरूप दिया। उन्नीसवी शताब्दी मे स्त्रियो की सामाजिक दशा निकृष्टतम थी और भारतीय स्त्री दया की पात्र बन कर रह गयी थी। बाल्यावस्था से लेकर वृद्धावस्था तक उसे पुरूष की आश्रिता के रूप मे रहना पडता था।

उच्च–कुल मे विवाह करने की लालसा मे माता–पिता अपनी कम आयु की बालिकाओ का विवाह वृद्धो के सग कर देते थे। जिसके कारण वे अल्प आयु मे ही विधवा हो जाती थी। उन्हे अनिच्छापूर्वक सती प्रथा का पालन करवाते हुए समाज मे ढोल–नगाडो के स्वरो बीच उसकी वेदना और रूदन को दबाकर उसके पति के शव के साथ नृशसता पूर्वक जीवित ही जला देते थे। शिक्षा का पठन–पाठन उसके लिए वर्जित ही था। पर्दे की प्रथा के भेट स्वरूप प्राय स्त्रियॉ क्षय रोग की शिकार हो जाती थी। इसी सामाजिक कुरितियो को ध्यान मे रखते हुए राजा राममोहन राय ने सन् 1829 मे सती प्रथा उन्मूलन के लिए एक कानून पारित करवाया। ब्रिस्टिल मे जल्दी ही उनकी मृत्यू हो जाने के कारण पडित रामचन्द्र विद्या निवास ने ब्रह्म समाज का कार्य सम्हाला, और सन्1843 मे देवेन्द्र नाथ ठाकुर को इसमे दीक्षित किया। 1839 ई0 मे तत्व–बोधी समाज की स्थापना हुई। दस सदस्यो से प्रारम्भ यह सभा एक पत्रिका निकालती थी जिसका नाम तत्वबोधिनी था। ईश्वर चन्द्र विद्यासागर तथा राजेन्द्र लाल मिश्र निरन्तर इस पत्रिका मे लिखा करते थे। 1847 ई0 मे मैक्समूलर ने ऋग्वेद का अध्ययन करके इसका अनुवाद निकालना आरम्भ किया। जिसके परिणामस्वरूप भारतियो मे आत्मगौरव एव आत्मविश्वास की भावना बलवती हुई। भारतीय अपने गौरवमय अतीत तथा अपनी प्राचीन सस्कृति एव साहित्य पर अभिमान करने लगे। बहुत अशो मे भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के पश्चात भारत की पुनस्थापना हुई चाहे उसे सामाजिक रूप मे देखे अथवा राजनैतिक रूप मे।

बाल वृद्ध तथा अनमेल विवाह के कारण विधवाओ की सख्या बढती ही जा रही थी। परन्तु पुनर्विवाह के द्वारा जीवन–यापन की सुविधाये न होने के कारण ये विधवा स्त्रियॉ विधर्मियो के चगुल मे फसती जा रही थी और शारिरिक तथा मानसिक रूप से इनका शोषण होता था। अनमेल और वृद्ध विवाह के साथ ही दहेज प्रथा भी अपने वेग को पकड रही थी। सीमित क्षेत्रो मे अच्छा वर न मिलने के कारण कन्या के अभिभावको को दहेज स्वरूप मुँह मॉगा धन देने को बाध्य होना पडता था। अत ईश्वर चन्द विद्यासागर ने समाज के इसी भ्रष्टाचार को कम करने की नियति से सन् 1856 मे विधवा विवाह का जायज कानून

सरकार से पास करवाया। विद्यासागर ने पाराशर सहिता से तथ्य उपस्थिति करके पुनर्विवाह के स्थापना के तर्क की पुष्टि की। उपर्युक्त सहिता के अनुसार नारी पति के मृत्यु के उपरान्त, उसके सन्यासी हो जाने पर, नपुसक, रोगी अथवा पागल हो जाने पर पुनर्विवाह कर सकती है। इसके अतिरिक्त अन्य धर्म ग्रन्थो, पुराणो, श्रुतिया से भी उद्धवरण देकर शास्त्र सम्मत बताया और 1853 ई0 मे विधवा पुनर्विवाह नामक एक पुस्तक भी प्रकाशित हुई।

किसी भी देश के सामाजिक स्थिति के खराब होने की दशा मे हमे यह स्वत ही विदित हो जाता है कि इस देश का पतन निश्चित है। यही कारण है कि समाज सुधारक राष्ट्र के निर्माण के लिए समाज सुधार प्रथम आवश्यक मानते है। हमारा भारतीय समाज भी निरतर अवनति को प्राप्त हो रहा था। स्त्रियो की दशा पशु के समान होती जा रही थी और उनमे शारिरिक, मानसिक और बौद्धिक कोई भी शक्ति शेष नही रह गयी थी। शक्ति स्वरूप नारी पूर्णत पुरूष पर आश्रित थी और पुरूषो के स्वार्थ ने उसे बदिनी के रूप मे जीवन जीने को मजबूर कर दिया था। और साथ ही साथ इस जीवन पद्धति को धर्म का चोला पहना दिया था। कहते है अन्धकार जितना ही गहरा हो सबेरा उतना ही सुन्दर होता है अत स्त्रियो के जीवन का अन्धकार दूर करने के लिए अनेक समाज सुधारक सूर्य के समान प्रकाश लेकर उदित हुए। **'का चुप साधि रहा बलवाना'** की भॉति स्त्रियो को भी किसी सलाहकार की जरूरत थी। यही कारण था कि स्त्रियॉ अपनी अवमानना करते समाज को मूक होकर देखती रही। 20वी शताब्दी की पश्चिमी सभ्यता एव शिक्षा के प्रभाव के कारण वैयक्तिक्ता, मानवतावाद स्वच्छदतावाद आदि की प्रवृत्तियो के साथ ससार जीवन प्रेम, धर्म, प्रकृति, राष्ट्र तथा व्यक्ति आदि के सम्बन्ध मे जिन नवीन दृष्टिकोणो का विकास हुआ उन्होने भी स्त्रियों के लिए प्रेरणा का कार्य किया। वैदिक सस्कृति के पतन के साथ स्त्रियो का सामाजिक पतन होता गया। और इस पतन गति को विराम बीसवी शताब्दी के पूर्वाद्ध मे आकर मिला। इसी कारण स्त्रियो के दृष्टिकोण मे परिवर्तन आया। इसी परिवर्तन ने हिन्दी साहित्य मे प्राचीन रूढिगत व्यवस्था के प्रति विद्रोह मुखरित किया। प्राचीन परम्परा पर स्थापित आदर्श नवीन संस्कृति के

आलोक मे धूमिल पड गये थे। भारतीयता के महान पोषक समाज सुधारको के द्वारा सामाजिक उत्थान की भावना को बल मिला। इस प्रकार इन दोनो वर्ग के विचारको एव सुधारको द्वारा वर्तमान का सगठित निर्माण होने लगा था। सामाजिक क्षेत्र मे सुधार और उन्नयन की यह भावना तत्कालीन हिन्दी साहित्यकारो की लेखनी से भी उद्भूत होकर जन साधारण के मस्तिष्क मे नवीन विचारो के प्रति आकर्षण का भाव उत्पन्न कर रही थी। किसी भी देश एव काल मे साहित्य और समाज आपस मे एक दूसरे से इस प्रकार हिले मिले होते है कि उन्हे अलग–अलग करना अत्यत मुश्किल हो जाता है। यही कारण है कि कवि या साहित्यकार को सर्वोच्च समाजशास्त्री माना जाता है। और हर काल मे कवि को क्रान्ति का अग्रदूत कहा जाता है। उन्नीसवी शताब्दी के पूर्वाद्ध तक हिन्दी की साहित्यिक सम्पत्ति काव्य ही थी। उनकी स्थिति एक ऐसे जलाशय के समान थी। जिसका जल दूषित और मटमैला हो चुका था। अर्थात काव्य का विषय विलास भवनो की नायिकाओ के श्रृगार और उनकी कुठित भावनाओ को व्यक्त करने का साधन मात्र रह गया था। यदा कदा भक्ति के प्रभाव मे कुछ कवि कृष्ण की बासुरी और राधा के प्रेम की भावना की भी सुध ले लेते थे।

आचार्य राम चन्द्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य के इतिहास के ग्यारहवे सस्करण मे भारतेन्दु के लिए कहा है कि वे पितृ अर्जित वैष्णव सस्कारो को लेकर साहित्य क्षेत्र मे अवतरित हुए थे। मध्यकाल से चली आ रही रीतिकालीन कविता की उन पर छाया पडी थी और साथ ही साथ नव युग की नव चेतना की पुकार भी उनके कर्ण कुहरो मे गुज रही थी। इसीलिए भारतेन्दु साहित्य इन विविध धाराओ की सगम स्थली बन पडा है। वे अपनी सर्वतोन्मुखी प्रतिभा के बल से एक ओर वे पद्यकार और द्विज देव की परम्परा मे दिखलाई पडते थे तो दूसरी ओर बग देश के माइकल और हेमचन्द की श्रेणी मे। एक ओर तो राधा–कृष्ण की भक्ति मे झूमते हुए नये भक्तमाल गॅूजते दिखाई देते है तो दूसरी ओर मंदिर के अधिकारी टीकाधारी भक्तो के चरित्र की हसी उडाते स्त्री शिक्षा, समाज सुधार आदि पर व्याख्यान देते पाये जाते थे। प्राचीन और नवीन का यही सुन्दर सामजस्य भारतेन्दु की कला का विशेष माधुर्य है।

सभी सुधार आन्दोलनो ने लगभग एक से ही सुधारो का आग्रह किया है। स्त्री शिक्षा का समर्थन, बाल–विवाह और बहु–विवाह का विरोध अन्तर्जतीय विवाह की अनुमति, मद्य निषेध, शिक्षा प्रचार आदि सभी सुधार आर्य समाज ने भी अपनाये है और अन्य सुधार आन्दोलनो ने भी। शुद्धि आन्दोलन तथा अहिसा अवश्य आर्य समाज की विशेषताये है। आर्य समाज की स्थापना (सन् 1875) से पूर्व ही भारतेन्दु की रचना का प्रारम्भ हो गया था। और अपनी बगाल यात्रा (सन् 1853) मे भारतेन्दु बगला साहित्य से प्रभावित हुए थे। इसलिए बह्म–समाज आन्दोलन का प्रभाव प्रमुख है जबकि ब्रह्म समाज का गौण और अन्य आन्दोलनो का लगभग नगण्य।

(ङ) भारतेन्दु कालीन साहित्य में स्त्री की समाजिक स्थिती :—

भारतेन्दु के समकालीन सभी साहित्यकार भारतेन्दु को अपना पथ—प्रदर्शक मान कर चले। इसी कारण उनके द्वारा भी रीतिकालीन परम्परा का निर्वाह तथा समाज के हित मे साहित्य सृजन का कार्य किया। यह काल वास्तव मे पूर्वी तथा पश्चिमी सभ्यताओ का सघात काल है। उस काल के समाज सुधारको, विचारको एव साहित्य सेवियो के सामने प्रमुख रूप से समाज—सुधार की चिन्ता विद्यमान थी। काव्य सृजन के क्षेत्र मे भले ही भारतेन्दु ने———————

> 'धुंधकारे सटकारे विधुरे सुधरे केस एडी ले लाम्बे
> अति सीमित नव जलधर के भेस' [1]

कहकर रीतिकालीन नव शिखर परम्परा का निर्वाह किया हो चाहे—'**छरी सी छली सी जड़ भई सी जकी सीधर हारी सी बिकी सी तो सब ही धरी रहे।**'[2] द्वारा नायिका के मासल प्रेम की उष्णता एव विरह दशाओ को प्रदर्शित किया हो और चाहे—

सखि मेरे सैंया नही आये, बीते गई सारी रात,
दीपक ज्योति मलिन भई सजनी होय भयो प्रभात[3]

और———————

"एक सांझ मै थी अकेली गलियो आती
लिए अंचल नीचे धर हित दिया बाती
आए इतने में सखि मेरे बाल संधाति
उन दीप बुझाय लगाय लई मोहिं छाती
मैं औचक रह गई, कियों जोई मनमानी
पिय प्यारे की मैं कह लों कहौं कहानी"[4]

---

[1] भारतेन्दू ग्रन्थावली— भाग—1, पृ0 8
[2] भारतेन्दू ग्रन्थावली—भाग—1, पृ0 457
[3] भारतेन्दू ग्रन्थावली—भाग—2, पृ0 47
[4] भारतेन्दू ग्रन्थावली—भाग—3, पृ0 196 (प्रेम तरंग)

सुनाकर लौकिक भाव भूमि पर उतर आये हो, परन्तु फिर भी नवीन सामाजिक चेतना एव जागृति से प्रभावित उनके स्वर जहॉ भी उच्चारित हुए है उनमे जागरण का शखनाद है। आबद्ध व्यक्तित्व सामाजिको के लिए प्रगति का नवीन सदेश है और नवीन मान्यताओ को ग्रहण करने की प्रभावशालिनी पुकार है। रीतिकालीन कवियो की तरह उनका साहित्य आश्रय दाताओ की इच्छाओ का गुलाम नही था और न ही रस छन्द की सीमा मे उस हद तक बधा था। उन्होने साहित्य मे जीवन की पूर्ण अभिव्यक्ति को स्थान दिया और साहित्य तथा जीवन का सबध स्थापित कर उनके अन्तर को समाप्त कर दिया।

प्राचीन और नवीन के इस काल मे सामाजिक उद्बोधन के क्षेत्र मे जिन नवीन विचार–धाराओ का जन्म हुआ उनमे नारी की भावना प्रमुख थी। रीतिकालीन कवियो ने जिस नारी मे मासलता हास परिहास और उत्तेजना ही देखा इन साहित्यकारो ने उसे प्रणय की लौकिक भूमि से ऊपर उठाकर उसे सामाजिक स्थान दिलवाया।

आर्य समाज तथा ब्रह्म समाज के सुधार कार्यों तथा बगाली भाषा के प्रगतिशील साहित्य से हिन्दी साहित्यकार भी प्रभावित हुआ और उन्होने वाणी के माध्यम से नारी स्थिती के उन्नयन मे योग दिया। इस काल के नारी चित्रण के अनेक रूप साहित्य मे दृष्टिगत होते है।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तथा बद्रीनारायण प्रेमधन वे प्रमुख साहित्यकार है जिनमे वैष्णव धर्म से प्रभावित होने के कारण राधा कृष्ण भक्ति की पूर्ण निष्ठा विद्यमान है। इस युगल के आगे उनका मस्तक सदैव झुका रहता है। "भक्त सर्वस्व" इनकी इस भावना का ही प्रतीक है। अपनी इस रचना की प्रस्तावना मे स्वय उन्होने इस बात की पुष्टि की है।

भक्ति भावना के इतने चरम उत्कर्ष के साथ–साथ उन्होने प्रेम मलिकामे अपने आराध्य का रीतिकारो के नायक और नायिकाओ की कोटि मे लाकर खडा कर दिया है। 'प्रेम–मलिका' की राधा अपने नेत्रो को अपने वश मे नही रख पाती एवं लोकलाज की सीमाओ की मर्यादा का पालन करते हुए भी कृष्ण की ओर खिच ही जाती है। इस लाज के बन्धन को तोडकर जहॉ आलम की नायिका यह कहती हुई दिखती है –

'लाज तजिजिहि काजु सखि
इन लोगन में बसि आपु हंसाऊँ।
'आलम' आतुरता अति ही
तिहिं लालचु हौं तुम्हारे संग आऊँ।
कान्ह मिले तो मया करि चाहत
हौ न कछू जिय हूँ कि सुनाऊँ।'

यहाँ पर भारतेन्दु की नायिका उस लोक लाज पर अपशब्दो की वर्षा करती हुई दृष्टिगोचर होती है जिसने उसे मदन–मोहन के साहचर्य से वचित कर दिया–

'अरी सखि, गाज परो उस लोक लाज पे, मदन मोहन सग जान न पाई
हों तो झरोखे ठाढी देखत ही कछु, आए इते मे कन्हाई
ओचक दीठ पडी मेंरे तन, हंसि कछु बंसी बजाई
हरीचन्द मोंहि दिवस छोडि कै, तन मन धन प्रान तीनो सग लाई।[1]'

तत्कालीन साहित्य मे रीति साहित्यकारो की परम्परा को समाज ने स्वीकार किया, समाज के मध्यम वर्ग ने उसे बनाये रखने की चेष्टा की।

इस काल के साहित्यकारो ने नारी को सत् रूप मे देखने की चेष्टा भी की और उन्होने नारी के अतीत आदर्शों को इस काल मे पुनर्जीवित करने का भी प्रयास किया। प्रेम धन ने स्वदेश बिन्दु के अंतर्गत प्राचीन महिलाओ का गुणगान किया और उनमे निहित लज्जा, दया, धर्म, पति सेवा आदि वन्दनीय महान गुणो के सम्मुख अपना मस्तक नत किया। भारतीय स्त्री ने प्रचीन काल से चली आ रही अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए तलवार भी उठाई है। इस सदर्भ मे राधा कृष्ण दास ने नारी ह्रदय मे अन्तर्निहित शक्ति रूप का उद्घाटन किया है। महारानी पद्मिनी नाटक मे अलाउद्दीन द्वारा प्रणय की अकाक्षा प्रकट करने पर आवेश मे आकर फटकारती हुई रानी कहती है कि––––

---

[1] भारतेन्दू ग्रन्थावली–भाग–2, पृ0 47(प्रेम मल्लिका)

तेरे हाथ में शस्त्र नही है नही तो तुझसे इस पृथ्वी की रक्षा करती, तेरे पापों का फल तुझकों देती, यदि तुझमे कुछ भी सामर्थ्य हो तो आ शस्त्र ले और मुझसे लड। देघ क्षत्राणियों का सतीत्व भग करना कैसा होता है।[1]

शक्ति सम्पन्न होते हुए भी स्त्री ने कभी अपनी शक्ति का दुरूपयोग नही किया है। उसेन सदैव ही अपने आचार और विचार की सीमा का निर्धारण कर लिया था। एक बार किसी पुरूष को अपने पति के रूप मे स्वीकार कर लेने पर वह सदैव अपने निर्णण पर अडिग रहती थी। भारतेन्दु ने सती प्रताप नाटक मे सावीत्रि के चरित्र मे उस महान भावना को दिखाया है जिसके कारण वह मृत्यु पर विजय प्राप्त कर लेती है।

किशोरी लाल गोस्वामी के उपन्यास स्वर्गीय कुसुम मे पतिता कही जाने वाली कुसुम के मन मे नारी मन की नैतिकता विद्यमान है–

'वह कहती हैं—— "अब चाहे जान जाय तो भले ही जाय, पर जीते जी रंडी के नाफिस पेशे को तो मैं कभी न करूगी और या तो मैं यों ही मर जाऊॅगी या किसी ऐसे शख्स के साथ आश्नाई कर लूंगी, जिसके साथ सारी उमर कट जाय"'[2]

भारतीय स्त्रियो का आदर्श सदैव एक पतिव्रत धर्म रहा है। इसी कारण प्राय अधिकाश कहानियो मे प्राय स्त्री अपनी इसी धर्म की रक्षा करती हुई दिखाई देती है। भारतीय समाज ने कई बार विदेशी आक्रमणो का आघात सहा है और उन आक्रमणकारियो ने प्राय भारतीय धन सम्पदा के अतिरिक्त भारतीय स्त्रियो के मान मर्यादा को भी आहत किया। इन्ही विशेष कारणो से पर्दा प्रथा, बाल–विवाह इत्यादि कुरीतियों का जन्म हुआ। इन प्रथाओ के कारण स्त्रियो के नैसर्गिक और स्वच्छन्द विकास को अवरोध का सामना करना पडा।

भारतेन्दु के पूर्व युग तक साहित्य मे नारी अधिकाशत रीतिकालीन प्रासादो की शोभा मात्र थी और उसके द्वारा वासना का नित्य नूतन श्रगार किया जाता था। स्वकीया परकीया आदि रूपो मे वह सीमित थी। साहित्य में उसे एक

---

[1] राधाकृष्ण दास, महारानी पद्मनी–नाटक–पृ0 42–43।
[2] किशोरी लाल गोस्वामी– स्व0 कुसुम (द्वि0 सस्करण) पृ0 28–30

मासल और सौन्दर्य प्रतीमान के रूप मे स्थान प्राप्त था। स्त्रियो का बहुधा वही वर्णन किया जाता था। जो राजाओ और कुलीन वर्ग के मनोरजन के लिए आवश्यक साधन के रूप मे थे।

नारी के समष्टिगत तथा उसके जीवन के अन्य अछूते पक्षो का उद्‌घाटन भारतेन्दु तथा उनके परवर्ती साहित्य मे ही सम्पन्न हुआ।

साहित्य मे प्राय नारी जीवन के दयनीय चित्रण ही मिलते है। समाज मे नारी को सृष्टि दो बूद आसू से हुई है – एक कवि के स्वय के शब्दो मे–

'अबलाजीवन हाय तुम्हारी यहीं कहानी।

ऑचल में है दूध और ऑखों मे है पानी।।'

ऐसा क्योकि नारी जिसके अन्दर इतनी शक्ति है कि स्वय सृष्टि के निर्माण मे उसकी अह भूमिका होती है और वह लाचार और कमजोर क्यो है? क्योकि वह पुरूष पर आश्रित है। और पति के द्वारा मिलने वाला दान उसके सौभाग्य के स्वरूप है। पुरूष की सम्पत्ति के रूप मे स्त्री को एक वस्तु की भॉति उपहार स्वरूप किसी को भेट भी किया जा सकता है। पुरूष के काम–प्रवृत्ति के कारण ही उसे भोग्या रूप प्रदान किया जाता है।

स्त्री के शिष्ट रूप की अभिव्यजना के साथ–साथ रीतिकालीन परम्परा के प्रभाव से कही–कही स्त्री को स्थूल श्रृगारिकता के रूपमे चित्रित किया गया है। उसके प्रति काम भावना को साहित्य मे स्थान दिया गया है। "प्रेम पीयूष वर्षा" मे प्रेमधन द्वारा स्थूल श्रृगार का वर्णनहै। भारतेन्दु भी विषस्य विषमोषधम के अन्तर्गत भडाचार्य द्वारा नारी को पुरूष जाति को मोहित करने के साधन के रूप मे ही देख पाये।

'पुरूष जनन के मोहन को विधी यनत्र विचित्र बनायो है

काम अनल लावन्य सुजल बल जाको विरचि चलाओ है

कमर कमानी धार तार सो सुन्दर ताहि सजायों है

धरम घड़ी अरू रेल हु सो सुन्दर बढि यह सब के मन भायो है।'

किन्तु सामान्यत इस युग मे स्त्री का शिष्ट स्वरूप ही प्राय वर्णित है। साहित्यकार समाज मे आये बदलाव से प्रभावित होकर स्त्री को सामाजिक सम्मान दिलाने क`लिए अधिक प्रयत्नशील थे अत सभी साहित्यकारो ने स्त्री के सामाजिक दुर्गति पर क्षोभ प्रकट किया और अपने साहित्य के माध्यम से सुधार की भावना का विस्तार किया। जीर्ण जरपद (प्रेमधन) मे स्त्री की दयनीय अवस्था का मार्मिक वर्णन है।

"नहि इनके तन रूधिर मांस नही वसन समुज्जवल
नहिं इसकी नासि तर भूषण हाय आज कल
सूखे वे मुख कमल केश रूखे जिन केरे
वेश मलिन हीन तन कुविहत जात न हेरे।"

प्रताप नारायण मिश्र ने "भारत दुर्दशा" रूपक के अन्तर्गत स्त्री की उस महान विवशता का उल्लेख किया है जहॉ पर वह अपने पति का प्रेम अक्षुण्ण रखने की कामना से प्रेम की निष्ठा और उनके आदर्श. पर जीवित ही अग्निसात हो जाती थी।

किशोरी लाल स्वामी कृत "सुख शर्वरी" मे अनाथिनी आत्म हत्या को प्रस्तुत गंगा से अपनी करूण व्यथा कहती है। भारतेन्दु जी ने भी स्त्री जीवन की करूणा से उसे उबारने का प्रयास किया है।–

"इससे यह शका किसी को न हो कि मैं स्वप्न में भी यह इच्छा करता हूॅ कि इन गोरांगी युवती समूह की भॉति हमारी कुल लक्ष्मी गण भी अपनी लज्जा को तिलांजलि देकर अपने पति के साथ घूमें, किन्तु बातो में जिस भॉति अंग्रेज युवतियॉ सावधान होती हैं, पढी लिखीं होती है, घर का काम काज सम्हालती हैं, अपनी जाति और अपने देश की सम्पत्ति विपत्ति को समझती हैं उसमें सहायता देती हैं और इतने समुन्नत मनुष्य जीवन को व्यर्थ गृह दास्य और कलह में नहीं खोती उसी भॉति हमारे गृह देवता भी वर्तमान हीनवस्था का उल्लंघन करके कुछ उन्नति प्राप्त करे यहीं लालसा है।"

इन पंक्तियो से यह स्पष्ट होती है कि भारतेन्दु जी पश्चिम सभ्यताके अंधानुसरण को उचित नहीं मानते थें। किशोरी लाल गोस्वामी ने भी अपने स्त्री

पात्रो के अन्दर वह शक्ति दिखाई है कि आत्मसम्मान की प्रतिकूलता की स्थिति मे वह विरोध कर सके "स्वर्गीय कुसुम" मे कुसुम एक स्थान पर कहती है कि–

"देवदासी प्रथा व्यभिचार और वेश्यावृत्ति की जड है और उसे किसी व्यभिचारी महात्मा ने चलाया है।"

इस प्रसग मे वह कर्ण सिह से फिर कहती है–

"जिस प्रथा से व्यभिचार और वेश्यावृत्ति की दिन–दूनी रात–चौगुनी बढवार हुई जा रही है उस प्रथा को धर्म का अंग मानना – यह कैसा विचार है। जो देव मन्दिर धर्म के प्रधान आसीन हैं और जिन देव मन्दिरो की परिचर्या के लिए लोग अपनी कन्याओं को अधिष्ठाता देवताओ की दासी देकर उन कन्याओ के साथ, मन्दिरो के पुजारी, महन्त, पडे, या और भी ऐसे लोग घृणित, भयानक और पैशाचिक पाशविक अत्याचार किया करते है। इन बातो पर कभी अपने या आप ही के समान और भी धर्म प्राण महानुभावोने कुछ विचार किया है।"

इस स्थल पर यह विचारणीय है कि इस काल के समाज सुधारको ने नारी समाज के इस पतित पक्ष के उद्धार के लिए किसी प्रकार की कोशिश नही की। इन सुधारको ने इस क्षेत्र की ओर ध्यान नही दिया। इन सुधारको ने अपने साहित्य के माध्यम से लोगों का ध्यान आकृष्ट करवाया और समाज के इस तिरस्कृत वर्ग को आगे फैलने से रोकने के लिए तमाम ऐसे उपाय सुझाये जिससे की ये समस्या समूल नष्ट की जा सके। इन साहित्यकारो ने वैधव्य की ओर भी दृष्टिपात किया है। विधवाओ का आधार हीन जीवन, भरण–पोषण की समस्या एव कुल मर्यादाओ के निर्वहन के लिए रचे गये आडम्बर और उन आडम्बरो के पीछे घृणित वास्तविक स्थिति से ये साहित्यकार कही न कही परिचित अवश्य हुए है। इसी की प्रतिक्रिया स्वरूप इन्होने विधवा विवाह का समर्थन किया है। इन सभी ने एक स्वर में विधवा विवाह का समर्थन किया है। स्वय भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने भारतेन्दु ग्रन्थावली मे लिखा है कि –

"पुनर्विवाह न होने से बडा लोकसात होता है, धर्म का नाश होता है, ललनागण पुंश्चली हो जाती है, जो विचार कर देखिए तो विधवा गण का विवाह कर देना उनको नरक से निकाल लेना है।" दुखिनी बाला के लेखक भी इस

बात से सहमत है कि इस भारत वर्ष मे बहु–विवाह, बाल–विवाह के होने और विधवा विवाह के न होने से कैसी हानि है। हम लोगों द्वारा यह कुरीति जितनी उठे, उतना ही हम अपने आपको धन्य समझे।"

श्रीधर पाठक ने बाल–विधवा के अवसादो को उसकी दयनीय परिस्थितीयो एव उसके शून्य भविष्य को निहारा है। श्रीधर पाठक जी ने "देश सुधार का विचार" नाम की कविता पश्चिमोत्तर महात्म्य नामक लेख मे बाल–विवाह का विरोध तथा विधवा–विवाह का समर्थन किया है।

बालकृष्ण भट्ट जी ने हिन्दी प्रदीप के माध्यम से विधवा विवाह (पुनर्विवाह) का समर्थन करते हुए लिखा है –

"क्या यह (विधवा विवाह) उस महान कर्म की अपेक्षा बुरा है जो विधवा लोग गुप्त व्यभिचार करा प्रतिवर्ष सैकडों गर्भपात कराय दोनों कुलों को दूषित करती है।" इतना विस्तृत और स्वतंत्र विचार रखने वाले इन सुधारवादी लेखको द्वारा कहीं–कहीं परम्परावादी सोच शेष थी क्योकि किशोरी लाल गोस्वामी ने वैधव्य की पवित्रता पर बल दिया है–

"सचमुच बुआ जी (जो कि बाल–विधवा थीं) का मन बहुत ही पवित्र, उदार और प्रशस्त था। उनका चरित्र अत्यंत निर्मल, पुनीत और आदर्श था और उनका उद्देश्य अति मनोहर उन्नत और वात्सलय रस–पूरित था।"

स्वय भारतेन्दु जी ने एक स्थान पर कहा है कि

'जो विधवा–विवाह करती है उसको पाप तो नहीं होता, पर जो नहीं करती उसको पुण्य अवश्य प्राप्त होता है।'

इन कथनो पर यदि विचार किया जाय तो यह निष्कर्ष निकलता है कि तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था मे परितर्वन तो अवश्य हो रहे थे किन्तु परम्परा के प्रति मोह अभी शेष था। सैकडो वर्षों से चली आ रही परिपाटी से तो समाज छुटकारा पाना चाहता था किन्तु स्त्रियो की सामाजिक और मानसिक स्थिति को समझने मे पूर्णत सक्षम नही था।

पुनर्विवाह के समर्थन के साथ–साथ भट्ट जी ने अनमेल विवाह का भी विरोध किया। परिवार के मूल मे फैली अशान्ति के विरोध मे अनमेल विवाह ही प्रमुख कारण था। इस विषय मे हिन्दी प्रदीप मे एक स्थान पर उन्होने लिखा है

"दृष्टि फैलाकर देखिए तो इसी अनमेल विवाह के कारण कौन सा ऐसा घराना है जहॉ दिन रात का दॉता किट–किट नहीं हुआ करती।"

अपने से कम अवस्था का पति पाकर पत्नी अपनी युवावस्था अपने मायके मे ही बितादेती है। उसे दुख होता है कि विवाह के समय उसकी अनुमति क्यो नही ली गयी। इस अनमेल विवाह के कारण उसका पूरा जीवन अपने पिता को कोसते और अपने भाग्य का रोना रोते ही बीतता है। दूसरी एक कथा मे एक बालिका का विवाह एक वृद्ध के साथ हो जाता है। वृद्ध उस किशोर–युवती को 'जरतारी सारी लहगा और चोली का प्रलोभन देता है। किशोरी के मन मे किशोर को पाने की इच्छा इन भौतिक वस्तुओ से अधिक है अत. वह कहती है–

'आगी लगे तोहरी जरतारी सारी लहंगा चोली रामा
हरि हरि तुहऊॅ के धरि धाय नाग कहूॅ काला रे हरि।'[1]

अनमेल विवाह की भॉति बाल–विवाह के प्रति भी साहित्याकारो का ध्यान गया है। भारतेन्दु ने "भारत–दुर्दशा" मे सत्यानाश फौज द्वारा बालपन मे ब्याही गयी प्रीति बल नास कियो सब कहलाकर तत्कालीन प्रचलित समाज पर व्यगं किया है। इसी प्रकार 'प्रेमधन मे' 'वर्षा बिन्दु' के अतर्गत बाल–विवाह पर व्यगात्मक उक्ति दी है –

नई दूल्ही बनाय गोदी तोहके उठाय
मुॅह चुमब खेलायं, मोरे बारे–बारे बलमू
पावे पावों न उठाय छाती बाल पिय पाय
गोरी कह तो सरमाय, नोरे बारे बलमूॅ।
प्रेमधन अकुलाय, रस बिना बिलखाय
कहे खिल्ली से उडाय मोरे बारे बलमूॅ।[2]'

---

[1] प्रेम धन सर्वस्व भाग – 1, पृ0 547–548।

[2] प्रेम धन सर्वस्व भाग – 1, पृ0 547–548।

श्री बालकृष्ण भट्ट ने हिन्दी प्रदीप मे बाल–विवाह के दुष्परिणाम को बताया है।

"बाल–विवाह के परिणाम स्वरूप अनमेल दम्पत्तियों की अभिवृद्धि समाज का वातावरण दूषित कर देती हैं। ये असमान दम्पत्ति ही अनाचार और भ्रष्ट समाज की जड होते है। यदि बाल–विवाह पर रोक लगा दी जाय तो पुरूषो की मृत्यु संख्या इतनी घट जाय कि शायद विधवा विवाह की आवश्यकता ही न पडे।"[1]

प्रसिद्ध निबन्धकार प्रताप नारायण मिश्र ने भी इस सामाजिक कुप्रथा की भर्त्सना की है। उनका कहना है कि––

"जिन श्लोंकों को प्रमाण मानकर हिन्दु भाई इस घोर कुरीति पर फिदा हैं, जिनके लिए नई रोशनी वाले विचारे काशीनाथ पर फटके बाजी करते है उनका ठीक–ठाक अर्थ ही कोई नहीं बिचारता, नहीं तो उनमे महानिषेध, वरंच भयानक रीति से बाल्य विवाह का निषेध ही है।"[2]

श्री राधा कृष्ण दास की कहानी "दुखिनी बाल मे सरला अपने मुख से जन्म पत्री मिलाकर विवाह योजना बनाने और बाल–विवाह के दुष्परिणाम बताती है।

सरला उस समय की स्त्री की व्यथा कहती है –

"हाय! हमारी यह दशा क्यों हुई। जन्म पत्र और बाल्य विवाह से यदि जन्म पत्र न होता तो क्यों ऐसे मूर्ख से मेरी विवाह होता? यदि बाल्य विवाह न होता तो क्यों न मैं स्वय अपनी भलाई–बुराई को समझ कर अपनी इच्छानुसार पति करती।"[3]

स्त्री अपने आप मे आधा समाज समेट कर चलती है और भारतीय समाज का ढाचा जब इतना बिगड गया कि उसमे आमूल परिवर्तन की आवश्यकता मालूम होने लगी तभी सभी समाज सुधारको का ध्यान समाज के इस पक्ष की

---

[1] हिन्दी प्रदीप, अक्टूबर से दिसम्बर, 1890 पृ 19

[2] प्रताप नारायण मिश्र, ग्रन्थावली, प्रथम खण्ड, पृ0 114

[3] राजेन्द्र प्रसाद शर्मा, हिन्दी गद्य के निर्माता, बाल कृष्ण, पृ0 264।

ओर गया क्योकि स्त्री की सामाजिक अवनति कही न कही पुरूष समाज को भी प्रभावित करने लगी थी। कुछ लेखको ने पर्दा प्रथा का विरोध भी किया। श्री बालकृष्ण भट्ट का कहना है कि पर्दा प्रथा भ्रष्टाचार को कम नही करती बल्कि बढाती है। उन्होने कहाहै कि–

"रात बहू कौरे जॉय दिन कौआ देखि डरॉय"

भट्ट जी का कहना है कि हिन्दू वास्तविक बेपरदगी को तो रोकते नही जो नदियो के स्नानघरो के निकट सदा सुलभ है या मन्दिर मे जिसके प्रदर्शन के सुन्दर रगमच है। केवल घर मे परदा करने से क्या लाभ और सो भी केवल पति का जिसका परदा करने की कभी आवश्यकता भी नही।

इन लेखको ने नारी शिक्षा पर विशेष बल दिया है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने स्त्री के शिक्षित होने की अनिवार्यता को स्पष्ट किया – **"नारी पढे बिन एक है काज न चलत लिखाइ"** फिर माताद्वारा बालक के खान–पान तथा खेलने के समय दी गयी शिक्षा का महत्व गुरू द्वारा प्रदत्त शिक्षा से कही अधिक होता है अत शिक्षिका होने के लिए स्वय शिक्षित होना आवश्यक है। हमारी ललनाओ की हीन दशा मे भट्ट जी ने स्त्रियो का पक्ष लेकर पुरूषो से अपना रूढ दृष्टिकोण परिवर्तित करने की माग की है उनका विश्वास है कि शिक्षित स्त्रियॉ पुरूषो के लिए सहायक सिद्ध होगी।

'उत्तम स्त्रियॉ वह अमूल्य रत्न है कि पति सदा उन्हे अपने हृदय पर धारण किये रहे'[1]

श्री प्रताप नारायण मिश्र स्त्रियो को भारतीय परम्परागत शिक्षा देने के पक्षधर है। उन्होने स्त्रियों के लिए उस शिक्षा देने के पक्षधर है। उन्होने स्त्रियो के लिए उस शिक्षा की व्यवस्था करनी चाही है जिसके द्वारा वे पतिव्रत धर्म का पालन कर सके।

स्त्रीगण को शिक्षा देवे कर पतिव्रता यश लेवें। इस प्रकार की सुधारवादी सोच का प्रतिबिम्ब साहित्य मे भी उतरा है। अत इन साहित्यकारो ने स्त्रियो के

---

[1] हिन्दी प्रदीप, सितम्बर, 1884, पृ0 17।

सामाजिक उन्नयन मे पर्याप्त योगदान दिया। सच पूछा जाय तो स्त्रियो को यदि इन समाज सुधारको का सम्बल न मिलता तो यह भी सम्भव है कि वे आज भी उसी मध्ययुगीन दलदल मे फॅसी होती।

स्त्रियो की शिक्षा के विषय मे बोलते हुए कहा है –

'हम चाहते हैं कि भारत के स्त्रियों को ऐसी शिक्षा दी जाये, जिससे वे निर्भय हो भारत के प्रति अपनेकर्तव्य को भली–भॉति निभा सकें। और संघमित्रा, लीला, अहिल्या बाई और मीरा–बाई आदि भारत की महान देवियों द्वारा चलाई गयी परम्परा को आगे बढा सकें। एव वीर प्रसू बन सके। भारत की स्त्रियां पवित्रता व त्याग की मूर्तियां हैं, क्योंकि उनके पास वह बल और शक्ति है, जो सर्वशक्तिमान परमात्मा के चरणों में सम्पूर्ण आत्मसमर्पण से प्राप्त होती है।' "मेरा तो दृढ़ विश्वास है कि धर्म ही शिखा का मेरूदंड है।"[1]

अत हम किसी भी पक्ष से देखे तो इस पुनर्जागरण के काल मे स्त्रियो के उत्थान की चिन्ता प्रत्येक सहृदय सत्–पुरूष को थी और शिक्षा देने से तात्पर्य पाश्चात्य सभ्यता के अनुकरण से नही अपितु माताओ और बहनो को आत्मविश्वास और आत्म निष्ठा से परिपूर्ण बनाने से था। सामाजिक उत्थान की चिन्ता करने वाले ये सत्–पुरूष प्रत्येक पक्ष से स्त्रियो के उन्नयन की ओर दृष्टिपात कर रहे थे।

किन्तु एक बात जो उन सभी सुधारको के मतव्य मे दिखती है वह है, "पतिव्रता स्त्री" या स्त्रियो की पवित्रता – ऐसा क्या कभी पुरूषो के लिए इन सुधारको और साहित्यकारो को कहना पडा। ऐसा क्यो होता रहा कि स्त्रियो को ही यह उपदेश दिये गये कि वे पतिव्रता या पवित्रता और त्याग की मूर्ति बने। जो वर्ग स्वय आत्मनियत्रित और निष्ठा का पालन करता चला आ रहा था उसी पर सारे सुधारको न`उन्ही बातों के पालन के लिए दबाव क्यो बनाया। इन प्रश्नो के उत्तर मे हम यही सोच और कह सकते है कि वे अपने पुरूषत्व के अहकार को भूल नही सके उन्होनें इस बात पर ध्यान नही दिया कि उनकी प्रेरणा स्रोत

---

[1] भारतीय नारी, स्वामी विवेकानन्द, पृ0 11।

कही न कही स्त्री ही रही है और यदि उनके आचरण या व्यवहार मे कोई कमी होती तो स्वय आज इन सुधारको का अस्तित्व कहॉ होता। इस काल के साहित्य मे भी इसी बात पर अधिक बल दिया गया है सती प्रताप मे भारतेन्दु जी न पत्नीत्व के आदर्श की भावना व्यक्त करते हुए लिखा है।

'पतिव्रत धर्म से नारी सब प्रकार से समर्थ है। उसकी कीर्ति स्वर्ग से भी गायी जाने की कल्पना की गयी है। '

"पत्नी का सुख एक मात्र पति की सेवा है। जिस बात में प्रियतम की रूचि हो उसी में सहधर्मिणी की रूचि हो।"[1]

मनुष्य के लिए चार मुख्य सुखो की कल्पना की गयी है। पहला सुख निरोगी काया, दूसरा सुख घर मे हो माया, तीसरा सुख पुत्र हो आज्ञाकारी चौथा सुख ही पतिव्रता नारी। अत सभी पुरूष इन सुखो की कामना करते दिखाई देते है। इसी कारण इस काल के समस्त लेखक स्त्री के पतिपरायण रूप की ही चर्चा करते रहे। पति के व्यक्तित्व से अलग उसका कोई व्यक्तित्व नही होता। वह पुरूष की आज्ञा का पालन करे एव उसके सुख दुख मे पत्नी का भी सुख दुख हो। स्त्री मे पतिव्रत धर्म की प्रस्थापना करने के लिए कठोर चारित्रिक पवित्रता को प्रतिष्ठित किया उसकी स्वय वैयक्तिकता पति से अलग अपना कोई महत्व नही रखती और इस प्रकार प्रति को सेवा मे तत्पर नारी ही पत्नीत्व की आदर्श समझी गयी है। इन लेखको ने माता के रूप में नारी को भगवान के समान पूज्यनीय माना है तथा सदैव उसके मंगल की कामना करते दिखते है। पुत्रवती माता को विशेष आदर सदैव से प्राप्त रहा है।

'धनि–धनि भाग जसोदा तेरो।

जायो जिन अविनासी बाल।।'[2]

व्यक्तिगत रूप मे माता कैसी भी क्यो न रही हो, परन्तु अपने सन्तान की दृष्टि मे वह सदैव ही पवित्र, पूज्यनीय और श्रद्धेय है किशोरीलाल गोस्वामी की

---

[1] भारतेन्दू ग्रन्थावली, भाग–1, पृ0 696।

[2] प्रेम धन, सर्वस्व प्रथम, जन्माष्टमी की बधाई, पृ0 490।

"आदर्श सती" मे न्यायाधीश द्वारा पूछे जाने पर लाडली मॉ बसन्ती के विषय मे उपर्युक्त भाव का समर्थन करती दिखाई पडती है। वह कहती है कि–

चाहे "वे (मॉ) कैसी ही रही हो पर आखिरकार वे मेरी मॉ ही थी। इसलिए मैं उनके चाल–चलन के बारे मे अपनी जबान से कुछ भी नही कहना चाहती।"[1]

जिस तरह पत्नीके पति के अनुशासन मे रखने का इन लेखको का मतव्य है। उसी प्रकार पुत्री को पिता–माता के नियत्रण मे रखनेकी भी आज्ञा है। पुत्री के जीवन के सभी प्रकार के निर्णय उसके अभिभावक ही लेते है। इस विषय मे कन्या का अपना व्यक्तित्व आकाक्षा तथा वाणी कुछ भी अर्थ नही रखते।

"सखि।यहीं जगत की चाल जिति है क्वारी
उन सबके ही विधि माता–पिता अधिकारी
जैही चाहे ता कहूँ दान करें निजबारी
यामें कछु कहनों तजनों लाज दुलारी।"[2]

इस समय भारतीय समाज बडी तेजी से बदल रहा था सभवत इसी कारण इस समय पत्नी और कन्या को कठारे अनुशासन मे रखने का समर्थन किया गया क्योकि ये साहित्यिक और सुधारक वर्ग के लोग पश्चिमी समाज की शिक्षा और समृद्धि तो अपने समाज में देखना चाहते थे किन्तु उत्श्रृंखलता नही। स्त्रियो की उन्नति तो वे चाहते थे किन्तु वे ये भी जानते थे कि स्त्री स्वभाव से कोमल भावुक और सवदेनशील होती है और इसीलिए जीवन मे सतुलन बनाये रखने के लिए उसे पुरूषो द्वारा निर्दिष्ट पथ ही चुनना चाहिए।

इस काल में साहित्यकारो का प्रयत्न यही रहा है कि स्त्री समाज को उसकी खोई हुई प्राचीन गरिमा प्राप्त हो सके। इन लेखको ने स्त्रियो के वर्ग विशेष का वर्णन प्राय तो नही किये किन्तु जिन रचनाओ मे ये अलग सी दिखती है उनमे कुलीन वर्ग की स्त्रियॉ तो मानो श्रृगार प्रेम के लिए ही है। वे प्रेम करती

---

1 भारतेन्दू ग्रन्थावली, भाग–1, पृ0 689।
2 किशोरी लाल गोस्वामी, आदर्श सती, पृ0 128।

है। प्रिय से विछोह होने पर विरहणी बनकर तडपती है। प्रिय से मिलनहोने पर फिर मिलन के लिए आतुर होती है। भारतेन्दु की चन्द्रावसी, गोस्वामी की लवगलता आदर्श सती की लीलावती आदि इसी श्रेणी की स्त्रियॉ है। उन्हे सामाजिक स्वतत्रता नही मिली है। अत वे प्रिय के सदेशो को दासियो से भेजती है। तथा एकान्त मे लुक–छिपकर प्रिय से मिलन को आतुर होती है। इन नायिकाओ के चित्रण मे इन लेखको पर रीति काल का प्रभाव दृष्टिगत होता है।

मध्यमवर्गीय स्त्रियो के लिए प्राय इन साहित्य प्रेमी सुधारको ने अपना स्वर मुखरित किया है। मध्यम वर्ग के स्त्रियो की सामाजिक दशा सदैव से दयनीय ही बनी रही है अशिक्षा, कलह, विद्वेष के बीच मध्यवर्गीय नारी का जीवन स्तर दिन प्रतिदिन प्रगति की ओर अग्रसर होता रहा है। राधा कृष्ण दास द्वारा मदन मोहन की पत्नी का नारी विषयक सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया गया है।

"चारो ओर दुख ही दुख हैं, कहॉ तक वर्णन करूॅ। देखिए चाची जी तो ऐसा दुख देती हैं कि बडा कष्ट होताहै। जो कही उन्होंनें मेरे हाथ में कोई पुस्तक देखी तो फिर देखिए कैसे बिगडती हैं, वह यहीं कहती हैंकि जब देखो तब किताबे लिए रहती है। न सीना न पिरोना, ई कुल बोरन कहॉ से आई चौका लगावेके।"

किन्तु साथ ही साथ मध्यमवर्गीय परिवार मे पुत्रियो व बहनो को जितना स्नेह तथा अपनत्व की भावना या अन्य शब्दो मे कहे तो स्त्रियो को अपनत्व और घरेलू सुख उतना और किसी वर्ग की स्त्री को नही।

निम्न वर्गीय परिवारो मे धनाभाव तो अवश्य स्त्रियो को झेलना पडता था किन्तु वे कभी लाचार नही दिखती। वे स्वतत्रता पूर्वक घूमती फिरती बाते करती दिखाई देती है। अधेर नगरी की कुजडिन और मछली वाली आदर्श सती की बतसिया इसी श्रेणी की स्त्रियॉ है। धना भाव के कारण इन स्त्रियो मे कुछ दुर्गुण अवश्य आ गये है । शिक्षा और सस्कारो से रहित ये स्त्रियॉ सभ्यता के अर्थ मे अत्यत पिछडी हुई है वे स्वभाव से झगडालू है

"घर गृहस्थी के सब काम पिसौनी, कुटौनी से छुट्टी पाय, जब तक दॉत न किर ले और आपस में झोंटी–झोंटा न कर ले तब तक कभी न अघाय।"[1]

---

[1] बालकृष्ण भट्ट, भट्ट निबन्धावली, भाग–1, पृ0 18।

आलोच्य काल (1900—1935)

(क) प्रमुख कहानीकार और उनकी कहानियाँ तथा पत्र–पत्रिकायें

प्रथम स्वतत्रता सग्राम के पूर्व जो साहित्यिक पृष्ठभूमि हिन्दी साहित्य को अग्रसरित कर रही थी। उसमे तत्कालीन समाचार पत्र–पत्रिकाओ का विशेष योगदान रहा है। इन पत्र–पत्रिकाओ ने भारतीय राजनैतिक वातावरण तथा भारतीय समाज के उन्नयन मे अहम् भूमिका निभायी है। उनकी प्राप्य क्रमवार सूची इस प्रकार है–

पत्र–पत्रिकाएं

प्रथम उत्थान काल

क्र.	नाम		वर्ष		प्रकार		स्थान
1	उदन्त मार्तण्ड	–	1826	–	साप्ताहिक	–	कलकत्ता
2	बगदूत	–	1829	–	"	–	"
3	प्रजामित्र	–	1834	–	"	–	"
4.	बनारस अखबार	–	1845	–	"	–	बनारस
5.	मार्तण्ड	–	1846	–	"		कलकत्ता
6.	मालवा अखबार	–	1849	–	"	–	मालवा
7.	सुधाकर	–	1850	–	"	–	काशी
8.	बुद्धि प्रकाश	–	1852	–	"	–	आगरा
9.	समाचार सुधापर्णता	–	1854	–	दैनिक	–	कलकत्ता
10.	प्रजा हितैषी	–	1855	–	"	–	आगरा
11.	तत्तबोधिनी पत्रिका	–	1865	–	"	–	बरेली
12.	ज्ञान प्रदायनी पत्रिका	–	1866	–	मासिक	–	लाहौर
13	वृत्तान्त विलास	–	1867	–	मासिक	–	जम्मू

भारतेन्दु कालीन कुछ पत्र–पत्रिकाएं –

1	कविवचन सुधा	–	1868	–साप्ताहिक, पासिक, मासिक	–काशी
2	जगत समाचार	–	1869	–साप्ताहिक	–आगरा
3	सुलभ समाचार	–	1871	–साप्ताहिक	–कलकत्ता
4.	बिहार बन्धु	–	1871	–मासिक	–बॉकीपुर
5.	चरणाद्रि चन्द्रिका	–	1873	–साप्ताहिक	–बनारस
6	हरिश्चन्द्र मैगजीन	–	1873	–मासिक	–
7.	बाला बोधिनी	–	1874	–मासिक	–
8	भारतबन्धु	–	1874	–साप्ताहिक	–अलीगढ
9	काशी पत्रिका	–	1875	–साप्ताहिक	–काशी
10.	हिन्दी प्रदीप	–	1877	–मासिक	–इलाहाबाद
11	कायस्थ समाचार	–	1878	–"	"
12	आर्य मित्र	–	1878	–"	–बनारस
13.	उचित वक्ता	–	1878	–साप्ताहिकी	–कलकत्ता
14.	भारत सुदशा प्रवर्तक	–	1879	–	–फर्रूखाबाद
15.	सार सुधा निधी	–	1879	–साप्ताहिकी	–कलकत्ता
16.	क्षत्रिय पत्रिका	–	1880	–मासिक	–बाकीपुर
17.	आनन्द कादम्बिनी	–	1881	–मासिक	–मिर्जापुर
18.	भारतेन्दु	–	1883	–	–बृन्दावन
19.	देवनागरी प्रचारक	–	1882	–	–मेरठ
20.	ब्राह्मण	–	1883	–मासिक	–कानपुर
21.	काशी समाचार	–	1883	–साप्ताहिक	–काशी
22.	इन्दु	–	1883	–मासिक	–लाहौर
23.	कान्यकुब्जप्रकाश	–	1884	–	–लखनऊ
24.	हिन्दोस्थान	–	1885	–दैनिक	–कालाकाकर

25.	भारतोदय	— 1885 —"		— कानपुर

तृतीय उत्थान काल –

1.	आर्यावर्त	— 1887 —	साप्ताहिक	— कलकत्ता
2	रहस्य चन्द्रिका	— 1888 —	पाक्षिक	— बनारस
3	हिन्दी बगवासी	— 1890 —	साप्ताहिक	— कलकत्ता
4	नागरी नीरद	— 1893 —	"	— मिर्जापुर
5.	साहित्य सुधा निधि	— 1894 —	मासिक	— काशी
6	श्री वेकटेश्वर समाचार	— 1895 —	साप्ताहिक	— बम्बई
7.	विद्या विनोद	— 1895 —	मासिक	— बाकीपुर
8	नागरी प्रचारिणी पत्रिका	— 1896 —	त्रैमासिक	— काशी
9.	समस्या पूर्ति	— 1897 —		— बाकीपुर
10.	रसिक पत्रिका	— 1897 —	साप्ताहिक	— कानपुर
11	उपन्यास	— 1898 —	मासिक	— काशी
12.	पण्डित पत्रिका	— 1898 —	"	— "
13.	सरस्वती	— 1900 —	"	— इलाहाबाद

इन विभिन्न पत्रिकाओ के पश्चात् ही मौलिक कहानियो का हिन्दी सहित्य मे आविर्भाव हुआ। और उन प्रारम्भिक कहानियो की प्राप्य सूची इस प्रकार है–

कहानी का नाम	कहानीकार	ई0सन्	पत्र–पत्रिका	कहानी का प्रकार
1. 'इन्दुमती'	किशोरी लाल गोस्वामी	1900	सरस्वती	
2. 'मन की चचलता	माधव प्रसाद मिश्र	1900	सुदर्शन	
3 'मोतियो की गुफा'	गोपाल दास	1900	सरस्वती	साहसिक
4 'टोकरी भर मिट्टी'	माधवराव सप्रे	1901	छत्तीसगढ मित्र	
5. 'प्लेग की चुडैल'	भगवान दास	1902	सरस्वती	
6. 'ग्यारह वर्ष का समय'	रामचन्द्र शुक्ल	1903	सरस्वती	

7.	'पति का पवित्र प्रेम'	गिरजा दत्त वाजपेयी	1903	सरस्वती भावात्मक
8	'पडित तथा पडिताइन'	गिरजा दत्त वाजपेयी	1903	सरस्वती सामाजिक
9	'तीन देवता'	महावीर प्रसाद द्विवेदी	1903	सरस्वती लोककथात्मक
10.	'महारानी चन्द्रिका और भारतवर्ष का तारा'	महावीर प्रसाद द्विवेदी	1903	सरस्वती राष्ट्रीय भाव कथा
11	'भूतो वाली हवेली'	पार्वती नन्दन	190	अलौकिक घटना प्रधान
12	'अज्ञान और विज्ञान'	कुमुद बन्धु मित्र	1904	सरस्वती कौतुहूल प्रधान
13.	'स्वर्ग की झलक'	महावीर प्रसाद द्विवेदी	1904	सरस्वती बालमनोवृत्ति प्रधान
14.	'राजकुमारी हिमागिनी'	महावीर प्रसाद द्विवेदी	1904	सरस्वती मानवीकरण प्रधान
15.	'इत्यादि की आत्म कहानी'	यशादानन्द अखौरी	1904	सरस्वती''
16.	'रामलोचन साह'	पार्वतीनन्दन	1904	सरस्वती नैतिक उपदेश
17	'अद्भूत योगायोग'	वासुदेव मित्र	1904	सरस्वती''
18.	'चन्द्रदेव से मेरी बाते	'बग महिला	1904	सरस्वती राष्ट्रीय भावना युक्त
19.	'मेरी चम्पा'	पार्वती नन्दन	1905	सरस्वती
20.	'मै तुम्हारा कौन हूँ?'	पार्वती नन्दन	1905	सरस्वती वैज्ञानिक
21.	'एक गुलजार'	पार्वती नन्दन	1905	सरस्वती व्यगात्मक
22.	'महाराज सूरज सिह और बादल की लडाई'	बद्रीदत्त पाडे	1905	सरस्वती मानवीकरण
23.	'एक शिकारी की सच्ची	निजाम शाह	1905	सरस्वती

कहानी'			साहसिक
24. 'मेरा पुर्नजन्म'	पार्वती नन्दन	1905	सरस्वती
			अलौकिक
			आभास पूर्ण
25 'एक–एक के दो–दो'	पार्वती नन्दन	1905	सरस्वती''
26. 'चन्द्रह्रास का अद्‌भूत आख्यान'	सूर्य नारायण दीक्षित	1905	सरस्वती''
27. 'एक अशर्फी की आत्म–कहानी'	वेकटेश नारायण	1905	सरस्वती
			मानवीकरण
28. 'दुलाई वाली'	बग महिला	1907	सरस्वती
29 'सच्चाई का शिखर'	गगा प्रसाद अग्निहोत्री	1907	सरस्वती
			लोककथात्मक
30. 'तीक्ष्ण छूरी'	लक्ष्मी धर वाजपेयी	1907	सरस्वती
			ऐतिहासिक
31 'आश्चर्यजनक घंटी'	सत्यदेव	1908	सरस्वती
32. 'कीर्तिकालिमा'	सत्यदेव	1908	सरस्वती
			राष्ट्रीय
			भावना प्रधान
33. 'भूतही कोठरी'	मधुमगल मिश्र	1908	सरस्वती
			अन्ध विश्वास
34. 'राखी बन्द भाई'	वृन्दावन लाल वर्मा	1909	सरस्वती
			ऐतिहासिक
35. 'एक ज्योतिषी की आत्म कथा'	श्री लाल शालिग्राम	1909	सरस्वती
36. 'सात सुनार'	शिव नारायण शुक्ल	1909	सरस्वती
			लोक कथात्मक
37. 'खान–खाना और सुमेरू पर्वत'	महावीर प्रसाद द्विवेदी	1911	सरस्वती
			ऐतिहासिक
38. 'शायरो के शायर शहशाह अबू'	''	''	सरस्वती ''
39. 'तालिव और शाहजहॉ'	''	''	सरस्वती ''
40. 'मिर्जा अबदुल रहीम खानखाना की उदारता	''	''	सरस्वती ''
41. 'तातर और एक राजपूत'	वृनदावन लाल वर्मा	1911	–

42 'जम्बू की न्याय'	सत्यदेव	1911	ऐतिहासिक —
43 'विद्याविहार'	विद्याबिहार शर्मा	1911	ऐतिहासिक —
44 'ग्राम'	जयशकर प्रसाद	1911	ऐतिहासिक इन्दु
45. 'पिकनिक'	गगा प्रसाद श्रीवास्तव	1911	इन्दु
46. 'सुखमय जीवन'	चन्द्रधर शर्मा	1911	इन्दु
47. 'परदेशी'	विश्वम्भर शर्मा	1912	इन्दु
48. 'रशिया बालम'	जयशकर प्रसाद	1912	इन्दु
49. 'कानो मे कगना'	राधिका रमण	1913	इन्दु
50 'रक्षा बन्धन'	विश्वम्भर कौशिक	1913	इन्दु
51. 'उसने कहा था'	चन्द्रधर शर्मा	1915	सरस्वती
52. 'सौत'	प्रेमचन्द	1915	सरस्वती
53. 'सज्जनता का दण्ड'	प्रेमचन्द	1916	सरस्वती
54. 'पच परमेश्वर'	प्रेमचन्द	1916	सरस्वती
55. 'ईश्वरीय न्याय'	प्रेमचन्द	1917	सरस्वती
56. 'दुर्गा का मन्दिर'	प्रेमचन्द	1917	सरस्वती
57. 'मिलन'	ज्वाला दत्त शर्मा	1915–17	सरस्वती
58. 'झलमला'	पदुमलाल पुन्नालाल	1915–17	सरस्वती

इसके पश्चात् कहानी साहित्य का पूर्ण विकास हो चुका था। अत अनेक प्रतिष्ठित कहानिकार प्रतिवर्ष अनेकानेक कहानियो की रचना कर रहे थे। तथा वे कहानियॉ विभिन्न सग्रहो मे प्रकाशित होने लगी थी। अत यहॉ से कहानी का पूर्ण विकास माना जा सकता है।

(ख) विभिन्न लेखिकाओं की कहानियों में स्त्री का सामाजिक स्वरूप

श्रीमती राजेन्द्र बाला घोष (बग महिला)

श्रीमती राजेन्द्र बाला घोष (बग महिला) ने कई मौलिक कहानियॉ हिन्दी जगत को प्रदान की परन्तु इनका पदार्पण अनुवादक के रूप मे पहले होता है । बग महिला की अनूदित कहानियो के कथानक सामाजिक, राजनितिक, जासूसी आदि सवेदनाये लिए हुए है । इनकी सर्वप्रथम कहानी *'कुम्भ मे छोटी बहू'* है जो श्रमती नीरद वासिनी घोष द्वारा रचित गल्प का अनुवाद है । इनकी अन्य अनूदित कहानियॉ *'दान प्रतिदान' 'मुरला' 'दालिया' 'मन की दृढता'* आदि है जो समय– समय पर सरस्वती पत्रिका मे मिलती रही है ।

'कुम्भ मे छोटी बहू' कहानी सम्मिलित परिवार मे रहने वाली एक स्त्री की मनो दशा का वर्णन है । इस कहानी के प्रथम अनुच्छेद मे छोटी बहू के मेले में जाने की इच्छा प्रकट करना, दूसरे अनुच्छेद मे छोटी बहू के मेले मे जाने की तैयारी का चित्रण एव तृतीय अनुच्छेद मे कुम्भ मे ले जाने का वर्णन और कहानी की समाप्ति है । इस कहानी का उद्देश्य है कि स्त्रियॉ जो ठान लेती है उसे करके ही छोडती है । यह कहानी वर्णनात्मक शैली मे लिखी गयी है । इसमे विषय वस्तु की प्रधानता के साथ–साथ कहानीकार का व्यक्तित्व यदा कदा सामने आता रहता है ।

> **'तब उस बेचारी अबला की कौन गिनती । इस सोचनीय करूणोत्पादकदृश्य का वर्णन करना लेखनी की शाक्ति के बाहर है । सहृदय पाठक – पाठिकायें आप ही उसका अनुभव कर लेगें' ।**

अनूदित कहानियो के साथ–साथ श्रीमती बग महिला ने मौलिक कहानियो की भी रचना की । इनकी प्रथम मौलिक कहानी *'दुलाईवाली'* जो हास्य रस से परिपूर्ण मनोरजन प्रधान कहानी है और हिन्दी–कहानी–विकास क्रम मे प्रथम मौलिक कहानी स्वीकार की गयी है । इसके प्रथम और द्वितीय अनुच्छेद मे वशीधर का शीघ्रता पूर्वक ससुराल जाना और शीघ्रातिशीघ्र अपनी बहू को बिदा करा लेना तृतीय अनुच्छेद मे मिरजापुर से गाडी चलने के पश्चात ग्रामीण स्त्रियो का उस अपरिचित स्त्री के पति रह जाने पर वार्तालाप और इलाहाबाद स्टेशन पर सम्पूर्ण रहस्योघाटन पर कहानी समाप्त होती है । *'दुलाई वाली'* दो मित्रों के हास–परिहास पर आधरित है । इलाहाबाद के वशीधर बनारस से अपनी ससुराल से दुल्हन बिदा कराकर मुगलसराय जक्शन से होते हुए आ रहे थे । उनके मित्र नवलकिशोर ने अपनी पत्नी के साथ मुगलसराय जक्शन पर मिलने के लिए लिखा था । वशीधर ने अपने मित्र नवल किशोर को बहुत ढूँढा, लेकिन उन्हे वह नही मिले । गाडी मे उन्हे एक रोती दुल्हन मिली जिसका पति स्टेशन

पर ही रह गया था । वशीधर सहानुभूति और करूणावश उसे इलाहाबाद स्टेशन पर अपने साथ उतार लेते है । वहॉ उन्हे दुलाई वाली बुढिया मिली । उसकी देखरेख मे सबको छोडकर बंशीधर जी स्टेशन मास्टर को उस स्त्री के सम्बन्ध मे सूचना देने गये लौटने पर उन्हे कोई नही मिला स्वय उनकी पत्नी भी । वशीधर जी परेशान होकर आगे बढे तो उन्होने दुलाईवाली बुढिया को देखा और पूछने पर दुलाईवाली अपना घूँघट खोलकर हँस पडी और वह उनका दोस्त नवलकिशोर था । *'दुलाई वाली'* के वशीधर विपद मे पडी स्त्री की सहायता करना अपना कर्तव्य समझते है ।

इनकी कहानी *'ह्रदय परीक्षा'* मे जीजा–सालियो का मनोरजन पूर्ण परिहास है । इसमे डा0 सुशील कुमार एव उनकी पत्नी सरला किसी मामूली घटना पर एक दूसरे से नाराज हो जाते है । और सरला अपने भाई के पास चली जाती है। और वहॉ बीमार हो जाती है तथा सरला के भाई योगेन्द्र के आग्रह पर डा0 सुशील कुमार पत्नी होने के नाते नही एक डाक्टर होने के नाते सरला को देखने चले जाते है । जहॉ उनके साथ सालियो द्वारा हास–परिहास किया जाता है ।

श्रीमती बग महिला की कहानी *'भाई बहन'* एक शिक्षाप्रद एव उपदेशात्मक कहानी है । इसके पात्र *'गगिया'* और बेनीमाधव शरण अपने पिता प0 महादेव प्रसाद जी के साथ भरत मिलाप देखने जाते है । इस कहानी का लक्ष्य विदेशी वस्तुओ का बहिस्कार एव देशी वस्तुओ की महत्ता प्रदर्शित करना है । बडे भाई श्री राम बच्चो को देशी वस्तुऍ खरीदने का उपदेश देते है ।

> **'तुमको चाहिए कि अपने देश की भलाई के लिए उपाय विचार करों और उन्हें सीखो । लडकपन में जिस बात का प्रभाव मनुष्य पर पड जाता है बडे होने पर वह उसी के अनुसार व्यवहार करता है । यदि अभी से तुम देशी चीजें काम में लाओगे तो मैं स्वदेश की बनी हुई कोई उत्तम चीज तुम्हे इनाम में दूँगा ।'**[1]

लेखिका ने अधिकाश कहानियॉ सोद्देश्य लिखी है । *'कुम्भ मे छोटी बहू'* में दिखाया गया है, कि मेले आदि मे गॉव की लज्जाशील बहुओ के आने से क्या दुर्गति होती है । फलत. उनका मेले आदि में न आना ही इस कहानी का उद्देश्य है । *'भाई– बहन'* का उद्देश्य विदेशी वस्तुओ का बहिष्कार तथा देशी वस्तुओ की महत्ता प्रदर्शित करना है । इनकी कहानियो मे सामाजिक सवेदना की अभिव्यक्ति दिखती है ।

---

[1] कुसुम संग्रह, पृ0 111–112।

श्रीमती उषा देवी मित्रा

श्रीमती उषा देवी मित्रा का नारी शिक्षा मे विशेष रूचि होने के कारण आपने नारी मगल समिति की स्थापना की थी । इनकी प्रथम कहानी *'मातृत्व'* सन् 1933 के हस मे प्रकाशित हुई थी । इनकी प्रमुख प्रकाशित कहानी सग्रह निम्न है------

(1) आधी के छन्द (कहानी सग्रह)

(2) महावर (कहानी सग्रह)

(3) नीम-चमेली (कहानी सग्रह)

(4) मेघ मल्लार (कहानी सग्रह)

(5) सान्ध-पूरबी (कहानी सग्रह)

(6) रागिनी (कहानी सग्रह)

विषय की दृष्टि से श्रीमती उषा देवी मित्रा की कहानियो को निम्न प्रकार से विभाजित कर सकते है ।

(1) सामाजिक कहानियॉ

(2) पारिवारिक काहनियॉ

(3) ऐतिहासिक कहानियॉ

(4) राजनैतिक कहानियॉ

(5) प्रतीकात्मक कहानियॉ

(6) पौराणिक तथा धार्मिक कहानियॉ

(7) मनोवैज्ञानिक कहानियॉ

इन्होने अपने सामाजिक कहानियो मे समाज के विभिन्न पहलुओ और उनसे सम्बन्धित समस्याओ का चित्रण किया है । नारी के समस्याओं के प्रति अति जागरूक होने के कारण इनकी सामाजिक कहानियो मे अन्तर्जातीय विवाह

समस्या, वेश्या समस्या, परित्यक्तता नारी समस्या, विधवा समस्या आदि प्रमुख रूप से परिलक्षित होते है । यद्यपि इनके समय तक समाज मे व्याप्त बुराइयो के निवारण हेतु अनेक कानून बन चुके थे फिर भी समाज मे व्याप्त बुराइयॉ मिटी नही थी बल्कि केवल कानून व्यवस्था की ही तुष्टि हुई थी । इस समय भारतीय समाज मे वर्णव्यवस्था अपनी चरम सीमा पर थी और यह परम्परा लागू थी कि कन्या का विवाह अपने ही जाति मे किया जाय और अन्तर्जातीय विवाह अवैध घोषित था । और इसी वर्ण व्यवस्था के कारण र्प्याप्त धन और श्रम के बावजूद उत्तम और अनूकूल वर प्राप्त करना दुर्लभ हो गया था । यदि उस समय कुछ अन्तर्जातीय विवाह हुए भी थे तो वे सामाजिक दबाव मे सफल नही हुए । *'बहता फूल'* भूरा राम द्वारा मृतप्राय बालिका पुष्प को जीवन प्रदान करने के बावजूद जाति व्यवस्था के कारण उसे कही आश्रय नही प्राप्त होता । *'पिऊ कहॉ'* का सांवलिया यद्यपि आर्यमत का समर्थन प्राप्त कर सीता से विवाह तो कर लेता है परन्तु सामाजिक विरोध के कारण सावलिया अन्तत मुनिया से शादी कर लेता है, और सीता को सागर मे कूद कर आत्महत्या करनी पडती है । *'जीवन का एक दिन'* की परमा द्वारा लेखिका ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि गरीब परिवार की लडकियॉ किस प्रकार अनिच्छा पूर्वक अपने सतीत्व को बेचने को बाध्य होती है ।

पति का तिरस्कार एव अपमान नारी के लिए सबसे बडा अभिशाप होता है, और स्त्री के लिए सबसे बडा दुख वैधव्य का दु ख होता है । मध्यम वर्गीय परिवार में विधवा की दशा अत्यन्त दयनीय होती है । उषा जी ने मध्यम वर्गीय परिवार को आधार बनाकर ही विधवा समस्या के विभिन्न पहलुओ को परिलक्षित किया है । वैधव्य का अभिशाप आ जाने पर नारी को पग–पग पर परिवार और समाज की यातनाये सहनी पडती है । सामाजिक और राजनितिक सुधारो ने यद्यपि विधवा को पुनर्विवाह की अनुमति प्रदान कर दी थी तथापि भारतीय नारी पुनर्विवाह को राजी नही होती थी । क्योकि वह पति को परमेश्वर मानती थी । और यदि विवशता पूर्वक अपनी दूसरी शादी कर भी लेती थी तो अपने प्रथम पति को विस्मृत नही कर पाती थी । *'मृत्यु'जयी'* मे हेमन्त से विधवा सीता का

पुनर्विवाह । बाह्रय रूप से तो हेमन्त को सुखी दिखने वाली सीता अपने स्वर्गवासी पति को नही भूल पाती। साथ ही साथ भारतीय समाज मे पति की मृत्यु के पश्चात पत्नी को ही पापिन, कलकिनी घोषित किया जाता है । मित्रा जी ने नारी की वैयक्तिक, सामाजिक एव परिवारिक समस्याओ को *'उन्नीस सौ पैंतीस' 'गोधूलि' 'मातृत्व' 'मृत्यु'जयी'* मे गम्भीरता पूर्वक उढाया है । नि सतान विधवा नारी की समस्या और भी जटिल हो जाती है और पग–पग पर उसे परिवार एव समाज की यातनाये सहनी पडती है । *'मातृत्व'* की हशमत ऐसी ही एक कलकिनी एव पापिन दस वर्षीय विधवा बालिका है ।

परित्यक्त नारी का सामाजिक चित्रण मित्रा जी ने *'पुतली जी उठी'* मे अत्यन्त प्रभाव पूर्ण ढग से किया है । दीपाली के पति के द्वारा प्राणो से भी अधिक प्रिय पत्नी का मॉ के कलक के कारण परित्याग करने पर दीपाली पर वज्रपात हो जाता है और उसकी एक मात्र पुत्री पुष्पा को उससे छीन लेने पर उसका दु ख चरम सीमा पर पहुॅच जाता है । क्योकि वह नही चाहता कि उसकी पुत्री कलकिनी माता के साथ रहे । इस असहनीय कष्ट के बावजूद रूढियो एव सामाजिक मर्यादा में बधी दीपाली विद्रोह नहीं कर पाती और अपने विचारो और भावनाओ का दमन करती है ।

अपने पति की मृत्यु के पश्चात पैदा हुई अपनी एक मात्र पुत्रीं नमिता का पालन–पोषण *'गोधूलि'* की विधवा शान्ता द्वारा मेहनत और मजदूरी से किया जाता है । और अपने सामर्थ्य के अनुसार पालन–पोषण करने पर सयोग वश एक अमीर परिवार के पुत्र प्रभात द्वारा नमिता से विवाह करने के प्रस्ताव को समाज द्वारा मना कर देने पर विधवा पर दु ख का पहाड टूट पडता है ।

मित्रा जी की कहानियो मे समाज की यातनाओ को चुपचाप सहन करने वाली नारियो का सफलता पूर्वक चित्रण किया गया है । जिनमे *'गोधूलि'* की शान्ता *'जीवन का एक दिन'* की परमा *'पुतली जी उठी'* की दीपाली आदि प्रमुख है । भारतीय आदर्श पत्नी जो अपने पति को परमेश्वर मानती है और उसके सारे अत्याचारो को चुपचाप सहन करती है। जब *'मन की देन'* की कमला को

उसके पति के द्वारा शराब पीकर मारने पीटने पर वह राधा प्यारी से कहती है ————————

> **'मारते पीटते हैं वह भी तो मेरे ही लिए, मुझे वह जिस सुख आराम से रखना चाहते है वैसा उनसे बनता नहीं। अपनी कमी अपनी अयोग्यता पर उन्हे क्रोध आता है, दुःख होता है । फिर वह गुस्सा उतारे किस पर । मेरे सिवा उनका है भी कौन ? उन्हीने मुझे पत्नी का आसन देकर मेरे नारीत्व का सम्मान किया है न।'[1]**

इसके अतिरिक्त अन्य आदर्श भारतीय पत्नी जैसे *'सान्ध्य पूरबी'* की उर्मिला *'रिक्ता'* की कमला *'मातृत्व'* की कुसुग *'बीच भवर'* की सुरीला आदि है ।

'समझौता' कहानी मे लेखिका ने दिखाया है कि इस कहानी की नायिका *'कुसुम'* जो पाश्चात्य संस्कृति मे रगी विवाहिता नारी है और उसके रग–रग मे पाश्चात्य रीति–नीती एव आचार विचार समाया हुआ है, उसे भारतीय आचार–विचार वाले परिवार मे सामजस्य बैठाना कठिन हो जाता है । इक्कीस वर्ष की अवस्था मे भारतीय परिवेश मे पले एव बढे परेश के साथ विवाहोपरान्त कुसुम को उसके परिवार मे सामजस्य स्थापित करने मे कठिनाई महसूस होती है। उसका स्वप्न भग हो जाता है । और उसके स्वभाव मे चिडचिडापन और घृणा की उत्पत्ति होती है । उसके इस स्वभाव के कारण सभी नौकर चाकर आतकित रहते है । कुसुम द्वारा एक दिन मालिन को फलो की चोरी के कारण पुलिस के हवाले कर देने पर जब परेश इसका विरोध करता है तो कुसुम अपने आत्मसम्मान के रक्षा के लिए पागल हो उठती है । परन्तु उसी दिन माली की दरिद्रता देख उसे अपनी गलती का एहसास हो जाता है । और उसकी आखे खुल जाती है । इस कहानी के माध्यम से भारतीय एव पाश्चात्य सस्कृति की सुन्दर तुलना लेखिका द्वारा की गयी है ।

---

[1] मन की देन, रागिनी, पृ0 88।

भारतीय समाज मे नारी पति को ही स्वामी मानती है और उसी की सेवा मे अपना सम्पूर्ण जीवन गुजार देती है । *'रिक्ता'* की कमला अपने आपको सम्पूर्ण जीवन तक पति से इसलिए दूर रखती है कि तपेदिक की रोगिणी होने के कारण कही यह रोग उसके पति को न लग जाय और सम्पूर्ण जीवन अपनी इच्छाओ एव वासनाओ का दमन करती रहती है । *'सान्ध्य तारा'* मे भारतीय स्त्री के जीवन का और भी अलग स्वरूप देखने को मिलता है । उर्मिला और सुकुमार का विवाह होने के पश्चात सुकुमार विदेश चला जाता है और पति को ही सब कुछ मानने वाली उर्मिला त्याग और तपस्या के रूप मे भारतीय सस्कृति का उत्कृष्ट उदाहरण है इसके विपरित पश्चिमी सभ्यता मे स्त्री एक पति के होते हुए भी किसी अन्य से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर सकती है । पाश्चात्य समाज मे स्त्री एव पुरूष का स्वय पर कोई अकुश नही होता । *'पहचान'* की हटी पुत्री डिना और पति के होते हुए भी राले से विवाह करती है । पाश्चातय दाम्पत्य जीवन की वास्तविक झॉकी लेखिका द्वारा इस कहानी मे दिखाई गयी है ।

श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान

श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान का नाम हिन्दी की प्रमुख लेखिका श्रीमती महादेवी वर्मा के साथ लिया जाता है और वे अपने समकालीन कथा लेखिकाओ उषा देवी मित्रा, होमवती देवी से कही भी कमतर नही आकी जा सकती । इन लेखिकाओ के मुकाबले सुभद्रा जी की कहानियो का अलग रग–रूप और रस है । इनकी प्रमुख रचनाये *'बिखरे मोती' 'उन्मादिनी'* एव *'सीधे–साधे चित्र'* है । घरेलू वातावरण मे लिखी गयी इनकी पारिवारिक कहानियॉ स्त्री की विवशता आदर्श मातृत्व, पारिवारिक परस्पर प्रेम, ईर्ष्या द्वेष आदि पर आधारित है ।

सुभद्रा जी स्त्री स्वतत्रता की पक्षधर थी जबकि वे स्वय एक परम्परावादी घर मे पली बढी थी । जहॉ पर उनकी मॉ मात्र नौ साल मे ब्याह कर आयी थी और आजीवन ड्योढी के बाहर कदम नही रखा । सुभद्रा जी ने स्वय बदले जमाने के साथ अपने भाइयो एव बहनो के साथ जागृति एव स्त्री शिक्षा का प्रचार प्रसार किया । स्त्री के सदर्भ मे उनका विचार था कि स्त्री की अपनी इच्छाये है और उन्हे पूरा करने का उसे पूरा अधिकार है । उनके अनुसार———————

> **'मनुष्य की आत्मा स्वतत्र है फिर चाहे वह स्त्री के अन्दर वास करती है अथवा पुरूष के अन्दर । इसी से पुरूष और स्त्री अपना–अपना व्यक्तित्व अलग रखता है ।'[1]**

लेखिका ने स्त्री के जीवन काल के जिस पक्ष को अधिक भेदा है वह है, विवाहोपरान्त परिवार मे स्त्री की विवशता । कहने को तो हिन्दू–समाज स्त्री को अर्धांगनी, ग्रृहस्वामिनी, पूज्यनिया आदि अलकारो से विभूषित करता रहा है, परन्तु व्यवहारिक रूप मे स्त्री की दशा अत्यन्त दयनीय है । गृहस्वामिनी या अर्धांगिनी कही जाने वाली स्त्री का अपने ही घर मे ही कोई अधिकार नही होता । अपने लेखन के माध्यम से लेखिका ने पारिवारिक समस्याओ से रात–दिन जूझती,

---

[1] उन्मादिनी – निवेदन।

पिसती स्त्री की विवशताओ का अत्यन्त हृदय–द्रावक, करूण चित्रण प्रस्तुत किया है ।

इनकी कहानियो मे पुरूष और स्त्री को लेकर ऐसी कहानियॉ मिलती है जो लेखिका के उदार विचारो से अवगत कराती है । जहॉ वह चाहती है कि पत्नी का व्यक्तित्व पुरूष के व्यक्तित्व मे समाहित न हो जाय अपितु उसके व्यक्तित्व का एक अलग अस्तितव हो । सुभद्रा देवी का विवाह लक्ष्मण सिह चौहान से हुआ जो स्वय आजाद विचारो वाले कर्मठ देशभक्त थे । और उनकी कहानी दृष्टिकोण में यह सकेत मिलता है कि उनके पति ने उनकी इच्छाओ पर कभी अकुश नही लगाया जैसा कि आम परिवारो मे होता है ।

सुभद्रा जी एक ममतामयी मॉ थी और भारतीय माताये अपने सन्तान के लिए क्या नही कर सकती-----

> **'सन्तान के लिए हिन्दू नारी क्या नही कर सकती। उसके कल्याण के लिए अपना तन मन सब कुछ न्यौछावर कर सकती है – प्रसन्नता से ।'[1]**

सुभद्रा जी ने अपनी कहानियो मे नारी के परम–रूप मातृत्व का सुन्दर चित्राकन किया है । *'हीगवाला'* की सावित्री दगे के भय से आक्रात. अपने बच्चो को अनिष्ठ से बचाने हेतु सभी देवी देवताओ की प्रार्थना करने लगती है ।

> **'सावित्री पागल सी हो गयी, उसे रह–रह कर लाशों के बीच अपने बच्चे तडपते दिखाई पडते । बच्चो की मंगल कामना के लिए उसने सारे देवी देवता मान डाले ।'[2]**

मातृत्व का इतना सजीव और सटीक चित्रण दुर्लभ ही मिलता है । *'ग्रामीणा'* की नन्दो, *'मगला'* मे मंगला की मॉ ऐसी ही मातृत्व भावना प्रदर्शित करती है । अविवाहिता गौरी अपने मॉ के मना करने पर भी नवयुवक

---

[1] सीधे–सादे चित्र, कल्याणी, पृ0 29।
[2] सीधे–सादे चित्र, हीगवाला, पृ0 54

तहसीलदार को पति के रूप मे अस्वीकार करके विधुर काग्रेस सेक्रेटरी सीताराम की पत्नी बनना स्वीकार कर उनके बच्चो के पास जाने के लिए तडपने लगती है और अपने मॉ के मना करने पर कहती है ---

> **'नहीं मॉ, नही, मै पागल नही हूँ । बच्चो को तुम भी जानती हो । उनके पिता को राजद्रोह में सालभर की सजा हो गयी है । बच्चे छोटे है । मैं जाऊँगी मॉ, मुझे जाना ही पडेगा ।'**[1]

इसमे एक ओर मॉ अपने सगी पुत्री गौरी की रक्षा एव कुशलता की चिन्ता करती है तो दूसरी और पुत्री देशभक्त के बच्चो पर अपने मातृत्व प्रेम की अनूठी मिसाल पेश करती है । पवित्र ईर्ष्या मे विमला की मॉ जो आधुनिक विचारो वाली महिला थी परन्तु अपने पुत्री के बीमार पडने पर उसके लिए जिसने जो भी बताया मातृत्व के वशीभूत होकर वह सब कुछ करती चली गयी ।

पारिवारिक सम्बन्धो मे लेखिका ने भाई–बहन, देवर–भाभी, मित्र–मित्र के सम्बन्धो की सुन्दर झॉकियॉ दिखाई है । इनकी कहानी *'दृष्टिकोण'* अन्य कहानियो से अलग है । इसमे एक गरीब बाल विधवा विट्टन का वर्णन है । जिसमे प्रमुख पात्र आधुनिक विचारो वाली पढी लिखी बहू निर्मला, बूढी सास एव पति रमाकान्त है । निर्मला के हृदय मे गरीबो, असहायो एव निराश्रित लोगो के प्रति विशेष स्नेह है जबकि स्त्री के दूसरे स्वरूप मे बूढी सास इसकी उलट स्वभाव की है। बाल–विधवा बिट्टन के गर्भवती हो जाने पर उस निराश्रित को घर मे आश्रय देने को लेकर परिवार मे तकरार एव पति द्वारा निर्मला की पिटाई। इसके बावजूद भी पत्नी द्वारा पति के ज्यादतियो के विरूद्ध कोई प्रतिक्रिया न व्यक्त करके अपने घर के सारे काम–काज उसी निष्ठा से करते रहना दिखाया गया है । दोराहे पर खडी एक स्त्री की पारिवारिक व्यथा जिसमे एक ओर पति एव पूज्यनीया सास तो दूसरी ओर नौकर, दलितो, पतितो के लिए अपार स्नेह का सुन्दर समन्वय है ।

---

[1] सीधे–सादे चित्र, कल्याणी, पृ0 13।

इनकी कहानियो *'राही'* एव *'रूपा'* मे मातृत्व भावना का अभाव नही अपितु सतान की ममता, वात्सल्य के वशीभूत होकर एक मॉ ने अपने चरित्र को कलकित कर दिया है । अपने सतान के लिए चोरी एव आत्महत्या तथा जेल तक की यातना सही है । बेरी के भविष्य की भावी भयावह कल्पना मात्र से मॉ बेटी के साथ कुॅए मे कूद पडती है । दुर्भाग्य वश बेटी तो मर जाती है किन्तु मॉ को आजीवन कारावास भोगना पडता है । *'राही'* मे अपने बच्चे की भूख सहन न कर पाने पर मर्यादा का ध्यान न रखकर चोरी करके जेल तक चली जाती है ।

इनकी कहानी *'महुए की बेटी' 'अमराई' 'गुलाब सिह'* मे भाई–बहन का प्रेम दिखाया गया है । *'अमराई'* मे वीर बहनो ने भाइयो की कलाई पर राखी बाधकर देश की रक्षा करने की सौगन्ध दी है————————

'भाई इस राखी की लाज रखना, लडाई के मैदान मे कभी पीठ न दिखाना' ।[1]

गुलाब सिह की बहन शहीदी गौरव के साथ भाई को विदा करती है और उसके जूझ जाने पर स्वय झडा उठा लेती है । दृष्टिकोण की निर्मला बाल विधवा बिट्टन को अपने पति रमाकान्त एव बूढी सास के विरोध के कारण अपने यहॉ आश्रव देने में असमर्थ होने पर अपने भाई ललित मोहन जी के यहॉ भेज देती है और उसे विश्वास है कि उनका भाई उसकी बात नही टालेगा । इनकी कहानियॉ *'होली' 'दृष्टिकोण' 'कदम्ब के फूल' 'ग्रामीण' 'महुए की बेटी' 'आहुति'* आदि कहानियो मे पति–पत्नी के प्रेम के बीच पुरुष वर्ग की शकालु प्रवृत्ति को उजागर किया है ।

सुभाद्रा जी ने अपनी कहानी *'किस्मत' 'नारी ह्रदय' 'एकादशी' 'कल्याणी' 'असमजस'* मे भारतीय विधवा नारी की दयनीय, सोचनीय दशा का वर्णन किया है । *'एकादशी'* मे भारतीय समाज के कठोर सयमो मे पली विधवा ब्राह्मणी बालिका सामाजिक दुर्बलताओ के कारण मुसलमान की पत्नी होना स्वीकार करती है । परन्तु दूसरी ओर डा0 मिश्रा के कहने पर भी शोरबा नही पीती और

---

[1] बिखरे मोती, अमरायी, पृ0 94 ।

कहती है आज एकादशी है । यह कथन जो उसने अपनी दस–वर्षीय उम्र मे बाल विधवा रहते हुए डा0 मिश्रा से कहा था पुन दोहराकर अपने दृढ निश्चय का अनूठा उदाहरण पेश करती है । किस्मत की बाल विधवा किशोरी अपने सौतेली सास मुन्नी की मॉ के अत्याचारो से तिल–तिल जलकर भस्म होती है । वही *'नारी ह्रदय'* की विधवा प्रमिला यौवन के उन्माद मे अपना सर्वस्व नाश कर लेती है ।

सुभद्रा जी विधवा विवाह की समर्थक थी । इन्होने *'असमजस', 'कल्याणी'* मे विधवा पुनर्विवाह समस्या को ही उठाया है परन्तु इनकी कहानियो की नायिकाये पुनर्विवाह से मना कर देती है । *'कल्याणी'* मे जय किशन के पूछने पर कल्याणी उत्तर देती है––––––––

> **'क्या पुनर्विवाह करना चाहोगी ?**
>
> **पुनर्विवाह । विवाह से सुख मिलने वाला होता तो मेरे पति उस दिन रेल से कट कर न मर जाते । आपके साथ मेरा पुनर्विवाह असभव है ।'[1]**

'असमजस' की विधवा कुसुम पितृहीन होने पर अपने बाल सखा बसत के पुनर्विवाह के प्रस्ताव पर कहती है·––––––––––––––

> **'इतना सब होते हुए भी बसंत, मैन निश्चय किया है कि मै कभी पुनर्विवाह नहीं करुगी । अपने माता–पिता और अपने स्वामी की स्मृति में कलंक न लगाऊंगी । तुम्हारा और मेरा शुद्ध प्रेम है, उसमें वासना और स्वार्थ की गन्ध नही है ।'[2]**

सामाजिक मर्यादाओ और दहेज प्रथा के कारण स्त्रियो मे विवाह समस्या समाज की एक प्रमुख समस्या थी । सुभद्रा जी वर चुनने के मामले मे स्त्रियो की स्वतत्रता की पक्षधर थी । *'गौरी', 'प्रोफेसर–मित्रा' 'मगला'* कहानियॉ पति के

---

[1] सीधे–सादे चित्र, कल्याणी, प0 34–35 ।

[2] उन्मादिनी, असमन्जस, पृ0 34 ।

चुनाव मे स्त्रियो के स्वतत्रता पर ही आधारित है । गौरी अपने माता–पिता द्वारा चुने गये नवयुवक तहसीलदार वर को ठुकराकर देश–प्रेमी सीताराम के देश–प्रेम से अभिभूत होकर एव उनके बच्चो के प्रति ममतामयी भावना से ओतप्रोत होकर विधुर सीताराम के साथ विवाह कर लेती है । *'प्रोफेसर मित्रा'* की मृणाल स्वय ही काति से विवाह करने का निश्चय कर लेती है । मगला यद्यपि मॉ का अनुरोध स्वीकार कर सुदर्शन से विवाह कर लेती है परन्तु अपना दृष्टिकोण रखने मे लज्जा का अनुभव नही करती । *'उन्मादिनी'* की हीना एव *'असमजस'* की कुसुम सामाजिक मर्यादाओ के कारण अपने इच्छित वर कुदन एव बसत से विवाह न कर सकी तथा माता–पिता द्वारा चुने हुए वर से ही विवाह करती है ।

सुभद्रा जी ने अपनी कहानियो मे विवाहित स्त्रियो की समस्याओ को काफी जोरदार ढग से उठाया है । नारी समानता और नारी स्वतत्रता के युग मे भी स्त्री अपने अतर्मन से स्वतत्रता का अनुभव नही कर पायी और आधुनिक विचारो वाली स्वतत्र नारी के लिए सबसे प्रमुख एव गम्भीर समस्या पुरुष मित्रता ही रही । पुरुष वर्ग के रूढियो से जकडी प्राचीन मान्यताओ के कारण ही नारी स्वतत्रता के प्रति उनके दृष्टिकोण मे कोई सैद्धान्तिक परिवर्तन नही आ सका था। *'मझली रानी'* मे पारिवारिक बन्धनो से त्रस्त एव पति के उदासीन रवैये के कारण ही मझली रानी का झुकाव सह्रदय मास्टर जी की ओर होता है । अन्तत उस पर घृणित आरोप लगाकर घर से निकाल दिया जाता है । *'आहुति'* की कुन्तला को पुरुष मित्रता के कारण ही अपने साहित्यिक जीवन की कुर्बानी देनी पड़ती है । *'उन्मादी'* की हीना और *'थाती'* मे मास्टर की बहु अंपने पति के शकालु प्रवृत्ति के कारण ही अपने मित्र से बात नही कर पाती । इनकी कहानियो *'दो साथी'* एव *'पवित्र ईर्ष्या'* मे भी यही समस्या दिखाई गयी है । परन्तु अन्त में वास्तविकता से अवगत होने पर पति द्वारा अपना दृष्टिकोण बदल दिया गया है ।

सुभद्रा जी ने अपनी कहानियो मे पुरुष मित्रता के कारण कभी स्त्रीत्व को कलकित नही होने दिया बल्कि स्त्री पात्रो की नैतिकदृढता तेजस्विता एव सदाचारिता की सदैव रक्षा की है । *'अगूठी की खोज'* मे योगेश द्वारा ब्रजागना की मित्रता मे सोयी हुई ब्रजागना के साथ अनजाने मे व्यभिचार कर लेने पर प्रायश्चित स्वरुप ब्रजागना आत्महत्या कर लेती है । *'अनुरोध'* मे वीणा और निरजन की दोस्ती मे वीणा के पति को कोई आपत्ति नही थी । वीणा निरजन

के काफी निकट होने के बावजूद निरजन की पत्नी का पल पढकर वीणा अनुरोध पूर्वक निरजन को घर भेज देती है ।

सुभद्रा जी की कहानी *'मगला'* मे एक स्वतत्र विचारो वाली स्त्री जो पुरुषो के पुरुषत्व की भॉति अपने स्त्रीत्व और स्वाभिमान को दृढ रखते हुए इन बातो का जोरदार समर्थन किया है कि पुरुष वर्ग कितना भी शिक्षित और आधुनिक क्यो न हो जाय वह सदियो से चले आ रहे अपने वर्चस्व को अपने घर की चहरदीवारी में उसी प्रकार रखना चाहता है जैसा वह सदियो से रखता आया है जैसे मगला का यह कथन–बेटी ने लापरवाही से हसकर जबाब दिया था ।

> 'यह सब अम्मा, विवाह के पहले की बाते हैं । विवाह के बाद पुरुष पत्नी को अपनी सम्पत्ति समझने लगता है । पति चाहे जितना पढा लिखा, विद्वान हो, पब्लिक–प्लेटफार्म पर खडा होकर स्त्री के समान अधिकार और स्वतंत्रता देने के विषय में चाहे जितनी लम्बी–लम्बी स्पीचें–झाडे, पर घर के अन्दर पैर रखते ही पुरुष, पुरुष हो जाता है । स्त्री यदि उसकी इच्छाओं की अपनी इच्छा न बना ले, उसके इशारे पर ऑख–कान बन्द करके न चले, तो खैर नहीं पास–पडोस के घरो में इन शिक्षित परिवारों मे जो कुछ होता है जानती हो । मे किसी के इशारे पर ऑख–कान बन्द कर नहीं चल सकती । मैं किसी की इच्छा को अपनी इच्छा नहीं बना सकती और सच बात तो यह है कि तुम्हें छोडकर मुझसे कहीं जाया न जायेगा । तुम जिसके साथ मुझे ब्याहोगी वह मुझे अपने साथ जरूर ले जाना चाहेगा, अभी चाहे जो कुछ भी कहे ।'[1]

सुभद्रा जी ने उस समय कहानियॉ लिखी जब देश मे राजनितिक स्वतत्रता प्राप्त करने हेतु सग्राम एव सामाजिक सुधारो हेतु आन्दोलन अपनी पराकाष्ठा पर थे । इनका उद्देश्य नारी शोषण, विधवा–विवाह, नारी–स्वतत्रता वेश्योद्वार आदि समस्याओ को समाज के सम्मुख प्रस्तुत करना था ।

---

[1] सीधे–सादे चित्र, मगला, पृ0 118।

श्रीमती होमवती देवी

मेरठ की महादेवी के नाम से सुविख्यात कृष्णा सोबती और मून्नू भण्डारी तथा उनके समकालीन लेखिकाओ से पहले कथा–लेखिकाओ की जिस पीढी ने हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया उनमे होमवती देवी प्रमुख है । इनके प्रमुख कहानी सग्रह निम्न है––––––––––

1 नि सर्ग (कहानी–सग्रह)

2 धरोहर (कहानी–सग्रह)

3 स्वप्न–भग (कहानी–सग्रह)

4 अपना घर (कहानी–सग्रह)

होमवती देवी ने मुख्य रुप से पारिवारिक कहानियॉ ही लिखी है और इनकी कोई ऐसी कहानी नही है जिससे इन्होने पारिवारिक समस्याओ को न उठाया हो । इन्होने कहानी लिखने के उद्देश्य से कभी कहानी नही लिखी अपितु रोजमर्रा की जिन्दगी मे आने वाली समस्याओ एव मर्मव्यथाओ को ही इन्होने अपनी लेखनी से उकेरा है । लेखिका के शब्दो मे –––––––

> **'मैने कभी कहानी लिखने के लिए कहानी लिखी हो यह बात ध्यान मे नहीं आती है । जब ऐसा भला या बुरा अनुभव हुआ तभी जैसे कुछ लिखने हेतु बाध्य हो गयी ।[1]'**

होमवती जी बहुत ही सहृदय और ममतामयी नारी थी । आपकी पारिवारिक कहानियो मे स्त्री की विवशता, फूहडपन, तीज–त्यौहार, पारिवारिक–सम्बन्ध आदि के दर्शन होते है । इनकी कहानियो मे मॉ–पिता, देवरानी–जेठानी, सास–ससुर आदि पारिवारिक सम्बन्धो का वर्णन तो मिलता है परन्तु प्रमुखता से जिस पारिवारिक सम्बन्ध की ओर इन्होने प्रकाश डाला है। वह है, विवाहित नारी, विशेषत. विधवा के प्रति परिवार के सदस्यो का व्यवहार ।

---

[1] स्वप्न भग, मेरी बात।

'रात की मटकी' मे निर्धनता से पीडीत नारी की आर्थिक विवशता एव ग्रामीण निर्धन किसान परिवारो की समस्याओ का वर्णन मिलता है । इस कहानी मे पति–पत्नी की विपन्नता की चरम सीमा देखने को मिलती है———————

> **'इससे अच्छा होता कि दीवारे भी गिर पडती और हम तीनो यही दबकर रह जाते, घर गृहस्थी सभी तो उजड गयी ।'**[1]

बिसाती कहानी मे आर्थिक विपन्नता मे डूबी ऐसी ही करुण कथा जो अपने सतान हेतु जीती है परन्तु अन्तत आर्थिक विवशता उसके पुत्री के मृत्यु का कारण बनती है ।

इनकी प्रमुख कहानी *'गोटे की टोपी'* सर्वाधिक प्रसिद्ध हुई है और इसमे मुख्य रुप से हिन्दू–घराने की वैधव्यता का वर्णन है । यह एक उपदेशात्मक कहानी है कि विधवाओ की रक्षा का भार आजकल के नौजवानो को लेना चाहिए ताकि विधवा विवाह को प्रोत्साहन मिल सके । इस कहानी मे पार्वती जो घर की छोटी विधवा बहू है अपने जेठ–जेठानी के आश्रय मे रहते हुए पूरे घर के काम–काज का बोझ अपने कंधो पर धोते हुए जीवन यापन करती है । पार्वती की भतीजी मजरी जो विधवा हो जाने पर अपने नन्हे बेटे प्रवाल के साथ पार्वती के घर आश्रय मागती है । विधवा पार्वती मजरी एव उसके बेटे प्रवालं को अपने यहॉ आश्रय तो दे देती है परन्तु इस कारण जेठ–जेठानी की झिडकियॉ और ताना सुनने को बाध्य होती है । घर मे जेठ–जेठानी का इकलौता बेटा नवल हमेशा अपनी चाची पार्वती एवं मजरी का पक्ष लेता है । मजरी नवजवान एव अनिद्य सुन्दरी भी है । नवल का उसकी तरफ झुकाव बढता जाता है । दशहरे के त्यौहार पर नवल के ममेरी बहन उमा के आ जाने पर प्रवाल द्वारा उमा के बेटे की *'गोटे की टोपी'* पहन लेने पर घर मे कुहराम मच जाता है क्योकि गोटे की टोपी केवल वही पहन सकता है जिसके पिता जिन्दा हो । अन्तत

---

[1] धरोहर, राव की मटकी, पृ0 13।

पारिवारिक विरोधो के बावजूद नवल आत्मनिर्भर होने के पश्चात मजरी से शादी कर कहानी का सुखद अन्त करता है ।

पति की मृत्यु के पश्चात होमवती जी को स्वय सामाजिक एव पारिवारिक समस्याओ से जूझना पडा था । यही कारण है कि इनकी कहानियो *'गोटे की टोपी', 'पीतल की चूडिया', 'अपना घर', 'कहानी का अन्त', 'नारीत्व', 'अन्तिम सहारा'* आदि मे यह दिखाया गया है कि घर के सारे काम–काज करने के बावजूद विधवाये किस प्रकार तिरस्कृत रहती है । विधवा नारी की दयनीय दशा और भी करुण हो जाती है जब उसे स्वय अपने पुत्र एव बहू द्वारा तिरस्कार झेलना पडता है । *'पीतल की चूडिया'* मे जीवन की मॉ डाक्टर से प्रार्थना करती है ।

> **'बेटा मेरी आंखे अच्छी मत करो और फोड दो या जहर देकर मार ही दो, तुम्हारा बडा पुन्न होगा ।'[1]**

होमवती देवी ने अपने कहानी *'गोटे की टोपी', 'आधार', 'अन्तिम सहारा'* मे विधवा विवाह का समर्थन तो अवश्य किया है परन्तु विधवाओ के सम्मान व मर्यादा की रक्षा करते हुए ही इस समस्या का समाधान प्रस्तुत किया है । *'गोटी की टोपी'* मे नवल स्वंय मजरी से कहता है–––––––––

> **'न तुम्हें किसी चीज का लोभ है और न जरुरत ही है परन्तु मंजरी प्रवाल को तो एक पिता की जरुरत महसूस होती है ।'[2]**

इनकी कहानियो *'अन्तिम सहारा', स्वाभिमानी', गोटी की टोपी'* मे विधवा स्त्रियों के प्रति सास का निर्मम व्यवहार दिखाया गया है । *'अन्तिम सहारा'* की लीला एव *'गोटे की टोपी'* की पार्वती एव मजरी विधवा होने कारण अपने सास–ससुर एव जेठ–जेठानी के क्रूरता पूर्ण व्यवहारो का सहन करती हुई जीवन यापन करती है । *'स्वाभिमानी'* मे एक ऐसी ममतामयी सास का वर्णन मिलता है

---

[1] धरोहर, पीतल की चुडियॉ, पृ0 15।

[2] नि सर्ग, गोटे की टोपी, पृ0 52।

जो अपनी विधवा बहू को पुत्र की मृत्यु का कारण नही मानती अपितु उसके हृदय मे उसके प्रति अनुराग, करुणा एव ममता भरी है ।

भारतीय समाज मे पुरुष वर्ग तो कई विवाह करने को स्वतत्र था, परन्तु स्त्रियॉ इससे वचित रखी गयी है । भारतीय समाज मे ऐसे कई उदाहारण मिलते है जहॉ पत्नी के मरते ही तत्काल रिश्ते आने लगते है । मॉ कहानी के कृपाशकर के पिता तेरहवी होते ही कहते है------

> 'सोच लो किस लडकी को कितने नम्बर देते हो, देर करने पर तो रुला–खुला कूडा–कचरा ही हाथ लगता है ।'[1]

भारतीय सस्कृति आचार विचार मे रुचि रखने वाली होमवती देवी को सुधड सुन्दर एव व्यवस्थित गृहस्थ जीवन बहुत पसन्द था । फूहड स्त्रियो के प्रति लेखिका के हृदय मे सहानुभूति का अभाव था । नारी के फूहडपन पर लेखिका खीझती हुई दिखाई पडती है । *'शशाक', 'गृहणी', 'विडम्बना'* आदि कहानियो मे फूहड स्त्रियो के जीवन की झाकी प्रस्तुत की गयी है । स्त्री के फूहडपन की एक निर्मम आलोचना करती हुई कहती है ------

> **'माथे पर लगी हुई सिन्दुर के बेदी बिगाडकर नाक पर एक चौडी रेखा खीचती हुई फैल गयी थी । आखो मे काजल के साथ ढीठ भी कम न थी और पान की लाली ओठों की सीमा पार करके ठोडी तक आ गयी थी ।'**

---

[1] अपना घर, मॉ, पृ0 135।

इनकी कहानी *'शशाक'* के शशाक एव *'गृहणी'* के विनय जो शिक्षित एव सभ्य युवक है, परन्तु दुर्भाग्यवश सुन्दर, सुशील और चतुर पत्नी न मिलने पर इन दोनो का जीवन नरक हो जाता है ।

होमवती जी का हृदय वात्सल्य–रस से परिपूर्ण था अत उनकी कहानियॉ *'बिसाती'*, *'युगातर'*, *'अपना घर'* मे माता–पिता के वात्सल्य का मार्मिक चित्रण दिखता है । इनकी कहानियो *'प्रायश्चित'* एव *'नारीत्व'* मे भाभी एव देवर के रिश्तों को दिखाया गया है जहॉ *'नारीत्व'* मे देवर त्रिभुवन व भाभी का पवित्र प्रेम है वही *'प्रायश्चित'* मे भाभी गौरा और देवर प्रफुल्ल का प्रेम पति–पत्नी के बीच ईर्ष्या का कारण बनता है ।

इनकी कहानियो का उद्देश्य पारिवारिक और सामाजिक परिपेक्ष्य मे मध्यम और निम्नवर्ग की स्त्रियो की दयनीय दशा का आकलन करके उन्हे समाज के सामने लाना है । एक युग प्रतिनिधित्व लेखिका होने के कारण आपने नारी वर्ग के उत्थान एव सुधार हेतु अपनी लेखनी उठाई है ।

श्रीमती सत्यवती मल्लिक

आधुनिक प्रगतिशील कहानी लेखिकाओ मे सत्यवती मल्लिक का विशिष्ट स्थान है । वह एक परिश्रमी धैर्यशालीनी और आदर्श भारतीय महिला थी । इनके प्रमुख कहानी सग्रह निम्न है ।

1 दो फूल (कहानी–सग्रह)

2 वैशाख की रात (कहानी–सग्रह)

3 दिन–रात (कहानी–सग्रह)

4 नारी ह्रदय की साध (कहानी–सग्रह)

'दो फूल' और *'कैदी'* इनकी श्रेष्ठ कहानियॉ है । *'नारी ह्रदय की साध'*, *'बसन्त या पतझड'* भाई–बहन अद्वितीय रचनाये है । लेखिका ने मात्र एक पक्ति मे नारी ह्रदय के सार को निचोड कर रख दिया है ।

> **'इस तरह चुप–चाप अपना आस्तित्व मिटा देने की चाह ही नारी ह्रदय की साध है ।'[1]**

इनका सर्वोच्च गुण इनकी मातृत्व भावना है । श्री बनारसी दास चतुर्वेदी के शब्दो मे ––––––

> **'बाल विज्ञान का बडा ही आकर्षक वर्णन इनकी रचनाओं में पाया जाता है, कहीं कहीं तो मातृत्व प्रेम का वह स्वच्छन्द झरना इन्होने बहाया है कि पढकर तबीयत खुश हो जाती है ।'[2]**

सत्यवती जी ने *'जीवन सध्या'* नामक कहानी मे नारी के परम प्राकृत मातृत्व का दर्शन कराया है । विधवा गगा जीवन के तमाम थपेडे सहती हुई अपने एक मात्र पुत्र का पालन–पोषण करके उसे शिक्षित बनाती है ।

---

[1] नारी ह्रदय की साध, पृ0 111 ।

[2] दो फूल, द्वितीय स0, परिचय, पृ0 10

पढ–लिखकर उसका पुत्र मनोहर कालेज मे प्रोफेसर बन जाता है। और मॉ–बेटा अपने बन्धु–बान्धवो से दूर नई गृहस्थी बसाकर अपना जीवन व्यतीत करने लगते है । मॉ के जीवन का सबसे सुखद क्षण आता है जब उसके पुत्र मनोहर की शादी तय हो जाती है । जीवन के सबसे उल्लास–पूर्ण क्षण मे ममतामयी मॉ के हृदय के किसी कोने मे यह डर समा जाता है कि विवाह के उपरान्त उसके एक मात्र जिगर के टुकडे पर पुत्र–वधू का अधिकार हो जायेगा । यह सोच कर माता विह्वल हो जाती है––––––

> 'तो क्या मुझे *'बच्चा'* की सम्पूर्ण चिन्ता सम्पूर्ण देखभाल एक नये व्यक्ति के हाथो मे सौप देनी होगी ? यहॉ तक कि उसके आने–जाने के समय गहरी उत्सुकता और अनन्य प्रतीक्षा का मेरा सम्पूर्ण अधिकार भी मुझसे छिन जायेगा ? जिस नन्हें पौधे को वह लगातार बाइस वर्षो से बिना किसी की सहायता के सींचती आयी है, क्या आज एकाएक किसी कोने में बैठकर सिर्फ उसकी छाया का ही आनन्द उठाया करें ? गगा सहसा सपना सा देखने लगी ।'[1]

अपने प्रवासी बेटे की चिन्ता मे मॉ कितना व्याकुल हो उठती है––––––

> 'हसन की मॉ उनींदी सी दशा में उसके स्वप्न देखा करती । रह–रहकर हसन की वे शरारतें, उन पर उसका वह गाली–गलौज वह मार–पीट ये सब स्मृतियॉ उसके हृदय को छलनी बनाया करती । वियोग की घडियों ने हसन की मॉ की दृष्टि में इतना अधिक प्रिय बना दिया कि वह नित्य ही सामने की धूल धूसरित पथ पर अपने प्रवासी बेटे का बाट जोहा करती–एक बार । केवल एक बार यदि उसका बच्चा घर आ जा ।'[2]

---

[1] दो फूल, द्वितीय स0, परिचय, पृ0 19

[2] दो फूल, द्वितीय स0, जीवन सध्या, पृ0 43

भारतीय समाज मे भाई–बहन का प्रेम सबसे पवित्र माना जाता है । भाई–बहन आपस मे चाहे जितना भी लडे परन्तु एक दूसरे का अहित कभी भी नही सोच पाते । *'भाई–बहन'* कहानी मे निर्मला का छोटा भाई कमल जूलूस देखने चला जाता है । निर्मला का यद्यपि कमल से बात–बात पर झगडा होता रहता है परन्तु खोजने पर अपने भाई को न पाकर वह विचलित हो जाती है और भाई के मिल जाने पर भाई–बहन के प्रेम मिलन का दृश्य देखकर हृदय से आनन्द की धारा बहने लगती है ।

> **'कमल को दृढ–पाश में बाधे निर्मला दुगने वेग से रो रही है । उसके कोमल गुलाबी गाल मोटे–मोटे आंसुओं से भीगे जा रहे हैं और वह बार–बार कमल का मुख चूम–चूम कर कह रही है पगले । तू कहॉ चला गया था ? गधे ! तू क्यों चला गया था ?'**[1]

इनकी कहानी *'कब्रिस्तान'* पति–प्रेम पर आधारित है । इसकी नायिका स्टैला सती साध्वी आदर्श पत्नी है । इसका पति जो युद्ध मे गया था वापस नही आता और काफी खोजने के पश्चात अन्तत विवश होकर स्टैला यह मान लेती है कि उसका पति वीर गति को प्राप्त हो गया है । पति प्रेम मे पागल स्टैला एक अज्ञात समाधि को ही पति की समाधि मानकर, पॉच साल तक प्रतिदिन स्टैला उस पर फूल चढाती है और अपना अधिकाश समय उसी समाधि के पास गुजारती है । अन्त मे एक दिन उसका पति वापस आ जाता है और पता चलता है कि युद्ध के दौरान घायल होने पर उसकी याद्दाश्त चली गयी थी जो आपरेशन के पश्चात पुन. वापस आ गयी है। इसके पश्चात भी स्टैला लगातार उस समाधि पर फूल चढाने जाती रहती है । कहानी की समाप्ति लेखिका कितने प्रभाव पूर्व ढग से करती है———————

> **'सदा की भांति स्टैला और चार्ल्स प्रतिवर्ष अपने बन्धु की समाधि पर स्नेहाजलि प्रदर्शित करने जाते है, किन्तु उस बेनाम कब्र के चारों ओर कोई नहीं मंडराता—फूल चढाने कोई भी नहीं आता ।'**[2]

---

[1] दो फूल, द्वितीय स0, भाई–बहन, पृ0 38।

[2] दो फूल, द्वितीय स0, कब्रिस्तान मे, पृ0 32।

सत्यवती ने अपनी कहानियो मे अन्तर्जातीय विवाह, बेरोजगारी, समाज मे व्याप्त सकीर्णता, सामाजिक बन्धन आदि को उठाया है । लेखिका ने विशेषत हिन्दु समाज मे व्याप्त जाति भेद जिसने स्त्रियो की विवाह समस्या को और जटिल बना दिया था। अपनी कहानी *'श्यामा'* के माध्यम से समाधान प्रस्तुत करती हुई दिखाई देती है । *'श्यामा'* का मोहन शहर की पढी–लिखि एव सुसकृत कन्या से विवाह न कर देहात की एक सुन्दर, अनपढ एव गवार लडकी से शादी करता है ।*'बुत'* कहानी मे इन्होने ग्रामीण परिवारो की पर्दा–प्रथा, रीति–रिवाज तथा आचार विचार पर प्रकाश डाला है।

'एक सन्ध्या', 'डायरीसे', 'बेकारी मे', 'माली की लडकी', 'उलझन' कहानियों मे लेखिका ने समाज के दलित, कुचलित एव पीडितो की समस्याओ को दर्शाया है । *'एक सन्ध्या'* मे मजदूर की बेटी के तागे के नीचे आ जाने से लेखिका का हृदय चीत्कार उठता है जो लेखिका के कोमल नारी हृदय की वास्तविक सहानुभूति दर्शाता है ।

> **'उसका क्रन्दन मुझे जाने क्यों अपने मोहनी–कैलाश के रोने की भांति लगा । मन मे आया उसे हृदय से लगा लूँ–उसकी समस्त पीडा अपने में कस कर समेट लूँ।[1]'**

इनके कहानियो का उद्देश्य मानव–जीवन के विभिन्न पहलुओ पर प्रकाश डालना तथा नारी जीवन के दुख क्लेश एव समाज के निम्न वर्गो के प्रति सहानुभूति प्रकट करना है । कहानी *'दो फूल'* के सदर्भ मे अज्ञेय जी का यह कथन काफी सटीक है ।

'*दो फूल'* एक ऐसे व्यक्ति के मनोभावो का प्रतिबिम्ब है जिसकी सौन्दर्यानुभूति औसत से काफी ज्यादा है । मानव जीवन के खासकर नारी जीवन के दुःख–क्लेश का जिक्र पुस्तक में है किन्तु उसे लेखिका का सम्बन्ध सौन्दर्य का खोज करने वाले का नहीं । यही सत्यवती जी की कहानियों की विशेषता है और यही उनका प्रधान गुण भी है । सौन्दर्य की अनुभूति अत्यन्त तीखी है, जिन कहानियों में उन्होंने उस सौन्दर्य की झांकी पाठक को देने का प्रयत्न किया है, उनमें उन्हें बडी सफलता मिली है ।'[2]

---

[1] वैशाख की एक रात, एक सध्या, पृ0 8।
[2] त्रिशकु, अज्ञेय, पृ0 107।

श्रीमती महादेवी वर्मा

महादेवी वर्मा के *'अतीत के चलचित्र'* और *'स्मृति की रेखाये'* सस्मरण है अथवा कहानी इस पर विशेष मतभेद रहा है । ये सस्मरण कहानी के ढग पर लिखे गये है ।*'घीसा'* तो कहानी के इतना निकट पहुँच गया है कि उसे अनेक कहानी सग्रहो मे स्थान मिल गया है । शान्ति प्रिय द्विवेदी ने महादेवी वर्मा के इन रेखा चित्रो को *'संस्मरण मे कहानी और कहानी मे सस्मरण'* कहा है ।

महादेवी वर्मा की कहानियो मे देहात की अशिक्षित जनता की आर्थिक दुर्दशा एव स्त्रियो पर होने वाले अत्याचारो का करुण वर्णन है । सग्रह की पहली कहानी *'रामा'* मे एक ग्रामीण नौकर के जीवन की झाकी प्रस्तुत की है। छोटेपन मे अपना घर छोडकर निकला रामा महादेवी के यहॉ ही कार्य करता रहा। महादेवी के अन्दर पुरुष दम्भ के प्रति कितना आक्रोश था । इन पक्तियो से स्पष्ट है—————————

> 'हमारा मुँह–हाथ धुलाना कोई सहज अनुष्ठान नही था, क्योंकि रामा को *'दूध बताशा राजा खाय'* का महामन्त्र लगातार जपना ही पडता था, साथ ही हम एक दूसरे को राजा बनना भी स्वीकार नही करना चाहते थे । रामा जब मुझे राजा कहता तब नन्हे बाबू चिडिया की चोंच जैसा मुंह खोल कर बोल उठता–'लामा, इन्हें कौ लाजा कहते हो ?' 'र' कहने में भी असमर्थ उस छोटे पुरुष का दम्भ मुझे बहुत अस्थिर कर देता था ।'[1]

यही पुरुषो का दम्भ महादेवी जी को सदैव से अस्वीकार रहा । शायद इसी कारण इन्होने एकाकी जीवन अगीकार किया। जिस बडी बहन को अपने भाई के तोतले पन पर मुग्ध होना चाहिए उसका यह कहना लामा इन्हे क्यों लाजा कहते हो अधिक खटकता है । और यही कारण था कि वे जीवन भर

---

[1] रामा, अतित के चलचित्र।

अकेली रही और वे समता के स्तर पर किसी को अपने बराबर नही समझती थी।

इनके *'अतीत के चलचित्र'* मे ग्यारह रेखाचित्र सग्रहित है । इनकी अधिकाशत रचनाये पुरुषो के अत्याचार से पीडित नारियो के दु ख–दर्द भरी कथा है । इनकी चार रचनाये रामू, बदलू, अलोपी ओर घीसा पुरुषो की दर्द भरी कहानियॉ है । नारी आधारित इनकी प्रमुख कहानियॉ *'भाभी', 'सबिया', 'बिट्टो', 'लछमा'* है शान्ति प्रिय द्विवेदी के अनुसार––––––

> 'हमारे साहित्य मे पुरुष की ऑखों से देखा हुआ समाज पर्याप्त आ चुका है, किन्तु यह पहला गम्भीर प्रयत्न है जो नारी की ऑखों से समाज का चित्रोद्घाटन करता है । शरद ने समाज की जिस मर्यादा का भार देवियो के कन्धो पर डाल दिया है, *'अतीत के चलचित्र'* मे महादेवी ने उसी ही सम्हाला है । यह पुस्तक एक स्वच्छ सामाजिक दर्पण है अत्याचारी इसमें अपनी मुखाकृति देख सकते है और नारी अपनी साधना का प्रकाश । इसका प्रत्येक आख्यान साचो में ढली सुघर सृष्टि की तरह सुडौल है । कवि होने के कारण महादेवी की भाषा में रसात्मकता और चित्र मनो रमता है किन्तु कवित्व के नीचे वस्तुतत्व दब नहीं गया है। बल्कि वह ह्रदय स्निग्ध होकर पत्थर से संगमरमर हो गया है । काव्य के मानस लोक की महादेवी का समाज लोक *'अतीत के चलचित्र'* में है । उनकी कविताओं में अनुभूतियों का संगीत है, उनके संस्मरणों में अनुभूतियों की स्वरलिपि, उसके जीवन का अनुभव सूत्र । शरद की आर्य कन्यायें यदि अपने संस्मरण स्वंय लिखती है, तो उनकी कथा का जो वास्तविक और सात्विक रुप होता वह इन जीवित कहानियों में

> है। *'स्मृति की रेखाये'* सस्मरण से अधिक कथा निबन्ध बन गयी है । तथापि इनमे भी रसात्मकता और चित्रात्मकता है । पात्रो का चरित्र चित्रण इतना सजीव है कि मानों वे पृथ्वी से उठाकर शब्दो मे रोक दिये गये हैं ।'[1]

'अतीत के चलचित्र' मे *'घीसा'* एक प्रमुख रचना है और घीसा की मॉ जो पति के देहान्त के पश्चात मेहनत मजदूरी करते समय अपने बालक को जमीन पर पेट के बल लिटा देती है और वह घिसट–घिसट कर मॉ के पास पहुँचने कोशिश करता है और इसी कारण उसका नाम *'घीसा'* पडा । *'घीसा'* की मॉ परित्यक्ता का जीवन इसलिए बिताती है क्योकि वह सिह की *'मेहरारु'* होकर गीदडन का साथ देना अपना अधर्म समझती है । *'घीसा'* का पिता जो जाति से कोरी है *'घीसा'* के पैदा होने के छ माह पूर्व ही दिवगत हो जाता है और क्रूर समाज द्वारा छ महीने को एक साल बताकर उसे समाज से तिरस्कृत कर देते है क्योकि वह गॉव के कुआरे और दूसरे विधुरो द्वारा अपनी वैधव्यता की नैयापार कराने से इन्कार कर देती है । एक नीच जाति की विधवा का यह घमड कि वह पति के वियोग मे रोती रहे और दूसरे पुरुष का सानिध्य न ले यह गॉव वालो को कदापि बर्दाश्त नही क्योकि यह अधिकार केवल उच्च जाति के लोगो को ही प्राप्त था ।

इनकी दूसरी एव सबसे छोटी एव प्रमुख कहानी *'भाभी'* है । भाभी लेखिका के पडोस मे रहने वाली एक अभागिन बाल–विधवा है । लेखिका परिवार में सबसे बडी होने के कारण पड़ोस मे रहने वाली बाल–विधवा से भाभी का नाता जोड लेती है । और उसके घर के पिछवाडे स्कूल के रास्ते मे बाल–विधवा बन्धक जैसा जीवन गुजारती है । ओर सामाजिक सम्बन्ध न होने के कारण वह फुर्सत के क्षणो मे दरवाजे पर लगे टाट से बाहर निहारा करती है। इस विधवा को पडोस के सेठ अपने इकलौते बेटे हेतु बहू बनाकर लाये थे परन्तु एक ही वर्ष मे उसकी मृत्यु हो जाने के कारण सारा इल्जाम उसके सर

---

[1] शान्तिप्रिय द्विवेदी, सामयिकी, पृ0 277 ।

मढ दिया गया कि उसी ने ही अपने पति को खा लिया एव उसकी चूडिया तोडकर सादे कपडे पहना, उसे नियम सयम से रहने की हिदायत दे दी गयी। उस परिवार मे जवान होती बाल–विधवा को समाज से दूर एकान्तवास मे जीवन काटने को मजबूर कर दिया गया । समय–समय पर ननद द्वारा भी उसे शारिरिक दण्ड दिये जाते थे । लेखिका जिसे कल्लू की मॉ स्कूल ले आने तथा ले जाने का कार्य करती थी उसी से वह बाल–विधवा के बारे मे अनेक तथ्य मालूम करती रहती थी। और एक दिन स्कूल जाते समय महादेवी वर्मा के फिसल कर गिर जाने पर बाल–विधवा द्वारा अपने घर के अन्दर ले जाकर धुलाई एवं सफाई करने से दोनो के बीच प्रगाढ सम्बन्ध हो जाता है । उस समय समाज मे विधवा की दशा इन पक्तियो मे————————

> 'प्राय' निराहार और निरन्तर मिताहार से दुर्बल देह से वह कितना परिश्रम करती थी यह मेरी बाल बुद्धि से भी क्षिपा न रहता था । जिस प्राकर उसका खडहर जैसे घर और लम्बे–चौडे आगन को बैठ–बैठ कर बुहारना आंगन के कुएं से अपने और ससुर के स्नान के लिए ठहर–ठहर कर पानी खीचना और धोबी के अभाव में मैले कपडो को काठकी मोगरी से पीटते हुए रुक–रुक कर साफ करना मेरी हँसी का साधन बनता था उसी प्रकार केवल जलती लकडियो से प्रकाशित दिन में भी अँधेरी रसोई की कोठरी के घुटते हुए धुऍ में रह–रहकर आता हुआ खॉसी का स्वर, कुछ गीली और कुछ राख से चॉदी–सोने के समान चमकाकर तथा कपडे से पोंछकर रखते समय शिथिल उॅगलियों से छूटते हुए बर्तनो की झनझनाहट मेरे मन मे एक नया विषाद भर देती थी । परन्तु काम चाहे कैसा ही कठिन रहा हो, शरीर चाहे कितना ही क्लान्त रहा हो, मैने न कभी उसकी हॅसी से आभासित मुख मुद्रा में अन्तर पडते देखा, और न कभी काम रुकते देखा' ।[1]

---

[1] भाभी, अतीत के चलचित्र।

लेखिका द्वारा एक दिन उस बाल विधवा के सिर पर रगीन ओढनी मात्र डाल देने पर उसके ससुर एव ननद द्वारा जिस क्रूरता पूर्वक शारीरिक यातना दी जाती है उस भयानक यातना से आक्रात स्वय लेखिका कई दिनो तक ज्वर से पीडित हो जाती है ।

इनकी कहानी *'सबिया'* एक नीची जाति की स्त्री है । जिसका पति बिना बताये गायब हो जाता है । और वह पहले जहॉ मेहतरानी का काम करती थी वहॉ दूसरी के आ जाने पर वह लेखिका के घर अपने अबोध बालक के साथ काम की तलाश मे आती है । बाद मे पता चलता है कि सबिया का पति जिसे वह आज भी अपने सौभाग्य का प्रतीक समझती है । और उसके विरुद्ध कुछ भी सुनना नही पसन्द करती, पडोस की नवविवाहिता जो गोरी एव सुन्दर है के साथ भाग गया है । और सबिया अन्त तक उसका इन्तजार करती है । और उस नवविवाहिता के पति के द्वारा प्रतिशोध की भावना से उसे अपना लेने के प्रस्ताव को *'सविया'* ठुकरा देती है । और यही नही सबिया अपने नकारा पति की बूढी एव अन्धी मॉ का बोझ भी अपने सिर पर लिए रहती है तथा उसे खाना खिलाकर ही स्वय खाती है इस स्थिती पर महादेवी की पुरुष के प्रति तीखी टिप्पणी————————

> **'पुरुष भी विचित्र है । वह अपने छोटे से छोटे सुख के लिए स्त्री को बड़े से बडा दु:ख दे डालता है । और ऐसी निश्चिन्तता से, मानों वह स्त्री को उसका प्राप्य ही दे रहा है । सभी कर्तव्यों को वह चीनी से ढकी कुनैन के समान मीठे–मीठे रुप में ही चाहता है जैसे ही कटुता का आभास मिला कि उसकी पहली प्रवृत्ति सब कुछ जहॉ–का–तहॉ पटक कर भाग खडे होने की होती है ।'[1]**

---

[1] सबिया, अतीत के चलचित्र।

कुछ समय के पश्चात सबिया का नकारा पति मैकू के घर वापस लौटने पर वह उसे खुशी पूर्वक अपनाकर सत्यनारायण की कथा सुनती है। परन्तु मैकू द्वारा यह बतलाने पर कि उसके साथ नवविवाहिता गेदा भी आयी है वह अपनी नयी रेशमी साडी उसे देकर अपने घर लाती है तथा मैकू के साथ–साथ उसकी दूसरी पत्नी गेदा और बूढी मॉ का भी बोझ उठाती है । सबिया अपनी सौतन को तो घर ले आती है, पर उसका दिल टूट जाता है क्योकि उसका निष्ठुर पति न उसकी कुशल–क्षेम पूछता है, न ही बच्चो की चिन्ता करता है । और हर वक्त गेदा के इर्द–गिर्द मडराता रहता है । और बाद मे बिरादरी के दबाव मे गेदा को दूसरी पत्नी रखने के दण्ड स्वरुप लेखिका से कर्ज लेकर भोज की भी व्यवस्था करती है ।

अन्त मे सबिया के घर पर गेदा का सर्वसम्मत रुप से स्वीकार कर लेने के बायजूद दर्द कम नही होता और गेदा द्वारा लडने झगडने पर भी बिना चिन्ता किये उसे अपने आचल की छाया प्रदान करती है । और जब कोई उसके निर्मोही, निर्लज्ज, अकर्मण्य पति मैकू की बुराई करता तो वह कहती की यदि उसका पति पागल अथवा किसी भयानक रोग से ग्रस्त होता तो लोग उसे क्या सलाह देते ऐसा प्रश्न कर पुरुष समाज को निरुत्तर कर सोचने पर मजबूर कर देती है ।

श्रीमती कमला देवी चौधरी

श्रीमती कमला देवी की समाज सेवा मे विशेष रुचि रही है। स्वतत्रता के लिए इन्होने कई बार जेल यात्रा भी की। कहानी लिखने की प्रेरणा के सदर्भ मे इनका मत है कि इन्हें कहानी लेखन की प्रेरणा राष्ट्र पिता महात्मा गॉधी से मिली सन् 1933 के विशाल भारत मे आपकी प्रथम कहानी *'पागल'* प्रकाशित हुई थी । इसके सबन्ध मे ये लिखती है---

> **'मुझे भली प्रकार स्मरण है कि *'उन्माद'* में सग्रहित पहली कहानी *'पागल'* लिखने के पूर्व कभी कहानी लिखने की प्रेरणा भी मन में उत्पन्न नही हुई थी, फिर भी मेरी यह सर्वप्रथम कहानी कलाकारों की दृष्टि से सफल कहानी आकी गई ।'**[1]

इनकी दूसरी कहानी *'भिखमगे की बिटिया'* है इनके प्रमुख कहानी सग्रह निम्न है---

1 उन्माद (साहित्य सेवा सदन मेरठ)

2 पिकनिक (सरस्वती प्रेस बनारस)

3. यात्रा (नवयुग साहित्य सदन इन्दौर)

4 बेल पत्र (निष्काम प्रेस मेरठ)

कमला देवी चौधरी की पारिवारिक जीवन की कहानियो मे विषय की अनेक रुपता है। इनकी प्रमुख सामाजिक कहानियॉ *साधना का उन्माद, श्रम, मधुरिमा भिखमगे की बिटिया, पागल श्रमी की अभिलाषा, मेरी रानी, कर्कशा, प्रायश्चित, त्याग, ऑखे खुली स्वप्न, करुणा, वीणा, कर्तव्य, पत, रोना,सुरिया, पतन, कन्यादान, नीता, कैलासा, दीदी, पिकनिक हार* आदि है ।

---

[1] उन्माद, मेरी कहानियो का सग्रह, प्रस्तावना, पृ0 21।

स्त्री होने के कारण लेखिका ने भारतीय स्त्री के मनोभावो को बखूबी समझा है । इनकी पारिवारिक जीवन की कहानियो मे दरिद्रता की चक्की मे पिसने वाले पात्रो एव सतीत्व की रक्षा मे सतत् प्रयत्नशील स्त्रियो की पर्याप्त सख्या है । इनकी प्राय सभी कहानियो मे भारतीय पारिवारिक जीवन और उनकी विविध समस्याओं का चित्रण मिलता है । और इनकी रचनाओ से मनोरजन ही नही अपितु आदर्श जीवन के सदेश मिलते है ।

इनकी कहानी श्रम की *'अभिलाषा'* मे निम्न वर्ग की स्त्री की विवशता का चित्रण मिलता है । इस कहानी मे पति मस्ता धन की चाह मे अपनी पत्नी मोहनियॉ की आबरु तक दाव पर लगा देता है । इन परिस्थितियो मे यदि मोहनियॉ पति का कहना नही मानती तो उसे शारीरिक प्रताडना दी जाती है । अन्यथा स्त्री की बेशकीमती आबरु दाव पर लग जाती है । और दूसरी ओर उसकी जेठानी अपने दुश्चरित पति का विरोध नही कर पाती । इनकी अन्य कहानियॉ वैमनस्य एव कर्तव्य भावना को आधार बनाकर लिखि गयी है । इनकी कहानियों मे प्रेम के भिन्न–भिन्न रुपो का भिन्न–भिन्न दृष्टिकोण से वर्णन किया गया है । इन कहानियो मे कही–कही पति–पत्नी का प्रेम जीवन को सुखमय बनाता है तो कहीं पति–पत्नी का परस्पर असन्तुष्ट होकर उनके कुढते हुए और कष्ट भोगते हुए जीवन का वर्णन है ।

स्त्री की कमजोरी प्रेम की भावना होती है । स्त्री पुरुष से स्वाभाविक रुप से प्रेम करती है । और अच्छे से अच्छे प्रलोभन भी प्रेम के आगे स्त्री हेतु तुच्छ होते है । पति–पत्नी का प्रेम गृहस्थ जीवन को सुखमय बनाता है। पति–पत्नी के प्रति अपने प्रेम–अभाव की पूर्ति आभूषणो एव वस्त्रो आदि से करना चाहता है। जबकि स्त्री जो प्रेम पुरुष को देती है उसी प्रेम की आकाक्षा भी करती है । पति से प्रेम न मिलने पर पत्नी का जीवन असतुष्ट हो जाता है। और सदैव वह अतृप्त प्रेम का अनुभव करती है । स्त्री के अतृप्त प्रेम की पूर्ति सासारिक प्रलोभन से नही की जा सकती । इस भाव की मार्मिक अभिव्यजना *'साधना का उन्माद'* कहानी मे की गयी है । इनकी *'करुणा'* मे भाभी देवर का पवित्र सम्बन्ध आचरण द्वारा चरितार्थ हुआ है । और इसमें विधवा भाभी करुणा का हृदय अपने

देवर के प्रति ममत्व प्रेम से द्रवित हो उठता है । गीता मे देवर–भाभी का पवित्र प्रेम कलुषित हो गया है। पारिवारिक जीवन के अन्तर्गत इन्होने विधवाओ की परिस्थिति और उनके जीवन की बार–बार व्याख्या की है । और इनकी रचनाओ मे पुनीता और पतिता दोनो प्रकर की विधवाये दृष्टिगोचर होती है । इनकी कहानियो से यह स्पष्ट होता है कि सभी वर्ग की स्त्रियॉ विवशता का अनुभव करती है। *'कर्तव्य'* पति पत्नी के आदर्श प्रेम और एक दूसरे के प्रति कर्तव्य भावना की कहानी है । इसमे पत्नी उषा अपनी मृत्यु की परवाह न कर अपने पति को बचाना चाहती है जबकि पत्नी को जी जान से चाहने वाला पति मृत्यु भय से पत्नी को तिरस्कृत कर अपना जीवन बचाना चाहता है । रोगी पति जो चलने फिरने मे असमर्थ है भूकम्प के समय पत्नी बच्चे को बाहर छोडकर रोगी पति को बाहर निकालने आती है । और क्षुधित भूमि दोनो को सदा के लिए अपने गर्भ मे छिपा लेती है । *'कर्कशा','सुधिया', हिरिया'* स्वामीभक्त सेविकाये है जो अपनी सम्पूर्ण सेवा जीवन भर की कमाई अपने स्वामिनी को अर्पित कर देती है ।

वीणा नारी ह्रदय के अतर्मन की उथल–पुथल कहानी है । वीणा अमर गायिका है वह जीवन से उदासीन होकर के अपने सगीत लोक मे ही डूबी रहना चाहती है । इसलिए विवाह उसे बाधक प्रतीत होता है । उसका पति शगुन–तारो भरी रात में रात मे उसे अपलक निहारते हुए यह सोचता है कि यह शरीर है या सगमरमर की प्रतिमा वह उसके सौन्दर्य को देखता रहा किन्तु उसका ह्रदय न जीत सका। स्त्री के मन की दुर्बलताओ को चित्रित करने मे लेखिका बेजोड है । नारी स्वय पति के प्रति उपेक्षा दिखा सकती है, किन्तु यह कदापि सहन नही कर सकती कि उसके रहते उसके पति पर किसी अन्य का अधिकार हो । वीणा के ह्रदय का सोया हुआ नारीत्व उस समय जागृत हो जाता है जब रहस्यमयी भाभी आकर शगुन का चार्ज लेती है । यह देखकर वीणा मे अचानक स्त्रीत्व जागृत हो उठता है । *'हार'* की नायिका रमला जिसके ह्रदय मे पति शब्द के लिए आदर है, पति के सेवा के लिए चाह है । उसका ह्रदय पति पर न्यौछावर हो सकता है किन्तु पति के मुख से आति हुई मदिरा की गध को

नही सह सकती । इनकी कहानियो मे नवयुवक और नवयुवतियो के प्रेम का अन्त कही सुखमय होता है और कही दुखमय ।

इनके पारिवारिक जीवन की कहानियो मे दरिद्रता मे जीवन यापन करने वाली स्त्रियो और सतीत्व की रक्षा मे प्रयत्यनशील स्त्रियो की सख्या की बहुतायत है । *'पागल'* भिखमगे की बिटिया, प्रायश्चित मे अछूतो की समस्या और उनकी कठिनाईयो का सजीव वर्णन किया गया है । इन्होने अछूत परिवारो की समस्याओ और सवर्ण परिवारो से सम्बन्धित स्त्रियो के जीवन की समस्याओ को अपनी कहानी मे विशेष स्थान दिया है । भ्रम कहानी मे अन्तर्जातीय विवाह का समर्थन किया गया है और *'मधुरिमा'* कहानी मे विवाह पाश मे बधने वाले एक युवक और युवती की कथा दी गई है । अछूतो द्वारा उस समय की तत्कालीन समस्या थी । राष्ट्रपिता महात्मॉ गाधी से प्रेरणा लेकर श्रीमती चौधरी ने इस समस्या को अपनी कहानी मे उतारा है । किन्तु इन्होने अछूतो के उद्धार के मार्ग का वर्णन नही किया है । *'पागल'* मे एक अछूत परिवार की निस्सहायता और उच्चवर्णिय वैद्य की ह्रदय हीनता का वर्णन किया गया है । मृत्यु शैया पर पडे एक अछूत शिशु की परिचर्या के लिए उच्चवर्गीय वैद्य नही आता जिसके परिणाम स्वरुप शिशु की मृत्यु हो जाती है । और उसका पिता पागल हो जाता है । अछूतों की पारिवारिक समस्याओ और उनके कष्टो का वर्णन इन्होने व्यापक रुप से किया है किन्तु उनके उद्धार के मार्ग हेतु कोई निर्देश नही दिया है । *'त्याग'* मे प्रेमिका द्वारा स्वार्थ त्याग कर और परिवार मे अविवाहित रहकर माता की सेवा करने का अद्वितीय उदाहरण दिखाया गया है । *'भिगमंगे की बिटिया'* की अछूत कन्या परवतिया अपमानित ओर तिरस्कृत होकर मृत्यु के द्वारा ही मार्ग से हटती है । *'प्रायश्चित'* मे अछूत कन्या सुखिया के हाथ का पानी पीने मात्र से सनातनत धर्मियो का धर्म नष्ट हो जाता है । प्रायश्चित की सेठानी तथा भिखमगे की बिटिया की मालकिन गाली देकर भी अपनी क्रोधाग्नि शान्त न कर सकी तो निर्दयता पूर्वक बेचारी सुखिया तथा परबतिया की घूसो और तमाचो से पिटाई करती है । *'स्वप्न'* कहानी मे पिता और विधवा कन्या की मानसिक प्रवृत्तियो का विश्लेषण मिलता है । दुराचारी पिता विधवा

कन्या को आश्रम मे विधुर दीक्षित के पास छोड आते है । दीक्षित महात्मा होने के बावजूद नवयौवना सुरीला को सामने पाकर दीक्षित की कामवासना जागृत हो उठती है ।

पुत्र का पुत्री से अधिक महत्व यह भारतीय समाज की एक बहुत बडी कमी रही है । *'आखे खुली'* जो सामाजिक परिपेक्ष्य मे लिखी गयी एक कहानी है। इसमे बालिका सुधा की मनोदशा का बहुत ही सटीक वर्णन है । समाज मे फैला यह भेद माता पिता की दृष्टि मे भी पुत्र एव पुत्री मे अन्तर उतपन्न कर देता है ।

इनकी कहानियो मे इस तरह की भी स्त्रियो का वर्णन है जो कुल की मान मार्यादा की रक्षा के लिए अपना जीवन तक बलिदान कर देती है जैसे *'पत'* की *'तेजो'* । उसके ये सिसकते हुए शब्द जो ह्दय पर एक अमिट छाप छोडते है–

> **'चाचा, मै जीकर क्या करती, मैने तो तुम्हारी पत खो दी, जेल का दाग लग गया'।**[1]

इनकी कहानियो मे साहसी एव विद्रोही स्त्रियॉ दृष्टिगत होती है। और सम्पूर्ण कटिनाई को सहन करती हुई स्वावलम्बी बनती है । जैसे *'प्रायश्चित'* की *'सुखिया', 'त्याग की सरोज', 'त्याज्या'* की *'सवित्री '* आदि । पडित जी से तिरस्कृत सावित्री पति के पैरों पर नही पडती वरन विद्रोही स्वर मे रमेश से कहती है–––

> **'जरा ठहरो मै भी चलती हूॅ । कुत्तो की भॉति केवल रोटी के लिए अब मै इस घर में नही रहूॅगी। मेरे कारण तुम्हारे माथे पर कलक तो लग ही गया सम्भव है मुझे साथ ले चलने मे वह कालिमा कुछ और गहरी हो जाय । जो कुछ भी हो तुम्हें सहना होगा । किन्तु तुम्हारे साथ रहकर, मैं तुम्हारे घर की शान्ति भंग नहीं करुंगी।'**
>
> **मेरे लिए पडे रहने के स्थान की व्यवस्था कर दो, दूसरों की चाकरी करके पेट पालन कर लूगी ।'**[2]

---

[1] पिकनिक, तृतीय सस्करण, पत, पृ0 49।

[2] यात्रा,, साहित्य सेवा सदन, मेरठ, त्याज्या, पृ0 224।

उस समय समाज के अगुआ कहे जाने वालो को भी यह कदापि बर्दाश्त नही था कि उनकी स्त्री किसी अन्य पुरुष की प्रशसा करे अथवा अन्य निकट सम्बन्धी की सहायता ही ले । *'त्याज्या'* के शकालु पडित जी बच्चे की बीमारी में भानजे को बुलाने के प्रस्ताव पर कहते है————————

> **'तेरे हाथ पैर टूट गये है, जो बच्चे की सेवा भी नही कर सकती? पापिष्ठा ! पुत्र की बीमारी के बहाने अपने लिए रंग–रंगेलियां का अवसर ढूढती है ।'**[1]

श्रीमती कमला देवी चौधरी की कहानियो का मूल उद्देश्य आदर्श की स्थापना है । और इनकी पारिवारिक कहानियॉ परिवार मे स्त्री की विवशता चित्रित करने के उद्देश्य से लिखी गई है ।

---

[1] यात्रा, साहित्य सेवा सदन, मेरठ, त्याज्या, पृ0 217 ।

श्रीमती शिवरानी देवी

श्रीमती शिवरानी देवी की कहानियो को प्रेमचन्द की श्रेणी मे रखा जा सकता है । परन्तु इनकी कहानियो मे यथार्थ का सदा अभाव झलकता है । प्रेमचन्द के साहित्यिक जीवन ने इनके अन्दर साहित्यिक रुचि पैदा कर दी और आपने कहानी लेखन का कार्य प्रारम्भ कर दिया । आपकी प्रथम कहानी *'साहस'* चॉद मे प्रकाशित हुई थी। अपनी कहानियो मे इन्होने भारतीय आदर्शो और सास्कृतिक विचारो की ओर अधिक ध्यान दिया है । *'नारी ह्रदय'* और *'कौमुदी'* इनके प्रमुख कहानी सग्रह है तथा *'प्रेमचन्द घर मे'* सस्मरण ।

शिवरानी देवी की कहानियॉ भारतीय परिवार मे नारी की विवशता पारिवारिक सम्बन्धियो के ईर्ष्या, प्रेम, कलह, प्रेम की कहानियॉ है । *'बीती यादे'* उनकी एक सुन्दर ओर सफल कहानी है । युगो से पुरुषो पर आश्रित भारतीय स्त्री जब प्रमुख दासता से मुक्त हुई तो समाज के प्रति उसके अर्धचेतन मन मे घृणा का होना स्वाभाविक था । जिस समाज ने युगो तक दासी बनाकर उसका शोषण किया उस समाज के प्रति स्त्री तो क्या कोई भी मानव मन अपने अन्दर घृणा का भाव रखेगा । आज के युग मे शिक्षित भारतीय स्त्री ने जब परम्परागत वैवाहिक सस्था के प्रति विद्रोह किया तब भी पुरुष प्रधान समाज को अच्छा न लगा । इनकी कहानी *'प्रेमा'* मे प्रेमा आर्थिक रुप से स्वतत्र एव शिक्षित है और जिससे इसका विवाह सम्बन्ध सुनिश्चित किया जाता है वह शौक्षिक रूप से अत्यंत पिछडा है । विवाह को प्रेमा पुरुष की दासता समझती है और प्रश्न करती है कि शादी करके कोई आदमी सुखी हुआ है । अगर बन्धन ही सुख है तो जेल सबसे सुख की प्यारी जगह । *'वधू परीक्षा'* की निर्मला व *'साहस'* की रामप्यारी विवाह करके दासी नही बनना चाहती तथा शादी और समाज के प्रति प्रेमा, निर्मला और रामप्यारी केवल बैद्धिक आक्रोश ही नही अपितु समाज के प्रति परम्परागत विवाह परिपाटी से मुक्ति का भी ऐलान करती है ।

राष्ट्रीय आन्दोलन मे स्त्रियो की महत्तवपूर्ण भागीदारी देखी गयी । शिवरानी जी ने इस सदर्भ मे लिखी गयी अपनी कहानियो मे स्त्री को ही पुरुषो मे राष्ट्रीय की भावना पैदा करते हुए दिखाया है । *'माता', 'हत्यारा', 'जेल मे',*

'गिरफ्तारी' आदि ऐसी ही कहानियॉ है । *'माता'* के दारोगा जो पुलिस महकमे मे है और आन्दोलन का दमन करने को ही अपना कर्तव्य समझते है परन्तु उनकी पत्नी राधारानी और पुत्र हनुमान सच्चे देश प्रेमी है । स्वराज्य की समर्थक राधारानी अपने पति को इस दमन हेतु तथा दमनकारियो का साथ देने के कारण बार–बार कोचती है ।

> **'तुम्हे तो मै गुलामी ओर डडेबाजी के सिवा ओर कुछ करते नहीं देखती । असहयोगियो पर झूठे इल्जाम लगाते हो, और झूठे गवाह बनाते हो ।'[1]**

'हत्यारा' की विधवा रामेश्वरी दूसरो की रोटिया पकाकर चक्की पिसकर अपने पुत्र का लालन पालन करती थी परन्तु राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रारम्भ होने पर वह अपने जीवन के एक मात्र सहारे पुत्र के साथ राष्ट्रीय आन्दोलनो मे लगी रहती है ।*'जेल मे'* की अम्बा राष्ट्रीय आन्दोलनो मे भाग लेने के कारण ही कारागार का दड भुगतती है *'गिरफ्तारी'* के विजय सिह और राजकुमारी राष्ट्रीय आन्दोलन मे भाग लेते हुए दिखाई देते है ।

भारतीय स्त्री मे जागृति का दर्शन शिवरानी जी की *'समझौता'* कहानी मे ललिता के माध्यम से दिखाई देता है ।

> **'मै यही अधिकार लूंगी कि स्त्री ओर पुरुष दोनों का हक हर एक बात में बराबर हो, रत्ती भर का फर्क न हो । पिता की सम्पत्ति पति की सम्पत्ति या ससुर की सम्पत्ति पर स्त्री का उतना ही हक हो जितना पुरुष का होता है । सरकारी नौकरियॉ दोनों को बराबर मिलें, कौसिल के स्थान भी बराबर हो, राय देने का अधिकार भी बराबर हो । सन्तान पर स्त्री का अधिकार पुरुष के बराबर हो और अपने धर्म तथा देह पर भी उसका अपना अधिकार हो उसी तरह जैसे पुरुष का जो धर्म हो, वही धर्म उन्हें भी मानना पडे पिता माता उसे जिसको चाहें दान दे दें ।[2]'**

---

[1] माता, नारी ह्रदय, पृ0 47।

[2] समझौता, नारी ह्रदय, पृ0 120।

शिवारानी जी की कहानियॉ स्त्री की सामाजिक एव राष्ट्रीयता की भावना की ज्वलन्त उदाहरण है । समाज की नारी के हर ऐसे पहलू को उन्होने अपनी कहानी मे स्थान दिया है जैसे दहेज, बाल–विवाह, बहु–विवाह, बहु–पत्नी, समस्या, विमाता समस्या आदि । इनकी कहानियो की नारी मध्यमवर्गीय शिक्षित और निजी स्वतत्रता को चाहने वाली दिखती है । बाल–विवाह पर लिखते हुए इन्होने *'विश्वास'* कहानी की भोली–भाली अबोध–बालिका माया द्वारा भोलेपन से एव विवाह की वास्तविकता से अनभिज्ञ कन्या का जिसकी उम्र मात्र नौ साल है का सजीव चित्रण इस कहानी मे मिलता है ।

> **'सब रस्मों के बाद विवाह का समय आया । गहने और कपडे तो माया ने बडे खुशी से लिए ओर पहने । नाइन सिखा पढकर उसे मंडप में लाई, पर माया ने जब देखा कि वर को बैढने के लिए अच्छा खूब सूरत पीढा मिला और उसे बैठने को केवल एक पत्तल मिली तो वह वर से बोली, मेरा पीढा दे दो, नही मैं गिरा दूंगी । बेचारा वर शरमा गया ।**
>
> **मुन्शी जी बोले– बेटी झगडा नही करना होता ।**
>
> **माया ने बिगडकर कहा– मेरे ही लिए तो पीढा आया था । मेरा तो पीढा, सो मे पत्तल पर बैठू और यह राजा बन के आये है जो पीढा पर बैठेंगे।'[1]**

'प्रेमा' कहानी मे बाल्य–काल मे की गयी सगाई की समस्या को उठाया गया है । किन्तु बडे होने पर समझदार और शिक्षित प्रेमा इस सम्बन्ध को मानने से इनकार कर देती है ।

---

[1] चॉद, जून, 1936, पृ0 117।

शिवरानी देवी ने *'साहस', 'वधू परीक्षा'* और *'नर्स'* नामक कहानियो मे दहेज की समस्या को उठाया है । *'साहस'* कहानी मे धन अभाव के कारण ही पडित दीना नाथ बहुत खोजने पर भी अपनी शिक्षित, सुशील और घर के काम काज मे निपुण पुत्री हेतु सुयोग्य वर न पा सके । और विवश होकर पचपन वर्षीय अमरनाथ से अपनी बेटी का विवाह तय कर देते है । वर महोदय के दो पत्नियो की मृत्यु हो चुकी थी और चार पुत्र थे । *'वधु परिक्षा'* के लाला काली प्रसाद वर तो खोज पाते है परन्तु मुशी माधो प्रसाद के दहेज की माग को पूरा करने के लिए उन्हे अपने घर से हाथ घोना पडा एव पॉच सौ के कर्ज से गुजरना पडा । तब उनकी पुत्री सुयोग्य वर के साथ तराजू पर रखी जा सकेगी। *'नर्स'* कहानी के अमर नाथ अपनी बाल विधवा पुत्री के जटाशकर को विवाह पर इस बात से राजी कर सके कि उसे विलायत जाने हेतु पॉच हजार रुपये दिया जायेगा ।

'बूढी काकी', 'स्मृति', 'सौत', 'वरमाला' और *'विमता'* आदि कहानियों मे शिवरानी देवी ने बहु–विवाह और विमाता समस्या को उठाया है । *'बूढी काकी'* की मन्नो जब पॉच वर्ष की अबोध बालिका थी तभी उसकी मॉ का स्वर्गवास हो जाता है और पुत्री के लालन–पोषण की समस्या को बताकर मुशी गगा प्रसाद दूसरी स्त्री महारानी से विवाह कर लेते है । विमाता से सहानुभुति एव दुलार की कल्पना भी व्यर्थ है । बेचारी अबोध बालिका मन्नो को विमाता ने पिता और बूढी काकी के प्रेम से भी वचित कर दिया । बेचारी मन्नो को तो घर जाते डर मालूम होता था कि नई मॉ डाट न बैठे । *'स्मृति'* की सरोज मॉ की मृत्यु के पश्चात रात दिन विमाता की झिडकियो को झेलना पडता था । और तुच्छ अपराध हेतु मालती ने सरोज को उठाकर जमीन पर पटक दिया और मारा ऊपर से जमीन पर रखे गिलास से वह चोट खा गयी ।

बहुपत्नी की समस्या को लेखिका ने दारोगा गया प्रसाद एव रामनाथ के माध्यम से दिखाया है । गया प्रसाद द्वारा रुपवती स्त्री चन्दा से विवाह कर अपनी पहली रुपहीन पत्नी रुपा एव उसके शिशु का परित्याग कर देने पर रुपा द्वारा चुप–चाप इस अपमान को सहन कर लेना और अपने अबोध शिशु के साथ

शान्ति पूर्वक जीवन यापन करना दिखाया गया है । और दूसरी ओर *'वर माला'* की रामेश्वरी अपने विवाह के पन्द्रह वर्ष के पश्चात अपने पति रामनाथ द्वारा दूसरे विवाह का पूर्ण शक्ति से विरोध करती है । इन दोनो कहानियो मे अपूर्व विरोधाभास दिखता है । एक अपने अधिकारो हेतु अपने बलिदान तक को तत्पर है वही दूसरी ओर अपनी शिशु की ममता से जकडी स्त्री रुपा अपने शिशु के लिए चुप–चाप पति के आगे हथियार डाल देती है ।

शिवरानी जी ने समाज मे व्याप्त वेश्या समस्या को अपनी कहानी *'विजयी'* मे उठाया है । इनकी कहानियॉ समाज मे विभिन्न रुपो मे फैले भ्रष्टाचार को तो चित्रित करती है परन्तु उनका कोई समाधान नही प्रस्तुत करती। भारतीय समाज मे वेश्या–वृत्ति के प्रमुख कारण दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा, बहुपत्नी विवाह, वैधव्यता, निर्धनता आदि है । और इन समस्याओ से जुझती हुई स्त्री की स्वावलम्बी बनने का मात्र एक ही रास्ता बचता है कि वह वेश्या बनकर देह व्यापार करे । यद्यपि भारतीय नारियॉ सदैव अपने सतीत्व एव पतिव्रत धर्म पालन हेतु अपने प्राणो तक को दाव पर लगाती रही है फिर भी भारतीय समाज में युगो से फैली यह वेश्या वृत्ति कम आश्चर्य जनक नही है ।

शिवरानी देवी की कहानियो मे स्त्री एक ओर तो पुरुष पीडित अबला रुढिवादी एव व्यक्तित्व हीन है तो दूसरी ओर समाज के अत्याचारो के प्रति पूर्णतया जागरुक , विद्रोही एव अपने अस्तित्व हेतु धरातल तलाशती नारी । *'वरमाला'* की रामेश्वरी उन स्त्रियो मे है जो समाज एव पति से प्रताडित एव तिरस्कृत होने के वावजूद कदापि समर्पण नही करती और न ही आत्महत्या करती है वरन दूसरी शादी के लिए जाते पति की बारात को चुनौती पूर्वक रोक लेती है————————

'तुम विवाह करने नही जा सकते'

तुम क्या खकर मुझे रोकोगीं ?

या तो रोक लूँगी या प्राण दे दूगीं ।'[1]

---

[1] वरयात्रा, नारी, पृ0 60।

'साहस' की राम प्यारी का विवाह उसके पिता द्वारा एक चालीस वर्षीय बूढे के साथ तय कर देने पर राम प्यारी इस बलि बेदी पर चढने के बजाय भरे मण्डप मे पति महोदय की जूतो से पिटाई करके स्वावलम्बी होना चाहती है। प्रेमा समाज का खुला विरोध करते हुए कहती है————————

'समाज के डर से आत्महत्या करुं ? समाज जब किसी बात का जिम्मेदार नहीं है तो केवल उन्ही बातो में क्यों उलझता है ।'[1]

'वधू परीक्षा' की निर्मला अपना मत स्पष्ट शब्दो मे कह देती है

'विवाह मैं करुंगी । जैसे इस विषय मे आप स्वाधीन हैं, वैसे ही मै भी स्वाधीन हूँ ।'[2]

आधुनिक शिक्षा ओर जागरुकता के कारण स्त्रियो मे अपने अधिकारो के प्रेति जागरुकता आयी है । और भारतीय स्त्रिया गृहस्थ व्यवस्था के अलावा सामाजिक एव राजनितिक समझ भी रखने लगी थी और पुरुषो के साथ राजनीति मे भी कधा से कधा मिलाने लगी थी । *'माता'* की राधा, *'कुरबानी'* की शान्ति देवी, *'गिरफ्तारी'* की राजकुमारी *'हत्यारा'* की रामेश्वरी एव *'सौत'* की राम प्यारी आदि अन्याय एव अत्याचार का विरोध करती एव राष्ट्रीय आन्दोलनो का नेतृत्व करती हुई दिखाती है ।

इसके अतिरिक्त इनकी कहानियो के कुछ स्त्री पात्र किसी विशेष वर्ग का प्रतिनिधित्व न करके अपने निजी चारित्रिक विशेषताये रखते है । वात्सल्यमयी नारियॉ एव माताये जैसे *'बूढी काकी'*,*'हत्यारा'*, की रामेश्वरी,*'भूख की ज्वाला'*, की रम्भा, *'माल'* की राधा आदि । अपने पुत्र विनोद की मगल कामना हेतु *'हत्यारा'* की रामेश्वरी से ऐसा कोई देवी–देवता नही बचा होगा जिससे उसने मन्नत न मॉगी हो । पुत्र वियोग न सहन कर पाने के कारण *'माता'* की राधा आत्महत्या तक कर लेती है । आपके कहानियो के स्त्री पात्र अपनी सामाजिक स्तर के उत्थान एव सुधार हेतु पुरुषो के आश्रित नही अपितु अपनी समस्या जैसे दहेज प्रथा, अनमेल विवाह आदि समस्याओ का समाधान खुद ही खोजती हुई नजर आती है । इनकी सम्पूर्ण कहानी के केन्द्र बिन्दु मे स्त्री हे । नारी स्वतत्रता एव आत्म सम्मान की भावना इनके सभी पात्रो की विशेषताये है । सामाजिक रुढियो और परम्पराओ मे बधना इन्हे कदापि स्वीकार नही है । स्वय बाल–विधवा होने के कारण इनके पिता ने भी परम्परावादी सोच को त्याग कर इनका विवाह प्रेमचन्द जी के साथ किया था । सम्भवत इसी कारण लेखिका स्वय रुढिगत परम्पराओ एव समाज के पिटे–पिटाये ढर्रे पर अपने पात्रो को भी नही चलने देती। उनकी अपेक्षा एक स्वतत्र एव खुले विचारो वाली स्त्री है । परिवार समाज और राष्ट्र मे नारी स्वतंत्रता ही इनकी कहानियो का मूल उद्देश्य रहा है ।

---

[1] प्रेमा, चॉद, फरवरी, 1941।

[2] वधू परीक्षा, नारी ह्रदय, पृ0 156।

(ग) विभिन्न लेखकों की कहानियों में स्त्री का सामाजिक स्वरूप

किशोरी लाल गोस्वामी

इनकी कहानी *'इदुमती'* को कुछ साहित्यकार हिन्दी की पहली कहानी मानते है । किन्तु कुछ कहानीकार इस कहानी के शेक्सपियर की *'टेम्पेस्ट'* का छायानुवाद मानते है । क्योकि एक ही भाव को विभिन्न वातावरण मे उपस्थित किया गया है। मूलभाव लगभग वही है । यदि इसे टेम्पेस्ट का छायानुवाद न मानें तो भी इस पर पाश्चात्य देशो के मध्युगीन *'नाइट्स'* की प्रेम और वीरता की छाया तो अवश्य मानना होगा । इस कहानी मे साहसिक कार्यो को प्रधानता मिली है ।

'इदुमती' का प्रकाशन सन् 1900 मे सरस्वती पत्रिका मे हुआ था । यह कहानी अजयगढ के राजकुमार चन्द्रशेखर और देवगढ के शासक की पुत्री इदुमती के प्रेम की कहानी है । चन्द्रशेखर के हृदय मे इदुमती के प्रति पवित्र प्रेम है । प्रथम दृष्टि मे ही दोनों एक दूसरे से प्रेम करने लगते है । उनके पिता उनकी प्रेम परीक्षा लेकर उन दोनो का विवाह करा देते है । वस्तुत यह एक साहस तथा प्रेम प्रधान कहानी है और इस के कथावस्तु मे आदर्श प्रेम झलकता है । इनकी अन्य कहानियॉ *'चन्द्रिका'* व *'गुलबहार'* प्रसिद्ध है ।

इनकी कहानियों मे घटनाओ की प्रधानता है उनमे पहली शताब्दी की कहानियो की अपेक्षा साहित्यिकता, रोचकता, भावप्रधानता तथा मार्मिकता का अनुपात अधिक है परन्तु वर्तमान कहानी के सब तत्वो का विकास उनमे नही हुआ है । फिर भी वर्तमान शताब्दी की नए ढग की कहानियो से श्री गणेश का श्रेय इनको ही प्राप्त है ।

पंडित माधवराव सप्रे

पंडित माधवराव सप्रे (1871–1931) जिनकी मातृ भाषा मराठी थी परन्तु लोकमान्य तिलक की प्रेरणा से राष्ट्रीय दृष्टिकोण अपनाकर हिन्दी की असाधारण सेवा की । सप्रे जी ने छत्तीसगढ मित्र, हिन्दी केशरी और हिन्दी ग्रन्थ माला के सचालन और संपादन का कार्य करके हिन्दी जगत मे अद्वितीय ख्याति अर्जित की थी । सन् 1900–1901 के बीच छत्तीस मित्र मे लगभग सवा वर्षो मे प्रकाशित सुभाषित रत्न (जनवरी 1900), सुभाषित रत्न (फरवरी 1900)एक पथिक का स्वप्न (मार्च–अप्रैल–1900) सम्मान किसे कहते है (मार्च–अप्रैल–1900) आजम (जून–1900), एक टोकरी भर मिट्टी (अप्रैल–1901) है जो हिन्दी हिानी के उद्‌भव सीमा पर स्थित है । श्री नारायण चतुर्वेदी के शब्दो मे————————

> **'आधुनिक हिन्दी के *'शिलान्यास के पत्थर'* भारतेन्दु और शायद *'उद्‌घाटन के पत्थर'* आचार्य द्विवेदी तथा अलंकरण के बहुविज्ञापित पत्थर आज ज्ञात, चर्चित और अभिनन्दित है । यह ऊचित भी है किन्तु नीवं के अनेक महत्वपूर्ण पत्थर विस्मृत कर दिये गये हैं । उन विशाल और महत्वपूर्ण नींव के पत्थरों में पंडित माधव राव सप्रे प्रमुख है।'**

माधव राव सप्रे ने प्रथम सुभाषित रत्न मे श्लोको के द्वारा अभिजात गुण, त्याज्यता, व्यवहार ज्ञान, उदत्तता तथा शब्द चयन की वाछनीयता की ओर सकेत करते है इसके द्वितीय श्लोक———————

> **'गणिका गणकौ समान धर्मो**
>
> **निजप´चाङ निदर्श कावुमौं**
>
> **जन मानस मोहकारिणौ तौ**
>
> **विधिनाक्तिहरौ विनिर्मितौ ।'**

इस श्लोक मे वेश्या ओर ज्योतिषि दोनो के समान धर्मो की तुलना अत्यन्त तार्किक ढग से की गयी है ।

दूसरे सुभाषित रत्न मे वे लक्ष्मी सरस्वती की कथा के द्वारा *'रत्न'* की आकार लघुता को पृथ्वी पर प्राप्त अन्न और जल के ही समान सुभाषित की उपयोगिता से जोड देते है । लक्ष्मी से पूछे गये प्रश्न की आप मूढ लोगो को क्यो द्रव्य देती है तथा विद्वानो से द्वेष करती है के जबाब मे लक्ष्मी कहती है––

'नांह मत्सरिणी न चापि चपला नैवास्ति मूर्खे रति
मूर्खेभ्यो द्रविणं ददामि नितरां तत्कारणं भ्रूयतां
विद्वान सर्व जनेषु पुजित तनु मूर्खस्या नान्या
गति।।'

मूर्खो के पास दूसरी गति न होने के कारण द्रव्य देती है जबकि विद्वानो की सर्वत्र पूजा होती है । अत· मूर्खो को द्रव्य की आवश्यकता होती है ।

एक *'पथिक का स्वप्न'* तीन भागो मे विभाजित कहानी है और इस कहानी का प्रमुख पात्र गरीब पथिक अमीरुल–उमरा है जो सुबक्तगीन नाम का अत्यन्त प्रसिद्ध बादशाह है जिसके लडके महमूद गजनवी ने भारत वर्ष को मुसलमानों के अधीन किया था । इस कहानी मे बादशाह की इकलौती पुत्री जहीरा को अपने पसन्द के वर चुनने की पूर्ण स्वतत्रता थी परन्तु कन्या द्वारा भी पिता की आज्ञा और अनुमति महत्वपूर्ण स्थान रखती थी । जहीरा अमीर से कहती है–––

'मेरे नसीब में जो सुख–दुख लिखा है उसे तुम्हारे साथ जन्म भर भोगने के लिए बडे संतोष से तैयार हूँ । परन्तु इसमें मेरे पिता की भी अनुमति होनी चाहिए । पिता की आज्ञा मुझे सिरसा मान्य है । उनकी इच्छा के विरुद्ध मै कदापि कोई कार्य नही कर सकती । कन्या का यहीं धर्म है कि अपने माता–पिता की आज्ञा का पालन करे । जो कन्या धर्म के अनुसार नहीं चल सकती वह शादी हो जाने पर स्त्री धर्म से कैसे रह सकेगी ? जिसके ह्दस में पितृ–प्रेम नही, उसके मन मे पति प्रेम कहॉ से आ सकता है ।'

कहानी मे पिता द्वारा पुत्री की इच्छा जानकर गुलाम अमीर से उसकी शादी कर दी जाती है और कहानी मे यह भी पता चलता है कि उस समय कुल की प्राथमिकता के साथ–साथ शील का भी महत्व था ।

> **'अपने जन्म का साथी ओर सुख–दुख का भागी दूढने में बहुत होशियारी से काम करना चाहिए । ऐसे समय में कुल की अपेक्षा शील का ही अधिक महत्व है । धन दौलत और कुल तो जन्म ही से प्राप्त होते है परन्तु सत्यशील और उत्तम निति सहज नही मिलती ।'**

ऐसा जहीरा अमीर से कहती है ।

'सम्मान किसे कहते है ?' सवाद शैली मे लिखित राजनैतिक प्रेरणा लिए आत्मोत्सर्ग कहानी है जिसमे अपने स्वराज्य को स्वतत्र रखे रहने की महत्वाकाक्षा मौजूद है । *'आजम'* शिक्षा विघायक एक कहानी है और इसकी मूल–भावना जीवन रुप दर्शन है ।

'एक टोकरी भर मिट्टी' कहानी सबसे अधिक ध्यान आकर्षित करती है और यह हिन्दी की तथा कथित प्रथम कहानी *'इदुमती'* के समकक्ष दिखाई देती है। मर्म स्पर्शी कहानी का आरम्भ है 'किसी श्रीमान जमीदार के महल के पास एक गरीब अनाथ एव विधवा की झोपडी है । झोपडी जो विधवा के पति पुत्र तथा पतोहू की स्मृति से जुडी होने के कारण ममता की झोपडी है वही श्रीमान जमींदार के लिए सीमा पर झोपडी होने के कारण हथिया लेने के आग्रह की वस्तु है । गरीबी का तात्पर्य यह है कि पेट भर भोजन न होना और शरीर को ढकने के लिए वस्त्रो का अभाव । एक स्त्री के लिए गरीब होना साथ ही अनाथ होना अर्थात पति और पुत्र दोनो से हीन होना और उसके जीवन मे दूर तक उसका पालन पोषण करने वाला कोई नही है । वह जानती है कि इस समाज मे उसके अधिकार के लिए लडने वाला कोई नही है ।

चन्द्रधर शर्मा गुलेरी

कहानी के क्षेत्र मे गुलेरी जी और प्रसाद का आगमन लगभग एक साथ रहा । इनकी पहली कहानी *'सुखमय जीवन'* थी, जो 1911 ई0 मे लिखी गई, उसके पश्चात *'बुद्धू का कॉटा'* प्रकाशित हुई तथा 1915 के अक्टूबर माह मे सरस्वती पत्रिका मे *'उसने कहा था'* प्रकाशित हुई । इन तीनो कहानियो का सग्रह 'गुलेरीजी की अमर कहानियो के नाम से प्रकाशित हुआ है । *'उसने कहा था'* हिन्दी कहानी साहित्य की अनूठी कृति है । इन तीनो कहानियो मे गुलेरीजी की कहानी कला का क्रमिक विकास दृष्टिगत होता है ।

ये तीनो ही कहानियॉ सामाजिक है । *'बुद्धू का काटा'* और *'उसने कहा था'* वर्णनात्मक प्रणाली मे लिखी गयी है, और *'सुखमय जीवन'* आत्मकथात्मक प्रणाली की रचना है ।

'सुखमय जीवन' मे *'सुखमय जीवन'* नामक पुस्तक का लेखक जयदेव शरण वर्मा का विवरण है जो परीक्षा फल सबधी प्रतीक्षात्मकता आतुरता से व्याकुल होकर अपने मित्र के घर मन बहलाव के लिए जाता है । मार्ग मे साइकिल की फूॅक निकल जाने से एक लडकी से मुलाकात हो जाती है । यह प्रथम मिलन का प्रेम आगे चलकर परिणय सूत्र मे दोनो को बधवा देता है ।

इस कहानी मे अस्वाभाविकता अधिक है । नायक का प्रथम मिलन से ही कन्या के प्रेम मे पड जाना और उसी सध्या को उसका हाथ पकड कर प्रेम प्रदर्शित करना । और उसपर कन्या का चीखकर कहना कि सुखमय जीवन के लेखक का ऐसा घृणित चरित्र है ?

तुम्हे तो चुल्लू भर पानी मे डूब मरना चाहिए अपना काला मुॅह मत दिखाओ । लेखक का उद्देश्य यहॉ नव युवको की उच्छृकलता को दिखाना है । *'बुद्धू का कॉटा'* मे भगवती का आचरण अस्वाभाविक लगता है । कोई लडकी इस प्रकार नवागन्तुक का उपहास नही कर सकती । इस कहानी में तत्कालीन समाज मे फैली बाल–विवाह की कुप्रथा का विरोध कराना भी लेखक एक उद्देश्य है ।

रघुनाथ के पिता अपने पुत्र का विवाह कच्ची उम्र मे नही करना चाहते इसी कारण वे अपने गॉव पहाड पर नही जाते लेकिन रघुनाथ की मॉ कि प्रबल इच्छा थी । वे जल्दी ही सास बनकर पोता खिलाना चाहती थी ।

इस वर्ष रघुनाथ का विवाह था । उसे सीधे गॉव पहॅुचना था । लेखक ने पहाड के गॉव की प्रथा का उल्लेख करते हुए बताया है कि उस क्षेत्र मे पर्दा प्रथा नही है और स्त्री पुरुष एक दुसरे से बातचीत कर सकते है । शहर के वातावरण को दूषित बताते हुए लेखक कहते है कि ————————————

'शहरों में घूंघट के नीचे जीतना पाप होता है उसका दसवां हिस्सा भी गॉवो मे नही होता ।'[1]

भागवती रघुनाथ का मजाक गॉव मे पनघट पर उडाती है । यह अस्वाभाविक सा लगता है किन्तु पाठक को आनन्द भी मिलता है । लेखक के पास सामाजिक जीवन को देखने के लिए बडी पैनी दृष्टि थी । वे समाज के रोम–रोम से भली–भॉति परिचित है समाज को देखने का उनका अपना बिल्कुल नया दृष्टिकोण था । गॉव और शहर की लडकियो के अन्तर को उन्होने बडे मनोवैज्ञानिक ढग से प्रस्तुत किया है————————

'गाँव की लडकियां हड्डियों और गहनों का बन्डल नही होती । वहॉ वे दौडती हैं, कूदती हैं, तैरती हैं, हॅसती हैं, गाती है, खाती हैं और पचाती है । शहरों में जाकर वे खूटे से बधकर कुम्भलाती है, पीली पड जाती है, भूखी रहती है, रोती है और मर जाती है ।'[2]

लेखक के इस कथन पर ध्यान दिया जाता है तो वास्तव मे यही स्थिति मिलती है । गॉव के उन्मुक्त वातावरण मे पली लडकिया किसी भी बन्धन मे बधी नही होती क्योंकि उनका जो समाज वह एक परिवार की ही भॉति होता

---

[1] गुलेरी, कथा कहानी समग्र, पृ0 17।

[2] गुलेरी कथा कहानी समग्र, पृ0 27।

है। इसी कारण एक कहावत गॉव की लडकियो के लिए कही गयी है कि 'बेटी हमेशा पच की होती है' । उस पर किसी प्रकार की आपत्ति अडोसी पडोसी नही करते है जबकि शहरो मे किशोरावस्था से ही लडकियो पर तरह–तरह की बदिशे लग जाती है जिसके कारण उनको उन्मुक्त वातावरण नही मिलता ।

अन्तत *'बुद्धू का कॉटा'* के विषय मे हम कह सकते है कि सामाजिक यथार्थ की पृष्ठभूमि पर लिखी गयी एक रोमाटिक कहानी है जो अपने पाठको के हृदय को गुदगुदाती रहती है ।

'उसने कहा था' पडित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की वह कहानी है, जिससे हिन्दी ही नही समस्त भारतीय भाषाए गर्व से अपना सिर ऊँचा कर सकती है । इसकी गणना विश्व की श्रेष्ठतम कहानियो मे की जा सकती है ।

यह कहानी प्रथम विश्व युद्ध (1914–1918) की पृष्ठभूमि पर लिखी गयी अत्यन्त मार्मिक कहानी है । कहानी की मूल सवेदना को प्रभावशाली बनाने के लिए एक ही मूलभाव काफी होता है । परन्तु सयोग से इसमे तीन महती भावनाए एक साथ आ गयी है । प्रेम, त्याग, कर्तव्य निष्ठा । यह कहना कठिन है कि यह गम्भीर प्रेम की कहानी या फिर महान कर्तव्य परायणता की सम्भवत· तीनो की ही । यह सम्मिलित प्रभाव की तीव्रता को पाठक का हृदय और मन सम्भाल नही पाता । यही कारण है कि कहानी समाप्त करने पर वह अपने को अत्यन्त विचलित पाता है । इस कहानी मे नायक लहना सिह का वासनाहीन प्रेम, आदर्श त्याग, बलिदान और अत मे मृत्यु का आलिगन तक कर लेना उसी प्रेम तत्व से प्रेरित है । उसी प्रेम की स्मृति मे वह अपने अत्यन्त कठिन कर्तव्य पथ का पालन करता है ।

इस कहानी के प्रारम्भ मे इक्के गाडी वाला बूढी स्त्री को बार–बार आवाज देने पर भी न सुनने पर सम्बोधित कर सम्मान पूर्वक व्यग की भाषा मे कहताा है।

> **'हट जा जीणे जोगिए, हट जा करमा वालिए, हट**
> **जा पुत्ता प्यारिए, बच जा लम्बी बालिए ।'[1]**

---

[1] **गुलेरी, कथा कहानी समग्र, पृ0 38।**

अर्थात समष्टि भाव अर्थ है कि तू जीने योग्य है, तू भाग्य वाली है, पुत्रो को प्यारी है, लम्बी उमर तेरे सामने है, तू क्यो गाडी के पहिये के नीचे आना चाहती है बच जा ।

इन सम्बोधनो से आगे बढकर लेखक नायक नायिका की प्रथम भेट को दिखाता है और जब 'तेरी कुडमाई हो गयी' ?प्रश्न के उत्तर मे 'हॉ । हो गयी' सुनता है तब अपने मन की व्यथा राह मे निकालते हुए चल पडता है ।

> **'एक लडके को मोरी में धकेल दिया, एक छावडी वाले की दिन भर की कमाई खोई, एक कुत्ते पर पत्थर मारा और एक गोभी वाले के ठेले पर दूध उडेल दिया । सामने नहाकर आती हुई वैष्णवी से टकराकर अन्धे की उपाधि पायी ।' तब कही जा कर घर पहुँचा ।**[1]

लेखक के इन शब्दो मे लहना सिह (नायक) की मनोदशा का सुन्दर चित्रण हुआ है । कथा वस्तु को मार्मिकता प्रदान करने के लिए घटनाओ का संयोजन जिस प्रकार से लेखक ने किया है वह लेखक के चयन की निपुणता का परिचायक है । अमृतसर बाजार का कोलाहल पूर्ण वातावरण, उसकी पृष्ठभूमि पर एक सिख बालक और बालिका का उदय और पारस्परिक तीव्र आकर्षण अर्थात एक उत्साह वर्धक घटना, महायुद्ध का घोर आतंकारी वातावरण एक तीव्रतर घटना क्रम–और इसी सब के बीच मे नायक लहना सिह के चरित्र के स्थूल सूक्ष्म ततुओ को धीरे–धीरे सुलझाकर रखना, मृत्यु के अन्तिम क्षणो में 'फ्लैश बैक' पद्धति पर हृदय की निगूढ भावनाओ मे लिपटी मर्म छवियो और महत्वपूर्ण घटनाओ का सहसा उदित होकर विलीन हो जाना अर्थात तीव्रतम घटना और अन्त में एक आघात और सब कुछ शान्त ।

---

[1] गुलेरी, कथा कहानी समग्र, पृ0 39।

इस कहानी के विषय मे आर्चाय रामचन्द्र शुक्ल जैसे 'दाद देने मे अत्यत सतर्क' आलोचक ने भी मुक्त कठ से प्रशसा करते हुए लिखा है ———————

> ''*उसने कहा था'* कहानी में पक्के यथार्थवाद के बीच, सुरुचि की मर्यादा के भीतर भावुकता का चरम उत्कर्ष अत्यंत निपुणता के साथ सम्पुटित है। घटना इसकी ऐसी है जैसी बराबर हुआ करती है, पर उसके भीतर से प्रेम का स्वर्गीय रुप झांक रहा है—केवल झांक रहा है, निर्लज्जता के साथ पुकार या कराह नही रहा । कहानी भर में प्रेम की निर्लज्ज प्रगल्भता, वेदना की वीभत्स विकृत्ति नही है । सुरुचि के सुकुमार से सुकुमार स्वरुप पर कही आघात नही पहुँचता इसकी घटनाए ही बोल रही है पात्रों के बोलने की अपेक्षा नहीं । '[1]

लहना सिह मे बचपन से ही साहस का भाव पाया जाता है । कर्तव्य पालन की चेतना भी उसमे शुरु से ही विद्यमान है । दूसरो के प्रति निरन्तर सजग रहते हुए भी, अपने प्रति वह थोडा उदासीन है । उसकी प्रत्युत्तपन्नमति सराहनीय है, किन्तु असावधानी उससे भी हो जाती है । सूबेदारिनी बहुत कम पाठक की ऑखों के सामने आती है किन्तु उनका चित्र बिजली की रेखाओ से अकित है । वह एक वीर और स्नेहशील पत्नी है । अपने पुत्र के प्रति उसका ह्रदय अगाध ममता से पूर्ण है। अपने प्रेमी पर उसे पूर्ण विश्वास है । लहना सिह और सूबेदारिनी के अतिरिक्त वजीरा सिह इस कहानी के विशिष्ट पात्र है। उसके हास्य प्रिय स्वभाव के कारण युद्ध का वातावरण कभी भारी नही हो पाता। उसके सम्बन्ध मे लेखक ने लिखा ही है—वजीरा सिह पलटन का विदूषक था ।

इस कहानी मे एक अन्य तथ्य स्पष्ट करना आवश्यक है कि लहना सिह की मृत्यु प्रेम की वेदना मे नही अपितु कर्तव्य की प्रसन्नता मे हुई है । इसके नायक की अन्तिम स्मृति अपनी प्रेमिका को लेकर नही, बल्कि अपने भाई, अपने पुत्र, अपने घर और उसके ऑगन मे लगे आम के पेड को लेकर है । इसी कारण यह एक सच्चे सिपाही की वीर गति है ।

'अतश्चेतना' और 'स्ट्रीम ऑफ काशसनेस' का प्रयोग हिन्दी कहानियो मे बहुत बाद में हुआ है, लेकिन *'उसने कहा था'* मे (1915) मे ही गहरी मनोवैज्ञानिकता और 'चेतना प्रवाह' का प्रथम उत्कृष्ट उदाहरण मिलता है । छोटी कहानी के श्रेष्ठतम् गुणो का समावेश हिन्दी की शायद ही किसी दूसरी कहानी में इस रुप मे हुआ हो ।

---

[1] हिन्दी साहित्य का इतिहास, रामचन्द्र शुक्ल, पृ0 504–505।

पं0 रामचन्द्र शुक्ल

हिन्दी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार तथा आलोचक श्री रामचद्र शुक्ल का निबन्धकार, आलोचक तथा इतिहासकार के अतिरिक्त कहानीकार का भी रुप मिलता है। यद्यपि कहानीकार के रुप मे उन्होने अधिक साहित्य की रचना नही कि तथापि उनकी लेखनी से जो रचना निकली उसकी अपनी स्वतत्र महत्ता है। शुक्लजी अपने आप मे साहित्य के महान आचार्य तथा निर्माता थे । उन्होने साहित्य के एक विशिष्ट रुप को ही *'कहानी'* की सज्ञा दी है । उनके अनुसार गद्य रचना जिसमे कोई घटनामात्र हो कहानी कहलाने की अधिकारिणी नही है। कहानी साहित्य का वह रुप है जिसमे भावनात्मकता, मार्मिकता तथा कल्पना का विशेष स्थान है । तथा जिसकी विषय वस्तु तथा प्रतिपादन शैली मे रोचकता होती है । इनसे पूर्व लिखी गई कहानियो मे भावनात्मकता का आभाव है तथा उनमे कौतूहल पूर्ण बनाने के लिए चमत्कारिकता को विशेष महत्व दिया गया है।————————

> **'घटना प्रधान और मार्मिक, उनके (कहानियो के) के दो स्थूल भेद भी बहुत पुराने है और इनका मिश्रण भी ।———— यदि मार्मिकता की दृष्टि से भाव प्रधान कहानियों का चुनाव किया जाय तो तीन मिलती है– *'इंदमती','ग्यारह वर्ष का समय', 'दुलाई वाली'* । यदि इंदुमती किसी बंगला कहानी की छाया नही है तो हिन्दी की यह पहली मौलिक कहानी ठहरती है । इसके उपरान्त ग्यारह वर्ष का समय फिर *'दुलाई वाली'* का नम्बर आता है ।'**[1]

इस बात से यह स्पष्ट होता है कि शुक्लाजी ने मार्मिक तथा भावप्रधान कहानियो को ही अपने विवेचन का विषय रखा है । अपने समय की बहुत सी

[1] हिन्दी साहित्य का इतिहास, रामचन्द्र शुक्ल, पृ0 603

कहानियो मे से केवल तीन कहानियो, इदुमती, ग्यारह वर्ष का समय और *'दुलाई वाली'* को चुना है । इदुमती की मौलिकता पर स्वय शुक्लाजी को सदेह है तथा वे इसमे किसी बगला कहानी की छाया देखते है । श्री कृष्णलाल इसमे टेम्पेस्ट की छाया मानते है ।

'ग्यारह वर्ष का समय' पहाडी के निकट बसा एक गॉव जो बाढ मे डूब जाता है । इस प्राकृतिक आपदा मे एक नव दम्पत्ति बिछुड जाते है । पत्नी अनेक सकट झेलकर पति गृह वापस आ जाती है । ग्यारह वर्ष के उपरान्त एक चॉदनी रात मे एक युवक अपने मित्र के साथ उन खडहरो मे प्रवेश करता है । परिचय पूछने पर युवती उसे अपने दुख की कथा सुनाती है । शेष कहानी वह युवक स्वय पूरी करता है । पाठको को यह बताने की आवश्यकता नही है कि आगन्तुक उसका बिछुडा हुआ पति है ।

यह एक वर्णन प्रधान कहानी है। जिसमे मार्मिक घटनाओ का उल्लेख केवल अन्त की ओर हुआ है । इस प्रेम के मूल मे धर्म और कर्तव्य की प्रगाढ भावना निहित है ।

सस्कृत के तत्सम शब्दों अद्यपि, दैवात् , परिवृत्त, एतादृश, विस्मयोत्फुल्ल एव किकर्त्तव्यविमूढ आदि शब्दो प्रयोग बहुतायता से हुआ है ।

भगवान दास बी0ए0

हिन्दी मे सामाजिक कहानियॉ कुछ आगे चलकर शुरु होती है परन्तु प्रयोगकाल के दौरान ही कुछ कहानीकार सामाजिक कहानियो को लेकर चले उनमे मास्टर भगवान दास एव बग महिला का नाम उल्लेखनीय है । इनकी कहानियॉ सरस्वती मासिक पत्रिका मे प्रकाशित हुई है । मास्टर भगवान दास बी0 ए0 ने हिन्दी के आरम्भकाल मे कई सामाजिक कहानियॉ लिखी है इसमे *'प्लेग की चुडैल'* शीर्षक कहानी प्रसिद्ध है । इस कहानी मे गृहस्थ जीवन का चित्रण किया गया है ।

'प्लेग की चुडैल' कहानी मे ठाकुर–साहब की पत्नी बहू जी को प्लेग हो जाता है । उन्हे अर्द्धमृतावस्था मे छोडकर ओर क्रियाकर्म का भार नौकरो पर डालकर ठाकुर साहब इलाके पर चले जाते है । नौकर बहूजी को जलाने की जगह गगाजी मे प्रवाहित कर देते है । वह बहती हुई गगा के किनारे करौदे की झाड मे फस जाती है, यहॉ अचानक कॉटा लगने से उनकी गिल्टी फूट जाती है और गगाजल संयोग से उनके मुँह मे चला जाता है । और वह जीवित हो जाती है । उन्हे चुडैल समझकर ठाकुर साहब निशाना साधते है और उनका करुण विलाप सुनकर पुन पहचान जाते है ।

कहानी का आधार आश्चर्यजनक घटना को बनाया गया है । इस कहानी में सयोग को प्रमुख स्थान मिला है । भगवान दास बी0ए0 ने हिन्दी कहानी के प्रयोगकाल मे घटना–प्रधान सामाजिक कहानियो का आरम्भ किया । इसमे सामाजिक जीवन के एक प्रमुख अग पारिवारिक जीवन का चित्रण किया गया है।

गिरिजादत्त बाजपेयी

इनकी कहानियो के कथानक कुछ देशी है तथा कुछ विदेशी– 1903 मे सरस्वती छपी कहानी *'पति का पवित्र प्रेम'* का परिपार्श्व विदेशी भूमि मे स्थित है। इग्लैण्ड के ब्राइटन नगर मे रहने वाले जेम्स और लिली की कल्पित कहानी वर्णित है । इसमे जेम्स के अपूर्व त्याग का वर्णन है । अपना जहाज डूबने से अनुमानित मृत्यु के पश्चात लार्ड बेरस्फोर्ड के साथ लिली का सुखमय जीवन देखकर–जेम्स जो वास्तव मे जीवित था । अपना अस्तित्व प्रकट करके लिली का जीवन दुखमय नही बनाना चाहता और मृत्यु के समय डा0 को सम्पूर्ण कहानी सुनाता है ।

इनकी दूसरी कहानी *'पडित तथा पडिताइन'* नामक कहानी प्रेम प्रधान मनोरजक कहानी है । इसमे घटनाओ की प्रधानता है । पति की आयु 40 वर्ष है तथा पत्नी की 20 वर्ष पत्नी पति से तोता मगवाने का हठ करती है । इसी विषय को लेकर पति पत्नी मे नोक झोक होती है परन्तु अत मे दोनो प्रेम पूर्वक संधिकर लेते है । इस कहानी के पात्रो की आयु का अन्तर–सामाजिक विडम्बना–बेमेल पति पत्नी का व्यग्य–पूर्ण चित्र उपस्थित करता है ।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी

सरस्वती के सपादक के रुप मे प्रतिष्ठित आचार्य द्विवेदी ने कुछ कहानियो की भी रचना की है । सन् 1903 ई0 से इन्होने सरस्वती पत्रिका के सम्पादन का कार्य लिया। ये मात्र लेखक ही नही अपितु महान विचारक एव उच्च श्रेणी के साहित्यकार भी थे । इनकी कहानियो मे ऐतिहासिकता की झलक मिलती है । इनकी कुछ कहानियो के नाम इस प्रकार है ————————

'स्वर्ग की झलक' एक और दो क्रमश 1904 और 1905 मे सरस्वती पत्रिका मे प्रकाशित हुई इन दोनो कहानियो मे शाहजहाँ और औरगजेब के राज नियमो की ओर सकेत किया गया है । इनकी अन्य कहानियाँ 1911 मे सरस्वती मे *'खान खाना और सुमेरु पर्वत'*, *'मिर्जा अर्ब्दुरहीम खान खाना की उदारता'*, *'शायरो के शाहिनशाह अबूतालिब'* और शाहेजहाँ नाम से प्राकशित हुई है । ये सब कहानियाँ ऐतिहासिक तत्वो पर आधारित है इनकी कहानियो मे कल्पना तथा भावो का योग नही हुआ है । इनकी कहानियो से यह पता चलता है कि बीसवी शताब्दी से आरम्भ होने वाली हिन्दी कहानियो मे जितने प्रयोग हुए उनमे ऐतिहासिक रुप भी सम्मलित है ।

पार्वती नन्दन

इन्होने मौलिक तथा अनूदित दोनो प्राकर की कहानियॉ लिखी है । इनकी कतिपय अनूदित कहानियॉ सरस्वती पत्रिका मे प्रकाशित हुई वे *'बिजुली','मेरी चम्पा'* आदि प्रसिद्ध है । *'मेरी चम्पा'* एक प्रेम कहानी है इस कहानी मे विशुद्ध प्रेम स्वर्ग का पारिजात है, नही उससे भी बढकर है । विशुद्ध प्रेम अनिर्वचनीय है की व्याख्या है । इनकी कहानी का आरम्भिक भाग आकर्षक एवं अन्तिम भाग शिथिल है ।

इनकी कहानियॉ का सग्रह *'गल्प–लहरी'* है और इस कहानी संग्रह की प्रमुख कहानियॉ *'उमा भवानी', 'करम–रेख', 'मोतियो की माला', 'कन्नौज सुन्दरी', 'मुहम्मद गोरी का अन्त', 'दलिद्दर दूर', 'अनोखा स्वयवर', 'तार बीबी', 'चम्पी की बिबिया', ' काठ का घोडा', 'माखी या दानवी', 'नाग–नारी तथा शिजिता'* आदि है। इनकी प्रसिद्ध मासिक पत्रिका सरस्वती मे इनकी कुछ अन्य कहानियॉ जो प्रकाशित हुई *'भूतो वाली हवेली', 'रामलोचन साह', 'एक के दो दो', ' मेरा पुनर्जन्म', 'प्रेम का फुहारा'* आदि है ।

इनकी अधिकाश कहानियॉ मे मनोरंजन के साथ–साथ कल्पना का चमत्कार मिलता है । इनकी कहानी *'उमा भावनी'* मे एक डाकिनी का चित्रण किया गया है । *'कर्म रेख'* मे भाग्यवाद के प्रति विश्वास उपस्थित हुआ है । *'तार की बीबी'* और *'चम्पी की बिबिया'* इनकी मनोरजन प्रधान कहानियॉ है । इनकी कुछ कहानियो के कथानक कौतूहल वर्धक एव अलौकिक है जैसे *'भूतो वाली हवेली'* । एक के दो–दो कहानी प्रेम प्रधान रचना है । जिसका लक्ष्य मनोरन है। *'प्रेम का फुहारा'* नामक कहानी मे एक सामाजिक सवेदना की अभिव्यक्ति है । विषय वस्तु की दृष्टि से पार्वती नन्दन की कहानियो मे कल्पना की प्रचुरता है और प्रेमप्रधान कथाओ का बाहुल्य है ।

इनकी कहानियो मे पात्रो की चारित्रिक विशेषताओ के स्थान पर घटनाओ की प्रधानता है । इन्होने कहानी रचना को कला के रुप मे न ग्रहण करके मनोरजन के साधन के रुप मे माना है । *'मेरा पुनर्जन्म'* कहानी उत्तम पुरुष शैली मे लिखि गयी है ।

इनकी मनोरजन प्रधान कहानियो मे प्रेम–कथाओ की प्राचीन परम्परा के दर्शन होते है । इनकी कहानियो मे पात्रो की चारित्रिक विशेषताये सामने आती है किन्तु घटनाये प्रमुख स्थान धारण करती है । इनकी कहानियॉ पूर्णतया काल्पनिक न होकर यथार्थ के निकट जाने का प्रयत्न करती हुई दिखती है । इस समय मार्मिक तथा भावप्रधान कहानियो का प्रयोग किया गया है परन्तु ऐसी कहानियो की संख्या बहुत कम है । इनकी सभी कहानियो मे प्राय प्रेम की प्रधानता दिखती है । इस काल की इन कहानियो के अतर्गत कहानी रचना के भिन्न–भिन्न प्रयोग हुए है । इनकी कुछ कहानियॉ शिक्षाप्रद अथवा नौतिक है ।

सूर्यनारायण दीक्षित बी0ए0

सूर्यनारायण दीक्षित ने अनेक भाषाओ की कहानियो का हिन्दी रुपान्तरण किया है इन्होने शेक्सपियर कृत *'हेमलेट'* का अनुवाद शुद्ध हिन्दी मे किया जो सन् 1906 मे सरस्वती मे प्रकाशित हुई । इन्होने ऐसी कहानियो की रचना की जिनमें पौराणिक कथानको की स्पष्ट झलक मिलती है । इन्होने जैमिनी पुराण के आधार पर *'चन्द्र हास का अद्भुत उपाख्यान'* कहानी लिखी है । यह कहानी कल्पना प्रधान तथा मनोरजक है और इसकी घटनाए भाग्यवाद के आधार पर विकसित होती है । इनकी कहानियो का उद्देश्य नियतिवाद की प्रधानता प्रतिष्ठित करना है । इनकी कहानियो का अन्त पौराणिक कथाओ की शैली मे होता है । इस काल तक कहानी कारो ने यथार्थवादी दृष्टि कोण नही अपनाया था । इनकी लगभग सभी कहानियो मे आदर्शवादी वातावरण की ही प्रधानता पायी जाती है ।

वृन्दावन लाल वर्मा

प्रयोग काल के दस वर्षों मे जिन ऐतिहासिक कहानिकारो की रचनाए आई है उनमे वृन्दावन लाल वर्मा का स्थान प्रमुख है । इनमे *'राखी बन्द भाई'* , *'तातार'* और *'एक वीर राजपूत'*, *'सफ्रेजिस्ट की पत्नी'* आदि प्रमुख ऐतिहासिक कहानियॉ है । इनकी कथाओ का सम्बन्ध ऐतिहासिक घटनाओ से है । इन कहानियो मे वीरता और प्रेम का वर्णन किया गया है । *'राखी बन्द भाई'* मे बतलाया गया है कि यवन भी भारतीय भावना के रक्षक रहे है । इस कहानी मे राजपूत कुमारी से एक यवन राखी बधवाने के पश्चात उसके प्रति अपने कर्तव्य का पालन करता है । यह कहानी अकबर के शासन काल से सबन्धित है । इसमे गुजरात के शासक गयासुद्दीन के नागौर राज्य के राजा दिलीप सिह पर आक्रमण करने और उनकी पुत्री पन्ना के राखी भेजने पर राजपुर के युवा सामत रुद्रसिह के सहायता करने की चर्चा है ।

कहानी *'सफ्रेजिस्ट की पत्नी'* मे स्त्रियो की अधिकार की चर्चा की गयी है। स्त्री को गृहस्थ जीवन मे रानी बनकर आनन्द का अनुभव करने मे अधिक सुख मिलता अथवा पुरुषो से अपने को स्वतत्र बनाकर रहने मे । इस समस्या पर इस कहानी मे विचार किया गया है । इस कहानी के माध्यम से लेखक अन्त मे यह बताना चाहता है कि गृह–प्रबन्ध स्त्रियो के लिए सर्वोत्तम होता है । क्योकि आन्दोलनकर्ताओ के साथ चलने पर उनका जीवन आनन्दमय और सुखमय नही रह पायेगा । *'खजुराहो की दो मूर्तिया'* मे यह प्रश्न उठाया गया हैं कि क्या सौदर्य को अश्लीलता से अलग किया जा सकता है । *'कलाकार का दड'* मे इस सत्य का प्रतिपादन किया गया है कि कला कितनी ही सूक्ष्म और उत्कृष्ट कोटी की क्यो न हो, पर उसकी प्रेरणा सीधे जीवन से प्राप्त होती है। इनकी कहानी *'राम शास्त्री की निस्पृहता'* मे यह दिखाया गया है कि व्यक्ति स्वर्ण के ढेर को तुच्छ समझकर न्याय का पक्ष लेता है और सामान्य व्यक्ति का जीवन व्यतीत कर गहरे आत्मसन्तोष का अनुभव करता है । वर्मा जी की कहानियों के द्वारा देश के भूतकालीन इतिहास और सस्कृति पर अच्छा प्रकाश डाला गया है । वृन्दावन लाल वर्मा एक आदर्शवादी स्वभाव के है । और इनकी अधिकाश कहानियों में किसी न किसी उद्देश्य की झलक जरुर दिखती है ।

विश्वम्भर नाथ 'जिज्जा'

प्रेमचन्द सस्थान के कहानीकारो मे विश्वम्भर नाथ 'जिज्जा' प्रमुख है । संख्या की दृष्टि से इनकी कहानियॉ कम होने के बावजूद उत्तम कोटि की है । इनकी गणना इनके समकालीन कहानीकारो मे प्रमुख कहानीकार के रुप मे होती है । इनकी पहली कहानी *'सौन्दर्य की महिमा'* सन् 1915 मे इदु मे प्रकाशित हुई थी । इनकी अन्य उपल्ध कहानियो मे *'विदीर्ण हृदय'* और *'परदेशी'* प्रमुख है ।

'विदीर्ण हृदय' मे दो सखिओ की मार्मिक तथा करुणापूर्ण कहानी है । इसमे एक सखी दूसरी सखी को दु खिता के रुप मे छोडकर सदा के लिए दूसरे लोक चली जाती है । इनकी कहानी का प्रारम्भिक रुप *'विदीर्ण हृदय'* तथा विकसित रुप *'परदेशी'* मे दृष्टिगत होता है । कहानी *'परदेशी'* मे विधवा जमुना और एक परदेशी यात्री की प्रेम कथा है । परदेशी अचानक जमुना को छोडकर चला जाता है । इनकी कहानियो मे सयोग के आधार पर घटनाओ मे चमत्कार उपस्थित होता है । इनकी कहानियो मे घटना और चरित्र दोनो का प्रमुख स्थान रहता है । इनकी कहानी की कथावस्तु का विकास दैव तथा सयोग पर आधारित है । विषयवस्तु, प्रतिपादन शैली तथा कहानी के रुपविकास की दृष्टि से इनकी कहानियॉ आदर्शोमुख, यथार्थवादी परम्परा की कहानियो का पूरा अनुसरण करती है ।

राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह

राजा राधिका रमण प्रसाद सिह का पदार्पण सन् 1913 मे इन्दु मे छपी इस समय की प्रसिद्ध कहानी *'कानो मे कगना'* के माध्यम से हुआ। इनकी प्रारम्भिक कहानियो मे इनके कवि रुप के दर्शन होते है । *कानो मे कगना'* मे किरण के सौन्दर्य को देखने से पहले लेखक तत्तसामयिक प्रकृति का वर्णन करता है । 'सावनी समा' सग्रहित कहानी के प्रथम कहानी मे स्त्री का जो चित्रण हुआ है वह कही से स्त्री को सामाजिक रुप से उच्च प्रतिष्ठा नही प्रदान करता बल्कि श्रृगारिता से परिपूर्ण रीतिकालिन स्त्री के समीप लाकर रख देता है।

गोपाल बाबू नाम के नायक अपने आप मे कई विशेषण समेटे हुए है । ये आवारा नशाखोर तथा ऐय्याश किस्म के व्यक्ति है । लेखक का पत्नी के सम्बन्ध मे कथन देख कर ही अनुमान लगाया जा सकता है कि स्त्री या पत्नी के सन्दर्भ मे उनकी सोच क्या थी————————

> **'यों तो बचपन ही गले में जंजीर तो जरुर डाल दी जाती थी मगर उससे किसी का गला थोडे ही फॅस पाता । बीबी के गले का हार या गले का भार जो हो जवानी मे गलबहिया डालने के लिए एकाध नई सुराहीदार गरदन की तलाश जरुर थी। बीबी घर में घर भलें ही कर ले, मियां के दिल में घर करना जरा टेढी खीर था ।**[1]

इसके अतिरिक्त स्त्री के मातृरुप मे बच्चो के पालन—पोषण को वहन करना पुरुष दृष्टिकोण से देखे————

> **'बेचारी तो चूल्हें की आँच में पक कर खुद कबाब बनी रहती है । बच्चें की कचकच में जिसे मरने को भी फुरसत नही मिलती, उस मुर्दादिल पर कोई क्या खाक मरेंगा।'**[2]

---

[1] कहानी सग्रह, सॉवनी समा, पृ0 13।

[2] कहानी सग्रह, सॉवनी समा, पृ0 15।

लेखक के ही शब्दो मे बीबी के ऑचल के खूँट मे बँधे रहना किसी को गवारा नही था । बूढी दादी के वर्णन करते समय तत्कालीन विधवा वृद्धा की छवि के दर्शन होते है--

> 'सुबह से शाम तक बेल के पत्तो पर चन्दन की स्याही मे अनार की डंडी डुबो-डुबोकर राम नाम लिखती रहती और दिन में दास बार गले में ऑचल बॉध देवी के चौरे पर नाक रगड-रगडकर गोपाल की गोद मे एक बाल गोपाल देख सुरपुर जाने की मन्नतें मॉगती ।'[1]

यह तो एक बूढी विधवा के विषय मे लेखक ने उल्लेख किया गया है वही आगे एक युवा विधवा का वर्णन है---

> 'उसी मुहल्ले में बिरादरी की एक गरीब विधवा थी-अभाव से भरी, स्वभाव से हरी । कामना सी चंचल, वेदना सी विकल। डर की डोरी से उसके पर बंधें थे तो जरुर, पर मन की उडान और लहू की उडान लिहाज की आड़ में बराबर जारी थी। समाज ने सीने पर सवार होकर उससे जीवन का हक भलें ही छीन लिया हो, पर उसकी नस-नस में यौवन के हक को कोई नही छीन सका था । जिन्दगी सुनी थी। जवानी भरी थी आखिर जब यौवन उसके बदन रंग भरकर उसके मन पर भी रंग भरने लगा, फिर तो रंग की तरंग से वह रंगीन हो उठी । खुदा के घर से उसे रुप और रंग जो मिला हो, पिता के घर में न प्यार मिला, न पति के घर में श्रृंगार मिला था केवल दारुण फटकार । पेट की ज्वाला से उस रंग के निखार पर ऑच न लगी-यहीं गनीमत थी । बिचारी मुस्किल में थी ।'[2]

---

[1] कहानी सग्रह सॉवनी समा पृ0 17

[2]. कहानी सग्रह, सॉवनी समा, पृ0 19।

इन पक्तियो मे विधवा पति के ऋण को न भर पाने की लाचारी दिखाई है----

'आखिर करती क्या ? उसने खुदा के घर से मिले हुए खजाने में हाथ डाला । दूसरा तो सम्बल था नही ।'[1]

ऋण चुकाने हेतु उस विधवा ने जो पथ चुना है उस पर लेखक का कटाक्ष है ------

'जहॉ ऑसू के मोती बेकार हो गये थे, वही मुस्कान के मोती कारगार हो गये । मुंशी जी इन अनमोल मोतीयों को चुगने लगे । कौडी-कौडी अदा हो चली जहॉ रुपयों का तकाजा देने आते।'[2]

उपरोक्त कहानी मे लेखक ने स्त्री के जो विभिन्न रुप प्रस्तुत किये है वो तत्कालीन समाज मे पत्नी, बूढी दादी और अनाथ विधवा जिसके सिर पति का ऋण चुकाना भी बोझ स्वरुप रखा हो उसका वर्णन किया है ।

प्रथम पैराग्राफ मे घर की स्त्री या पत्नी को पुरुष किस दृष्टि से देखते हैं उसका अनुमान लगाया जा सकता है । विवाह को गले जजीर की उपमा देते हुए कहते है कि यूँ तो विवाह की जजीर गले मे डाल दी जाती, मगर उससे किसी का गला थोडे ही फस पाता-अर्थात पुरुष स्वय को पशु की भॉति गले मे जंजीर पक्ति से अंकुश मे रहने की बात स्वीकारते है साथ ही साथ यह भी कहते है कि मगर उससे किसी का गला थोडे ही फस पाता है । अर्थात पुरुष वैवाहिक होने पर भी अपने स्त्री के प्रति पूरी ईमानदारी नही बरतते उन्हे अपनी

---

[1] कहानी सग्रह, सॉवनी समा, पृ0 20

[2] कहानी सग्रह सॉवनी समा, पृ0 22

पत्नी के अतिरिक्त कोई अन्य ऐसी स्त्री चाहिए जिससे वे अपनी वासना को तृप्त कर सके।

दूसरे पैराग्राफ मे लेखक–पत्नी के सन्दर्भ मे जो दृष्टिकोण प्रगट करता है वह पुरुष का अपनी पत्नी के प्रति बेचारगी को दिखाता है–'बेचारी तो चूल्हे की ऑच मे पककर खुद कबाब बनी रहती है । बच्चे की कच–कच मे जिसे मरने की भी फुर्सत नही मिलती, उस मुर्दादिल पर कोई क्या खाक मारेगा ।' इन पक्तियो का लेखक ने अपने पात्र के मुख से घर वाली के सम्बध मे कहलाकर यह दिखाया है कि पुरुष को उसके घर की अन्नपूर्णा स्वय कबाब के रुप मे दिखती है क्योकि सारे घर के भरण–पोषण का दायित्व उठाने वाली चूल्हे की गरमी मे उतनी रुपवती नही रह जाती जिसकी पुरुष को आवश्यकता है । लेखक कहता है कि बीबी के ऑचल के खूँट मे बधे रहना किसी को गवारा नही था । अर्थात पत्नी जो कि पूरी तरह एक पुरुष के प्रति मन तन वचन एव धन से समर्पित रहती है उस पर पुरुष का तो एकाधिकार सभव होता है किन्तु पुरुष के हृदय पर उसकी पत्नी का एकाधिकार नही होता क्योकि पुरुष की प्रकृति स्वतत्र है अत· वो पत्नी के प्रति पूरी निष्ठा के साथ समर्पण भाव नही रखता । लेखक के उक्त पक्तियो से उस समय के कुलीन वर्ग के समाज मे पुरुषो की प्रकृति का अनुमान लगता है ।

राजा राधिकारमण प्रसाद सिह की एक अन्य कहानी *'बाप की रोटी'* मे दो भाईयो रामू और शामू की कहानी है । बडे भाई शामू के कोई सन्तान न थी जबकि छोटे भाई रामू के चार बेटे और पॉच बेटियॉ थीं । एक के घर मे खाने की कमी थी जबकि दूसरे के यहॉ सोनार बैठक मे बैठकर नित नये जेवर बनाता था । छोटी बहू सूख कर हड्डी रह गयी थी । मिजाज भी गरम था और आवाज भी तेज थी । वही बडी बहू के गर्भ से एक बार आशा जरुर जगी थी किन्तु बालक का मुँह वह न देख सकी । छोटी बहू ———————

अपने मातृत्व का प्रदर्शन करके ताली बजाबजा कर अपने छोटे बच्चे को देखकर गाती है–'नाचो तू मोरा अँगनवॉ मोहन'

यह सुनकर मातृत्व हीन बडी बहू की बादी बोली–'माखन तो जरा टेढी खीर है, छोटी बहू ! चना चबैना पर नचाती तो भले पते की बात होती ।

इन पक्तियो मे देवरानी जेठानी की आपसी ईर्ष्या कि भावना दृष्ठिगत होती है क्योकि बडी बहू के पास धन की कमी न थी किन्तु ईश्वर ने उसे मातृत्व का सुख न दिया था । फलस्वरुप देवरानी के ताली पीट कर गाने से उसे ईर्ष्या होती है और अपने दासी के माध्यम से देवरानी के गरीबी का उपहास करती हुई चना–चबैना की बात करती है । इसी ईर्ष्या–द्वेष के पारिवारिक माहौल मे बच्चे–बच्चियो के बडे होने पर छोटी बहू द्वारा अपने पति से बडी बेटी कचन के विवाह हेतु टोकने लगती है जैसा कि आज भी समाज मे बेटी की विवाह कि चिता पिता की अपेक्षा माता को अधिक होती है । शादी की बात कही बनती न देखकर रामू अपने धनवान पडोसी भाई शामू के पास गया । आज तक कभी वह अपने भाई के पास दो मुठ्ठी चावल भी लेने नही गया था किन्तु बेटी खानदान की इज्जत होती है इस कारण उसने बडे भाई के सामने अपनी समस्या रखी । उस समय बडे भाई बात को टाल गये और कुछ दिन बाद छोटे भाई से एक पचास वर्षीय अधेड जो खासे मालदार थे, उनका रिश्ता अट्ठारह वर्षीय कचन से करने का प्रस्ताव रखते है और कहते है––––––––––––––

> 'हॉ रामू, एक सूरत है । उम्र तो कुछ ज्यादा जरुर है मगर हमारी कंचन तो पॉव पर पॉव रख कर घी के दीये जलायेगी । हॉ, और वैसी कोई उम्र भी नही है, खासे हट्टे–कट्टे है ।'
>
> 'आखिर'.......... ....
>
> 'पचास से कम ही होगी, बाल तो खिचडी जरुर है, मगर दम–खम में जवानों के भी कान तराशते है । शादी का कुल खर्चा तो मिलेगा ही, तुम्हारे बच्चें भी जगह पकड लेगे, यही क्या कम है ?

> बस, उनकी रोजी का सारा मसला ही हल हो जायेगा। तुम्हारा दर्द–सर दफन हुआ ही समझों।'
>
> 'रामू बेचार चुप था । उसका रोऑं–रोआँ जानता था कि गरीब की बेटी जवान हुई नही कि जमाने भर के सडे–बुझे रॅंडुए निगलने को मुंह फैलाए.. ।
>
> जब मुंह के दॉत जबाब देते है, पचाने की कुबत हवा हो जाती है, तब जबान का जायका चूजों के ताजे मुलायम गोश्त की तलाश करता है । जिस सूने घर में सोना सपना सा है, वहॉ सोने की रंग की सयानी बेटी बूढापे के कूचे मे सोने के दर बिकती है ।'[1]

लेखक ने इस कहानी के इस अश मे एक गरीब माता–पिता की लाचारी और समाज की कुत्सिग मानसिकता और तत्कालीन समाज मे पुरुष वर्ग की निकृष्ट सोच को उजागर किया है । रामू के जाने के पश्चात कचन की ताई अर्थात शामू की पत्नी आकर पति से रामू के आने का कारण पूछती है इस पर जब कचन के ताऊ बताते है कि कचन की शादी सिरिश्तेदार साहब से करने की बात हो रही थी तो ताई कहती है–––

> 'वह खूसट !.. .... बेचारी कंचन . . ...।[2]

इन पक्तियो मे यह दृष्टव्य है कि देवरानी जेठानी मे कटु सम्बन्ध होते हुए भी एक स्त्री दूसरी स्त्री के लिए जो उसके पुत्री तुल्य है के विवाह हेतु सुन्दर युवक की इच्छा रखती है परन्तु अपने भतीजे लालू से भी शादी नही करवाना चाहती क्योंकि वह गरीब है । यहॉ पर पुरुष वर्ग कि सोच दृष्टव्य है––––––

---

[1] बाप की रोटी, सॉवनी समा, पृ0 123–124।

[2] बाप की रोटी, सॉवनी समा, पृ0 115।

'होती है दफन, गिन्नी के ढेर मे, कुछ मिट्टी के ढेर में नही । दुनियां में कही मन का मोल है ? जो मोल है रुप का है । आखिर कंगाल की पूँजी तो बस बेटी है . वह भी गोरी चिट्टी'[1]

इस शादी हेतु छोटी बहू ने मनाकर दिया क्योकि यह शामू की सिफारिश थी इसके पश्चात एक रिश्ता जो जिलेदार का था जिनकी मात्र दो पुत्रिया थी और वे पुत्र की इच्छा से विवाह करना चाहेते थे इस पर रामू ने कहा

'भाई जो कुछ हो, मेरी बेटी रोटी नही हो सकती'[2]

यह पक्तियां एक पिता जो मजबूर होते हुए भी अपनी पारम्परिक सोच को प्रगट करता है परन्तु जिलेदार साबह द्वारा उसकी तरक्की कर देने पर उसकी सोच बदल जाती है ——————

'दो दिन में रामू का सिर फिर गया । पैसे कि माया दिल की गर्दन को चॉप दिमाग पर चढ गयी। शायद दुनिया में कोई ऐसा ईमान नहीं है जो सोने की ऑच मे न पिघल पडे ।'[3]

दशहरे की छुट्टी में जिलेदार साहब के घर से कुछ तोहफे आये जिनमे खाने के लिए ढेरो व्यजनो के साथ साथ कचन के लिए जरी वाली एक कीमती साडी भी थी रामू के सारे बच्चो ने खाया पिया किन्तु कचन ने कुछ नही खाया। दशहरे के दिन सारे बच्चो के नये–नये कपडे पहनने पर मॉ द्वारा कचन से साडी पहनने के आदेश पर कचन साडी फाड देती और यहा पर मॉ बेटी का वर के चुनाव के विषय में बहस दृष्टिगत है————

---

[1] बाप की रोटी, सॉवनी समा, पृ0 126।

[2] बाप की रोटी, सॉवनी समा, पृ0 128।

[3] बाप की रोटी, सॉवनी समा, पृ0 129।

'दीवानी हो गयी है क्या ? यहॉ एक–एक टुकडे के लाले पडे है और तेरा दिमाग आसमान मे उडरहा है । तो तुझे चाहिए ही क्या–भूखा जवान?'
'कंचन ने ऑखे नीची कर ली ।''कुछ नही ।'
'बाप के सर पर बोझ बनी रहेगी ?'
'बोझ हूँ, तो मुझे घूरे पर फेक दो ।'
'तेरी बोटी–बोटी काट कर दम लूँगी, दम धर ?[1]'

जब कचन के पिता रामू को यह बात मालूम होती है तो उसने कहा———

'दो चॉटे रसीद करों सारी हैकडी भूल जायेगी ।

किधर गयी कुलमुही ?'

'जब गरीब की बेटी बाप की रोटी हो जाती है, तब वह उसे कच्चा चबा डालने में भी नही हिचकता । फिर चबा तो वह डालता है, मगर पचा नही पाता, वह कोढ़ की तरह फूट निकलती है ।'[2]

कहानी के आगे कचन अपनी बात पर अडिग रहती अत· रामू कोई निर्णय नही ले पाता और उसी समय कचन की मॉ बीमार पडती है सारे पैसे का इतजाम कचन स्वय कर लेती है । रामू सोचता है कि बीमारी मे लगने वाले पैसे उसकी पत्नी ने कही सम्भाल कर रखे थे । इलाज के पश्चात कचन की मॉ ठीक हो जाती है और घर मे सभी का पेट भरने लगता है परन्तु कही कोई यह नही समझ पाता कि ये पैसे कहा से आ रहे है । मॉ के पूछने पर कि वह

---

[1] बाप की रोटी सॉवनी समा, पृ0 135।
[2] बाप की रोटी, सॉवनी समा, पृ0 136।

पैसे कहा से लाती है कचन जबाब देती है कि बाजार से । जिस पर मॉ कहती है————

> 'रुप की हाट में ? जवानी बेचती फिरती है ?'
> कंचन जैसे अपने को समेट कर खडी हो गयी
> उसके थुथने फडक उठे । ऑखे चढ गयी ।
> 'तुम जो अपनी बेटी बेचने चली हो !' कचन
> जरा रुखी हॅसी हॅसकर कहा ।
> 'चुप ! तू ही मेरी कोख मे आने वाली थी ! मर
> क्यो नही गयी ?'
> 'मरने को बाकी है क्या ? मै मरती नही, तो तुम
> जीती कहॉ से !'[1]

और अगली सुबह कचन और लालू जो जेठानी का भतीजा था अपने–अपने घर से गायब हो गये थे । देवरानी सर पीटती है और जेठानी छाती तथा कहानी का अन्त हो जाता है ।

इनकी अगली कहानी *'मॉ'* मे रतन नाम की एक कहार बहू की व्यथा है। उसके ससुराल मे आने के पश्चात उसके सास ससुर तीर्थ यात्रा गये किन्तु वहॉ से वापस न लौट सके और इसके पश्चात उसका पति बीमार पडा और वह भी उसे छोडकर चल पडा । अब वह अपने नन्हे शिशु लल्ला के सग अकेली रह गयी । उसका रुप–यौवन देखकर उसकी चचेरी सास ने उसे मोहन नामक युवक से शादी करने की सलाह दी । परन्तु एक मॉ अपनी ममता से मजबूर थी। बहुत जोर जबरदस्ती करने पर वह ससुराल छोडकर एक राजाबाबू के यहॉ नौकरी कर लेती है किन्तु वहॉ भी राजाबाबू उसके रुप–यौवन पर मोहित हो जाते है और प्रणय प्रस्ताव रखते है । परिस्थित के वशीभूत होकर जब वह अपने लल्ला के इलाज हेतु पैसे लेने जाती है तब राजाबाबू उससे जोर–जबरजस्ती करना चाहते है परन्तु असफल होने पर राजाबाबू उससे कहते है कि तुम मॉ हो अर्थात रतन नामक उस युवती ने अपने मॉ के आवरण मे अपने यौवन को पूरी तरह बलिदान कर दिया। और बाद मे उसकी बहू उसे प्रताडित करते हुए कहती है————————

---

[1] बाप की रोटी, सॉवनी समा, पृ0 149।

'सास खाई, ससुर खाई, भतार खाई, अब बेटे पर भी ?'[1]

रतन बहू के मुख से यह बात न सुन पाई क्योकि वह अपनी युवावस्था से ही इन लाछनो को झेलती आ रही थी और जिसके सहारे वह सब कुछ सह चुकी थी उसी पुरुष के रॉड कहने पर वह वापस उसी मोहन के घर गयी जो उससे युवावस्था मे प्रतिदिन प्रणय निवेदन करता था । मोहन कहा————————

'मै तेरा घर करने आयी हूँ मोहन !'

मोहन अवाक हो गया । उसे पहचानने मे कुछ देर लगी । ठठाकर हॅस पडा ।

'मरने के दिन ? बेटे से भर पा चुकी ।'

'मै अब रॉंड का नाम नही सह पाती । तू अंधेरे में मेरी मॉंग टीक दे ।'

'अच्छा ! जवानी का उतार आया तो तुझे भतार सुझा ? निकल यहा से ! रॉड कही की ।'[2]

और रतनी बूढिया पागल की भॉति इधर–उधर घूमती रही । इस कहानी मे एक अवर्ण स्त्री यदि युवावस्था मे विधवा हो जाय तो उस पर समाज उसके यौवन एव रुप के दोहन हेतु दबाव बनाता है । और वह अकेली स्त्री किस प्रकार अपनी ममता और सम्मान की रक्षा के लिए जूझती है यह दिखाया गया है। लेखक ने एक स्वभिमानी स्त्री और ममता का जैसा पक्ष रखा है वह प्राय देखने को कम ही मिलता है ।

---

[1] मॉ सॉवनी समा, पृ0 191।

[2] मॉ सॉवनी समा, पृ0 192।

शिव पूजन सहाय

शिव पूजन सहाय राजा राधिका रमण प्रसाद सिह के समकालीन है और इनकी शैली इनसे काफी प्रभावित हुई । *'कहानी का प्लाट'* इनकी एक सुन्दर रचना है । इसमे रिश्वत लेने वाले दरोगा और उसके भाई कि वैभव–विलासिता का वर्णन किया गया है । गरीबी मे कन्या का होना ही हिन्दु समाज मे विपत्तियो का पहाड टूट पडने के समान माना गया है । इस कहानी मे यह कथन चरितार्थ होता है । इनकी कहानियो मे सामाजिक रुढियो और रीति–रिवाजो पर भी व्यग किया गया है । भगजोगनी सुन्दर होते हुए भी वृद्ध से विवाही जाती है क्योकि दानवी समाज हेतु उसके पिता तिलक दहेज जैसी कुप्रथा का पालन करने की सामर्थ नही है ।

भगवती चरण वर्मा

भगवती चरण वर्मा की पहली कहानी सन् 1911 मे मनोरजन नामक पत्रिका मे प्रकाषित हुई । वर्मा जी के निम्नलिखित कहानी सग्रह है –

1 इन्स्टालमेण्ट

2 दो बॉके

3 मेरी उलझने

इनके साहित्य मे लेखक के जीवन परिस्थितियो की भयानक कुरुपता उनकी विषमता और इन सब के प्रति कला का आक्रोश दिखाई पडता है । जब इनकी आत्मा विद्रोह करती है तो अन्त करण से निकली ज्वाला इनकी रचनाओ में दिखती है । अपने जीवन की विषम परिस्थितियो का यथार्थ चित्रण करने वाला, वर्मा जी को छोडकर हिन्दी साहित्य मे दूसरा नही पैदा हुआ ।

कहानीकार के रुप मे वर्मा जी का स्वरुप उग्र रहा है । देखने से तो ये घोर यथार्थवादी कहानीकार माने जा सकते हे परन्तु इनकी कहानियॉ निरुद्देश्य नही है । उनका एक निश्चित लक्ष्य है । जीवन की कुरुपताओ का दर्शन कराकर सुन्दरता के प्रति सचेत करना यही उनका उद्देश्य रहा है । इनकी कहानियो मे जीवन के नग्न दर्शन हुए है । इनकी कहानियो मे वर्तमान सभ्यता समाज और स्त्री–पुरुष के विघटित जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया गया है। परन्तु इनकी कहानियो मे समाधान नही मिलता ।

इनकी कहानी *'विवशता'* मे लीला की इच्छा के विरुद्ध उसकी शादी एक 40 साल के पुरुष के साथ कर दी जाती है । और रमेश के यह पूछने पर की क्या तुम रामकिशोर से प्रेम करती हो लीला कहती है कि बहुत अधिक प्रेम करती हूॅ और इतना अधिक जिसकी तुम कल्पना नही कर सकते और आगे

चलकर कहती है वह बहुत रोयी है तथा आगे भी रोना पडेगा परन्तु वह विवश है । इस कहानी के माध्यम से वर्मा जी ने दिखलाया है कि वर्तमान भारतीय नारी आज भी पुरानी रीति–रिवाज के दलदल मे फसी कराह रही है । वही पुराना राग पति चाहे जैसा हो उसके लिए परमेश्वर तुल्य ही है । उसकी इच्छा–अनिच्छा की कोई परवाह नही करता वह नियमो की जजीरो मे बधी हुई है ।

इनकी कुछ कहानियॉ ऐसी है जिसमें इन्होने आधुनिक सभ्यता तथा मानवता पर व्यग वाड छोडे है आज की ढोगी दुनिया की झूठी शान पर करारी चोट की है । उनका विश्वास था कि पूर्ण विकास के लिए यह जरुरी है कि मनुष्य अपने ऊपर स्वय विश्वास करे । दूसरो पर अवलम्बित होने की प्रवृति गुलामी है । दूसरो को धोखा देते देते आज स्वय को धोखा देने लगे है । अपने द्वारा पैदा की गयी उलझनो मे हम स्वय उलझ गये है। इन विचारो का प्रतिनिधित्व इनकी कहानी *'दो बाके'* मे देखने को मिलता है । *'दो बाके'* मे मानव की झूठी शान और कमजोरियो का स्वभाविक चित्र उपस्थित हुआ है । लेखक ने व्यग की छीटाकशी करते हुए लिखा हे कि लखनऊ की जिन्दादिली और लखनऊ की नफासत वहॉ की खास बाते है । वहॉ के रईस रडिया और शोहदे लखनऊ की नाक है । लखनऊ तो जनानो का शहर है, सोलह आने सच्चा उतर जाये । भगवती चरण वर्मा की कहानी कला मे स्वच्छदता और विशिष्टता है जो उनकी निजी है और ये कहानी नियमो के पाबन्द नही है ।

जयशंकर प्रसाद

एक ऐसे साहित्यकार जिन्होने समस्त इतिहास को साहित्य मे उतार कर कहानियो को ऐतिहासिक पात्र प्रदान किए है । प्रसाद जी की कहानियॉ पाठक को एक ऊँचे भावात्मक स्तर पर बनाए रखती है । शान्ति प्रिय द्विवेदी प्रसाद की कहानी कला पर प्रकाश डालते हुए लिखते है————————

> 'प्रसाद की कहानियो मे एक निष्फल यौवन, एक करुण प्रणय, एक दर्दीली स्मृति के चित्र भिन्न–भिन्न प्रकार से चित्रित होते रहते है और इन्ही के साथ–साथ किन्ही सूक्ष्म मानवी मनोवृत्तियो की एक पतली रहस्य पूर्ण रेखा भी खींच दी जाती है । उनकी कहानियों को एक प्रकार का प्रेम पूर्ण कथात्मक गद्यकाव्य भी कह सकते है–जिसमें घटना और चरित्र, प्रधान न होकर भाव ही प्रधान है । प्रसाद की कहानियॉ एकाकी नाटको की भांति एकांगी है, जिनमें एक मनोवृत्ति हृदय, का एक चित्र अथवा घटना की एक रेखा रहती है ।[1]'

सन् 1911 ई0 मे 'इन्दु' के प्रकाशन के साथ ये कहानी के क्षेत्र मे उतरे इनकी सर्वप्रथम प्रकाशित कहानी 'ग्राम' और अतिम 'सालवती' है । इन्होने कुल 69 कहानियो की रचना की जिनको पॉच स्वतत्र पुस्तको–छाया, प्रतिध्वनि, आकशदीप, आधी, तथा इन्द्रजाल मे सग्रहित कर प्रकाशित किया गया । प्राय इनकी अधिकाश कहानिया भावमूलक आदर्शावादी परम्परा के अर्तगत आती है ।

इनकी सामाजिक कहानियो मे पुरुष पात्रो की अपेक्षा स्त्री पात्रो का चरित्र अधिक आकर्षक तथा उज्जवल है (सुजाता, ममता, मधूलिका, सालवती) । 'सहयोग', 'कलावती की शिक्षा', 'परिवर्तन', 'सन्देह', 'भीख मे', 'चित्रवाले पत्थर', 'बनजारा', 'चूडीवाली', 'रुप की छाया' आदि कहानियो मे पति–पत्नी की

---

[1] शान्ति प्रिय द्विवेदी, हमारे साहित्य निर्माता पृ0 112–113।

भिन्न–भिन्न ग्राहस्थ्य–परिस्थितियो मे प्रेम की अनूठी अभिव्यजना की गई है । ऐसी कहानियो जिनमे स्त्री घर के अन्दर रहने पर दम घुटने का अनुभव करती हो अथवा गृहस्थ बधन को तोडकर स्वतत्र बनना चाहती हो , इन्होने नही लिखी । इनकी प्रेम प्रधान कहानियो के प्रेमी–प्रेमिका प्राय कहानी के आरम्भ मे अपरिचित की भाति मिलते है । साक्षात्कार होने पर प्रेम का उदय होता है । फिर कहानी के प्रवाह मे बहते हुए सयोग या वियोग मे अतिम परिणति होती है। 'पाप की पराजय', 'दुखिया', 'आकाशदीप', 'सुनहला सॉप', 'हिमालय का पथिक', 'समुद्र सन्तरण', 'अपराधी', 'प्रणयचिन्ह', 'विसाती', 'इन्द्रजाल', 'सलीम', 'घीसू' के अधिकाश पात्रो का चरित्र इसी प्रकार का दिखाया गया है । ऐसी कहानियॉ जिनमे मर्यादाओ का उल्लघन करके भी उच्चवर्गीय प्रेमियो ने निम्नवर्गीय प्रेमिकाओ को अपने प्रेमजाल मे फसया है बडी मार्मिक एव आकर्षक है । इनमे प्रेमग्रस्त मानव हृदय की दुर्बलताओ का प्रभावपूर्ण चित्रण हुआ है । *'अपराधी'* मे राजा का मालिन के प्रति प्रेम, 'चूडीवाली' मे जमीदार का वेश्या की पुत्री के प्रति प्रेम समुद्र संतरण मे राज कुमार का धीवर बालिका के प्रति प्रेम दिखाया गया है । समाज मे स्त्रियो के अनेक रुपो मे एक प्रमुख रुप विधवा का साहित्य मे प्राय· पात्रो के रुप मे मिल जाता है । प्रसाद ने इस विधवा रुप का भी चरित्र चित्रण किया है । यथा–'गुदडी' 'ममता' 'प्रविध्वनि' आदि मे. प्रसाद जी. की विधवाएँ आत्माभिमानी, उच्चविचार वाली तथा चरित्रवान है । इनकी कुछ कहानियों मे छोटे बालको का चारित्रिक विश्लेषण किया है – दुखिया, छोटाजादूगर आदि ।

इन्होने–फकीरो, वैरागियो, साधुओ तथा साई लोगो का सुन्दर चित्रण किया है । जैसे–'गुदडीसाई', 'अघोरी वैरागी आदि ।

इनके पात्रो मे भिखारी तथा मगतो को भी स्थान मिला है – 'भिखारिन', 'भीख मे', 'वेडी आदि । इनकी ऐतिहासिक व पौराणिक कहानियो को छोडकर अधिकाश कहानियो में निम्नवर्ग व मध्यमवर्गीय पात्रो का चित्रण किया है ।

इनके स्त्री पात्र अधिक आकर्षक एव उज्जवल चरित्र वाले है । इन पात्रो मे कही–कही प्रतिहिसा की ज्वाला धधकती हुई दिखाई पडती है । 'सालवती

इसका श्रेष्ठ उदाहरण है । स्त्री जो प्रेम मे पुष्प से भी कोमल प्रतीत होती है, प्रतिहिसा की अग्नि मे किस प्रकार दानवी हो जाती है । प्रसाद जी ने इसे चित्रित तो अवश्य किया है परन्तु इस रुप को उनका कवि ह्रदय सहन नही कर सका है । अत अन्त मे वे वही मृदु, कोमल, त्याग, मधुरिमा और सेवा समर्पण आदि से समृद्ध स्त्री का स्वरुप दिखाते है । प्रसाद जी अपनी कहानियो की रचना करते समय भी कवि व नाटककार वाले अपनी व्यक्तित्व को नही छुपा सके है । वह रुप बार–बार पाठक के सामने उपस्थित हो जाता है ।

'पुरस्कार' कहानी मे प्रेम और स्वदेश भक्ति के सघर्ष स्वरुप अर्तद्वद तथा अंत में पुरस्कार स्वरुप प्राणदण्ड की याचना प्रेम की परकाष्ठा की द्योतक है । कर्तव्य पथ पर प्रेम का बलिदान होता है । और प्रेम के लिए अपने जीवन का।

'पुरस्कार', 'नारी' 'गुण्डा' कहानियो मे देश प्रेम सर्वोपरि दिखता है ।

'जहाँआरा' 'आकाशदीप' पितृभक्ति के उदाहरण है ।

वात्सल्य प्रेम के उदाहरण स्वरुप – 'गूदड साई' और 'अघोरी का मोह' है । 'समुद्र सतरण' मे मुग्धा नायिका के दर्शन होते है । किसी विशेष वर्ग मे जन्म होने से विवाह मे बाधा नही– 'सिकन्दर' और 'अशोक' इसके उदाहरण है।

'ग्राम'– कहानी एक ऐसी स्त्री की वेदना कथा है । जिसमे उसके पति जो 'कुसुमपुर' के जमीदार थे, एक साहूकार द्वारा उनकी जमीन का स्वामित्व बेईमानी से हडप लिया जाता है । इसी कष्ट से स्त्री का पति अपने प्राण त्याग देता है । उसकी स्त्री और बच्चे निराश्रित होकर दूसरे गाव मे आकर मेहनत करके अपना भरण–पोषण करते हैं । फिर भी उस स्त्री के स्वर मे अभिमान का पुट मिलता है ।

'घीसू' कहानी की बिन्दो एक विधवा है । उसका चारित्रिक पतन हो चुका है । समाज मे विधवा घीसू जैसे व्यक्ति का सहारा पाकर अपनी जिदगी की इस गदगी से छुटकारा पाना चाहती है । वह उस अधेड व्यक्ति से वाद विवाद करते हुए कहती है कि––––––

'तुम्हारे साथ मैने धरम बिगाडा है सो इस लिए नही कि तुम मुझे फिटकारते फिरो ।'[1]

बिन्दो के रुप मे प्रसाद जी ने हिन्दू विधवा की दयनीय स्थिति का मार्मिक अकन किया है । 'घीसू' की बिन्दो का जीवन विडम्बनाओ से पूर्ण दारुण दुखो की व्याख्या इस प्रकार करता है–

'उसका यौवन रुप रग कुछ नही रहा बच रहा था थोडा सा पैसा और बडा सा पेट और पहाड से आने वाले दिन ।'[2]

'चित्र वाले पत्थर' कहानी 'मगला' अपने वैधव्य मे भी पुरुष ससर्ग की भूखी है । वह अपने प्रिय को अचेतावस्था मे छोडकर पूर्व परिचित मुरली के साथ भाग जाना चाहती है क्योकि उसका विश्वास है कि 'स्त्री जीवन की भूख कब जाग जाती है ।' इसको कोई नही जानता, जान लेने पर तो उसकी बहाली देना असभव है । उसी क्षण को पकडना पुरुषार्थ है । मुरली को हिचकता देखकर वह शराबी पति को मृत्यु के घाट उतारकर उसे अपने प्रणय की पुष्टता का प्रमाण देना चाहती है । परन्तु इस भयानक रुप मे उसे मुरली स्वीकार नही कर पाता और वहॉ से किसी तरह भाग जाता है । मगला जीवन में सुखी नही हो पाती उसे अपने दुर्विनीत स्वभाव पर पश्चाताप होता है ।

'देवता छाया बना देते है । मनुष्य उसमें रहता है। और मुझ सी राक्षसी उसमें आश्रय पाकर भी उसे उखाड कर ही फेकती है ।'[3]

'पाप की पराजय'– कहानी मे केतकी वन की रानी अपने भूखे बच्चो के लिए शरीर बेचने पर भी तैयार हो जाती है ।

---

[1] प्रसाद ग्रन्थावली, घीसू, पृ0 248।
[2] प्रसाद ग्रन्थावली, घीसू, पृ0 251।
[3] प्रसाद ग्रन्थावली, पृ0 340।

'धन–श्याम से वह कहती है–**शहर चलूगी । सुना है वहॉ रुप का भी दाम मिलता है । यदि कुछ मिल सके ।**'[1]

इस कहानी मे लेखक ने यह दिखाने की चेष्टा की है कि कोई मॉ यदि विवश होकर अपने बच्चो की क्षुधा शान्त करने के लिए शरीर का विक्रय भी करती है । तो भी उसकी चारित्रिक उज्जवलता कलकित नही होती । शरीर स्पर्श से नैतिकता का पतन नही होता यदि मन से उद्देश्य की पवित्रता का पालन किया जाय ।

'दासी' कहानी की इरावती भी परिस्थितियो के मध्य आततायियो द्वारा विभ्रष्ट की जाती है । वह बलराज की वाग्दत्ता है । वह्नि वेदी के सामने परिणय होने वाला था । लेकिन इससे पूर्व ही वह सिन्दूर से सौभाग्य शालिनी का परदा प्राप्त करे उसके भाल पर कलक की रेखा खीच दी गई । फिर यहॉ पर प्रेम की विस्तृत व्याख्या करते हुए बलराज कहता है । –

'प्रेम की, पवित्रता की, परिभाषा अलग है इरा । मै तुम को प्यार करता हूँ । तुम्हारी पवित्रता से मेरे मन का अधिक सम्बन्ध नही भी हो सकता है ।'[2]

'चित्तौड उद्धार' मे भी विधवा विवाह को स्वीकृति प्राप्त हुई है । 'विजया' कहानी मे कमल नामक उन्मत युवक ने सुन्दरी को अपनी शेष बचे एक मात्र रुपये सुन्दरी को देते हुए कहा–––––

'ऐसे पापी जीवन को रखकर क्या होगा । सुन्दरी। मैने तुम्हारे ऊपर बडा अत्याचार किया है । क्षमा करोगी ।'
'आह !इस अन्तिम रुपये को लेकर मुझे क्षमा कर दो ।'[3]

---

[1] प्रसाद ग्रन्थावली;' पृ0 87।
[2] प्रसाद ग्रन्थावली, दासी, पृ0 238।
[3] प्रसाद ग्रन्थावली, विजया, पृ0 265।

इस पर सुन्दरी कहती है ————————

आज तुम अपने पाप का मूल्य दिया चाहते हो ।

और कत्मल से पूछती है ——————

विधवा के सर्वस्व का इतना मूल्य नही हो सकता।[1]

और अतत कमल को प्रेरित करके सुन्दरी और कमल सुखी हो कर समाज मे रहने लगते है ।

'सन्देह' मे श्यामा से राम निहाल कहने लगा ————

'श्यामा । तुम्हारा कठोर ब्रत, वैधव्य का आदर्श देखकर मेरे ह्रदय में विश्वास हुआ कि मनुष्य अपनी वासनाओ का दमन कर सकता है । किन्तु तुम्हारा अवलम्ब बडा दृढ है ।[2]'

'चूडीवाली' की नायिका चूडी वाली के रुप मे लालसा से उद्दीप्त विजय कृष्ण की ओर आकर्षित होती है । वेश्या होकर भी विलासिनी ने एक व्यक्ति से प्रेम किया है । और इसी लिए प्रयत्नरत होकर चूडीवाली बन जाती है । यहा प्रसाद ने वाह्य आवरण को महत्व न देकर मूल भावना को स्थान दिया है । जहॉ वह कुल वधू बन कर एक निष्ठ जीवन बिताने का स्वप्न पूरा करना चाहती है । नर्तकी होते भी एक पुरुष के लिए अपना व्यवसाय छोड देती है ।

किसी भी लेखक के लेखन मे जो कुछ मिलता है उसकी पृष्ठ भूमि कही कही न निजी अनुभव से भी जुडी हुई होती है । प्रसाद जी का नारी सम्बध माता, पत्नी , भाभी तथा प्रेमिका चार रुपो मे देखा जा सकता है ।

वे अभिजातीय कुल मे उत्पन्न हुए थे । उनका परिवारिक वातावरण सुसस्कृत तथा धार्मिक था अत सामान्य अथवा मध्यवर्गीय नारी की विषमता पूर्ण

---

[1] प्रसाद ग्रन्थावली, सन्देह, पृ0 323।

[2] प्रसाद ग्रन्थावली, चूडीवाली, पृ0 175।

परिस्थितियो मे उत्पन्न मन स्थिति उन्होने कभी नही देखी थी । परिवार मे सबसे छोटा होने के कारण इन्हे बहिन और मॉ का पूर्ण स्नेह मिला । इस प्रकार नारी का मातृरुप इनके मन और मस्तिष्क मे सदा के लिए प्रतिष्ठित हो गया । प्रसाद ने स्त्री के मातृत्व पद को सर्वश्रेष्ठ रुप माना है । पत्नी के रुप इनके मन और मस्तिष्क मे सदा के लिए प्रतिष्ठित हो गया । प्रसाद ने स्त्री के मातृत्व पद को सर्वश्रेष्ठ रुप माना है । पत्नी के रुप मे स्त्री को उन्होने सदैव समर्पण भाव मे पाया है ।

प्रसाद जी के तीन विवाह हुए । वे अपनी पहली पत्नी से अत्यधिक प्यार करते थे । दूसरी पत्नी की मृत्यु के पश्चात उन्होने तीर्थ यात्रा की थी । उनके यौवन काल मे उनका स्नेह सूत्र कई बार टूटा परिणामत उसमे बार–बार गाठ डाली गई । माता की मृत्यु के उपरान्त प्रसादजी ने अपनी श्रद्धा भाभी के चरणो मे समर्पित की । वे उनसे लगभग 14 वर्ष ज्येष्ठ थी । भाभी के प्रति श्रद्धा और सम्मान उन्होने आजीवन रखा । प्रसाद जी ने स्त्री को सदैव सम्मान की दृष्टि से देखा है ।

प्रसाद जी ने स्वतंत्रता का अर्थ उच्छृखलता से नही माना है । ऐसा कार्य जिससे सामाजिक व्यवस्था का अतिक्रमण हो इन्हे मान्य नही है इसलिए उनके चरित्र ने भी लालसा और महतवाकाक्षा के वशीभूत हो स्वतत्रता के नाम पर उच्छृखलता का प्रदर्शन नही किया है उसे किसी भी परिणाम मे अपने किये का गर्व नही हो सका उसे किसी न किसी रुप मे अतिक्रमण के लिए पश्चाताप करना ही पडा है ।

पं0 ज्वाला दत्त शर्मा

हिन्दी के प्रारम्भिक कहानीकारो मे शर्माजी का विशेष स्थान है । *'कौशिक'* जी के समान इन्होने भी वर्णनात्मक शैली मे सामाजिक रुढियो और परम्परागत रीति–रिवाजो तथा कुरीतियो पर आक्षेप किया है । इस काल (प्रारम्भिक) के कुछ कहानीकारो को छोडकर प्राय सभी कहानीकारो ने स्त्रियो पर अत्याचार और सामाजिक कुरीतियो तथा कुसस्कारो का अपने साहित्यिक कर्म के माध्यम से विरोध किया है । इनका लेखन कार्य लगभग तभी से प्रारम्भ हो गया था जब हिन्दी की मौलिक कहानियो का जन्म भी नही हुआ था । इनकी अनेक कहानियो का प्रकाशन सरस्वती पत्रिका मे हुआ । इनकी प्रथम कहानी *'मिलन'* सन् 1915 की सरस्वती मे छपी थी । इसके अतिरिक्त कुछ अन्य कहानियॉ भी मिलती है । यथा–*'अनाथ बालिका'* , *'भावपरिवर्तन'*, विरक्त विज्ञानद मेहनताना, विधवा, बूढे का ब्याह, तस्कर तथा कहानी लेखक । इनकी गणना साामाजिक कहानियो के अतर्गत की जायेगी । इन्होने इनमे समकालीन समाज की भिन्न–भिन्न सामाजिक समस्याओ का उद्घाटन सुन्दर ढग से किया है । व्यक्तिगत तथा पारिवारिक समस्याओ के चक्र मे फसे हुए मनुष्य को जिस सघर्षमय जीवन से लोहा लेना पडता है, उसकी विषद तथा रोचक व्याख्या इनकी कहानियो मे मिलती है । हिन्दू परिवारो के प्रतिदिन के जटिल जीवन, रुढियो के प्रभावो के कारण उत्पन्न असतोष का चित्रण इनकी कहानियो का प्रथम लक्ष्य है । इनका दृष्टिकोण समाज सुधारक का अधिक दिखता है ।

कला की दृष्टि से ये साधारण कोटि के कहानीकार माने गये है । इनकी उत्तम कहानियो मे तस्कर, विधवा, कहानी लेखक, अनाथ बालिका की गणना होती है ।

'अनाथ बालिका' नामक कहानी मे एक स्वाभिमानी स्त्री अपने पति के बडे भाई अर्थात जेठ के आक्रोश मे कहे गये वचनो को सुनकर रात मे ही अपनी नन्ही सी बालिका को लेकर निकल जाती, और अपने शरीर पर पहने जेवर बेचकर अपने ससुराल से 100 किलोमीटर दूर एक छोटा सा मकान लेकर रहने लगती है । विधाता की मर्जी कि वह रोगग्रस्त होकर अपनी पुत्री को डा0 को सौप कर मर जाती है । वह अनाथ बालिका डा0 के घर मे अपने व्यवहार और काम से सभी का स्नेह प्राप्त कर लेती है । अंत मे अनाथ बच्ची का भाई (ताऊजी का बेटा) अपनी बहन को ढूढता हुआ वहॉ आता है और अपनी बहन का विवाह डा0 के भानजे से कर देता है और अपने पिता की अतिम इच्छा पूर्ण करता है ।

विश्वम्भर नाथ कौशिक

इनकी प्रथम कहानी 1913 ई0 मे सरस्वती मे *'रक्षाबधन'* के नाम से छपी। *ताई, वह प्रतिमा, विद्रोही और सहृदय शत्रु* इनकी श्रेष्ठ कहानियाँ है । इन्होने एक स्त्री के मनो–वैज्ञानिक भावो को अपनी *ताई* कहानी मे भली भाँति अकित किया है। ताई कहानी मे अपने पति के भतीजे के प्रति पति का स्नेह देखकर रामेश्वरी स्वय के पुत्रहीन होने पर खीझती है । यह ईर्ष्या उसके मन मे भर जाती है । कि मेरे पास यदि पुत्र होता तो मेरे पति मुझसे और मेरे पुत्र से स्नेह करते, इस मनोहर को क्यो करते ? इसी ईर्ष्या के कारण जब मनोहर पतग उडाते समय मुडेर से गिरने लगता है तब भी वह उसे बचाने मे विलम्ब करती है । उसके मन मे एक बार यह भी विचार आता है अच्छा है मरने दो सदा के लिए पाप कट जायेगा । यह सोचकर वह क्षण भर को रूकी । उधर मनोहर का हाथ मुडेर पर से फिसलने लगा । वह अत्यत भय व करुण दृष्टि से देख रहा था और चिल्ला रहा था–अरे ताई ! मनोहर की वह करुण दृष्टि से देख रामेश्वरी का कलेजा मुह को आ गया, सोयी ममता जाग उठी उसने व्याकुल होकर अपना हाथ मनोहर की ओर बढा दिया। कौशिक जी के प्रतिनिधि कहानी सग्रहो मे 1919 मे प्रकाशित *'मणिमाला'* सन् 1924 मे प्रकाशित *'चित्रशाला'* दो भाग तथा सन् 1933 मे प्रकाशित *'कल्लोल'* है । कौशिक जी की कहानियो मे आदर्शवादी दृष्टिकोण से सिद्धान्तो को पुष्टीकरण मिलता है। जमीदार वर्ग, कृषक वर्ग, निम्नवर्ग के परम्परागत सस्कारों और मनोवृत्तियो का चित्रण उन्होने अपनी रचनाओ मे सफलता पूर्वक किया है । सामाजिक रुठियो और कुरीतियो , विशेष रुप से परदाप्रथा बाल विवाह, स्त्री शिक्षा तथा पारिवारिक विघटन आदि के विषय मे उन्होने विस्तार से विचार किया है ।

'फॉसी' नामक कहानी मे दो मित्रो की कहानी है । बाबू रेवती शकर और डा0 कामता प्रसाद बाबू रेवती शकर एक सम्पन्न परिवार के बिगडे हुए अमीर है जबकि डा0 कामता एक मध्यमवर्गीय सज्जन व्यक्ति है । बाबू रेवती शकर एक वेश्या सुन्दरी बाई से प्रेम करते है जबकि सुन्दरी डा0 साहब को पसन्द करती है डा0 साहब का दृष्टि कोण वेश्या के सौन्दर्य के प्रति–'वेश्या का सौन्दर्य उस पुष्प के समान है । जो देखने मे तो बडा सुन्दर है परन्तु नीरस तथा निर्गन्ध

है।' वेश्या का प्रेम डा0 के प्रति देखकर रेवती बाबू क्रोधित होकर कहते है–कि तुम पर मै धन खर्च करता हूँ । इसके उत्तर मे वह कहती है । आपका जोर हमारे शरीर पर है ह्रदय पर नही । लेखक ने एक वेश्या के मुख से उसकी मजबूरी का उद्घाटन करवाया है । कि यदि उसे धनोपार्जन की मजबूरी न होती तो वह रेवती शकर जैसे व्यक्ति को इतनी भी छूट न देती वह अपनी वेश्यावृत्ति पर कहती है कि हमारे पेशे से और प्रेम से बैर है जो जिससे प्रेम करता है उसी का होकर रहता है ।वह कहती है कि प्रेम जब करुगी तब ह्रदय की प्रेरणा से जबरदस्ती कोई किसी से प्रेम नही करा सकता । एक स्थान पर रेवती बाबू को फटकरते हुए सुन्दरी बाई कहती है । मै आपकी विवाहिता नही हूँ, ये बाते वही सुनेगी, मै नही सह सकती । हम लोग एक ही की होकर रहे तो बस हो चुका ।

इन वाक्यो से एक विवाहिता को सम्पन्न परिवार मे पति के द्वारा मिलने वाले पद की ओर ध्यान जाता है कि ऐसे व्यक्ति जो वेश्यागमन के आदि थे उनकी स्त्रियो को पति के अनुशासन और आवारागर्दी को भूक होकर सहना पडता था वे प्रतिवाद भी नही कर सकती थी ।

वेश्या के द्वारा तिरस्कृत रेवती बाबू वेश्या की हत्या कर देते है जिसका आरोप डा0 कामता के ऊपर लग जाता है ओर कामता प्रसाद को फॉसी हो जाती है , और अत मे रेवती शकर स्वय भी विष खाकर आत्म हत्या कर लेते है। अपने पत्र मे लिखते है कि सुन्दरी बाई ने मेरे प्रेम को ठुकराया था । मेरा ह्रदया छीन कर मुझे दुतकारा था। इसी का प्रतिशोध लेने के लिए रेवती शकर ऐसा घृणित कार्य कर बैठता है ।

इस कहानी के माध्यम से तत्तकालीन समाज मे रईस जादो की अपनी पत्नी को घरों मे छोडकर कोठो मे वेश्या के प्रेम की भीख मागना और न मिलने पर हत्या जैसे जघन्य अपराध तक कर बैठना दिखाया गया है । तथा एक वेश्या का भी शरीर बेचना मजबूरी हो सकती है परन्तु दिल नही बेचा जाता ऐसे रखना स्त्री की मनोदशा को दर्शाता है ।

प्रेमचन्द

प्रेमचन्द लगभग तीन सौ कहानियॉ लिखी है और उनकी कहानियॉ गुणतत्ता और परिमाण दोनो दृष्टि से महत्वपूर्ण है। प्रमुख आलोचक डॉ0 रामविलास शर्मा के अनुसार उनके उपन्यास कहानियो से श्रेष्ठ है। परन्तु कही–कही पर उनकी कहानियो पर उनकी कहानियॉ प्रभाव और बोध की दृष्टि से उपन्यास को पीछे छोडती है। प्रेमचन्द हिन्दी साहित्य के पहले ऐसे कहानी कार है जिनकी कहानियो मे ग्रामीण जीवन का सजीव एव सटीक चित्रण मिलता है। प्रेमचन्द साथ ही साथ जन साधारण के जीवन को उसी की भाषा मे प्रस्तुत करते थे। प्रेमचन्द की कहानी कला की सबसे विशेषता उनकी सुगमता एव सहजता है। प्रेमचन्द (1880–1936) ने यद्यपि प्रसाद से पहले कहानियॉ लिखनी शुरू कर दी थी लेकिन हिन्दी मे लिखी हुई उनकी पहली कहानी पच–परमेश्वर सन् 1916 मे ही प्रकाशित हुई थी। और इसके पूर्व वे उर्दू मे लिखते थे। जो उनकी पॉच कहानियो के सग्रह के रूप मे "सोजे वतन" सन् 1907 मे छपा था जो सरकार द्वारा जब्त करके जलवा दी गयी थी। सग्रह "सप्त सरोज" जो उर्दू से अनुवादित हिन्दी कहानियॉ थी। सन् 1925 मे छपी। इसके पश्चात् प्रेमचन्द हिन्दी मे लिखी जो लगभग पच्चीस सग्रहो मे प्रकाशित हुई वर्तमान मे उनकी लगभग डेढ सौ कहानियॉ "मानसरोवर" के आठ भागो मे सग्रहीत कर ली गयी है। प्रेमचन्द की यथार्थवादिता एव स्वाभाविकता ने जितना परवर्ती कहानिकारो को प्रभावित किया उतना प्रसाद की काल्पनिकता ने नही। प्रेमचन्द की कहानियो मे चरित्र अत्यन्त प्राकृतिक होते है तथा उनके चित्रण मे किसी प्रकार की जटिलता नही पायी जाती। प्रेमचद ने अपनी कहानियो मे फारसी, सस्कृत, हिन्दी, आचलिक आदि अनेक रूपणी भाषा का प्रयोग किया है।

प्रेचचन्द की प्रारम्भिक कहानियो में *'सौत', 'सज्जनता कादण्ड', 'बडे घर की बेटी', 'नमक का दरोगा'* आदि विशेष उल्लेखनीय है। इन कहानियो मे मध्यम वर्गीय परिवार का यथार्थ परक चित्रण अत तक आते–आते आदर्श की चकत से उद्दीप्त हो उठता है।

प्रारम्भिक कहानियॉ विचार बहुल नही है। इनमे घटनाओ की प्रधानता है। मधुरेश के शब्दो मे "प्रेमचद्र की शुरू की कहानियॉ चरित्र पर जोर देते हुए भी मूल रूप से घटना बहुल कहानियॉ है, जिनमे कभी–कभी तो इतनी घटनाओ का ढेर लगा दिया जाता है जो आज ही नही', उस समय भी अच्छे खासे उपन्यास के लिए भी कुछ ज्यादा ही मानी जानी चाहिए। इन कहानियो मे सयोग और असाधारण रूप से सरलीकृत ढंग से हृदय परिवर्तन को लेकर भी उनका आग्रह आसानी से देखा जा सकता है।"

"पच परमेश्वर" को जुम्मन शख *'मिलाप'* के नानक चद *'नेकी'* मे हीरामणि और *'नमक का दरोगा'* मे अलोपीदीन का अतिम क्षणो मे हृदय परिवर्तन करा कर प्रेमचद अपने आदर्श वादिता एव गाधी वाद के प्रभाव को व्यजित करते है। हृदय परिवर्तन का बोध प्रेमचन्द की कथा दृष्टि का एक महत्वपूर्ण अग है। प्रारम्भिक काल की कुछ कहानियो की पृष्ठभूमि ऐतिहासिक है जैसे *'रानी सारन्धा', 'राजा हरदौल'* मर्यादा बेदी आल्हा आदि कहानिया। इन कहानियो मे लेखक की दृष्टि को शैलेश जैदी जैसे आलोचक हिन्दू मानसिकता की कहानी कहते है। अतीत का गौरवमय तत्त्कालीन राष्ट्रीय भावना का अग बनकर आया है। इसे हिन्दू 'मानसिकता समझना भूल है।'

'बडे घर की बेटी' मे आनन्दी पश्चाताप करती है। नमक का दरोगा मे अलोपीदीन धन को लेकर दबाव महसूस करते है। *'मत्र'* कहानी मे डॉ0 चड्ढा कहते है

"उसे खोज निकालूॅगा और उनके पैरों पर गिर कर अपना अपराध क्षमा कराऊॅगा।........... उसकी सज्जनता ने मुझे ऐसा आदर्श दिखा दिया है जो अब जीवन पर्यन्त मेरे सामने रहेगा।"

'पच परमेश्वर' – कहानी अत्यंत ख्याति प्राप्त कर चुकी है। इसके जुम्मन शेख और अलगू चौधरी से प्रत्येक हिन्दी प्रेमी परिचित है। इन्ही जुम्मन मियॉ की एक बूढी खाला थीं। ऐसी बूढी विधवा जिसका कोई सतान न थी। अत सम्पत्ति के लालच मे जुम्मन लम्बे चौडे वादे करके उसकी सम्पत्ति अपने नाम करवा ली। लेकिन उस बूढी खाला को भोजन देने मे जुम्मन की पत्नी को तकलीफ होने

लगी। ये पति पत्नी खाला को बोझ समझते और चाहते थे कि खाला मर जाय जिससे भोजन कराने से मुक्ति मिले। रोज की किट–किट से तग आकर बूढी खाला ने एक दिन जुम्मन से कहा – मुझे खर्च के लिए रूपये दे दो मै पका खा लूगी। इस पर – जुम्मन ने धृष्टता पूर्वक कहा कि रूपये, क्या यहॉ फलते है? बूढी खाला जुम्मन के परम मित्र अलगू चौधरी को पच नियुक्त करवाती है।

'बेटो वाली विधवा' कहानी मे फूलमती के चार पुत्र एव एक कन्या है। कन्या कुमुद का विवाह अभी नही हुआ है। और फूलमती विधवा हो जाती है। कुमुद के पिता अयोध्यानाथ ने पाच हजार दहेज का वादा करके उसकी विवाह एक अच्छे घर में दिया था। यद्यपि प0 अयोध्या नाथ ने मरते समय अच्दी सम्पत्ति छोडी थी। किन्तु उनके पुत्र इतनेस्वार्थी है कि बहन के विवाह मे रूपये नही खर्च करना चाहते और पहला सम्बंध तोडकर एक बूढे के सग कुमुद का विवाह करना चाहते है।

फूलमती के पास दस हजार की कीमत के स्त्री धन के रूप मे जेवर है। उसके पुत्र यह सोचकर कि कही मॉ इन आभूषणो के बल पर कुमुद का विवाह उसी घर मे न कर दे या कुमुद को ही सारे आभूषण न दे दे, माता से छल करते है और भोली भाली मॉ सारे आभूषणो की पिटारी लाकर पुत्रो को दे देती है –

"फूलमती रात को भोजन करके लेटी थी कि उमा और दया उसके पास बैठ गयें। दोनों ऐसा मुंह बनाये हुए थे, मानों कोई भारी विपत्ति आ पडी हो। फूलमती ने सशक होकर पूछा– "तुम लोग घबराये हुये मालूम होते हो।"

फूलमती के ह्रदय मे कितनी पीडा थी इसे कौन जान सकता था, और चारो भाई खुश थे कि जैसे उनके ह्रदय का काटा निकल गया हो। लेखक ने कुमुद के लिए लिखा है – **"ऊॅचे कुल की कन्या मुंह कैसे खोलती ? भाग्य में सुख भोगना लिखा होगा, सुख भोगेगी, दुख भोगना लिखा होगा, दुख झेलेगी। हरि इच्छा बेकसों का अंतिम अवलम्ब है।" 'घर वालों ने जिससे विवाह कर दिया, उसमें हजार एब हों, तो भी उसका उपास्य उसका स्वामी है। प्रतिरोध उसकी कल्पना से परे था।'**

लेखक ने इन पक्तियो मे एक पितृ हीन उच्च कुल की कन्या और उसकी विधवा मॉ की ही नही आज के समाज की बहुत बडी विडम्बना का चित्रण किया है।

बिदा होती पुत्री से फूलमती अपनी कथा न बताकर शेष बचे कुछ जेवर और रूपये दिये – किन्तु कुमुद ने वापस रूपये और जेवर निकाल कर रख दिए और बोली – "अम्मा मेरे लिए तुम्हारा आशीर्वाद लाखो रूपये के बराबर है। तुम इन चीजो की अपने पास रखो। न जाने तुम्हे किन विपत्तियो का सामना करना पडे।"

अब फूलमती गृहस्वामिनी के स्थान पर लेखक के शब्दो मे – '**अब वह घर की लौंडी थी।**'

अब फूलमती पूरी तरह से चेतना शून्य हो गई थी। लेखक ने फूलमती की इस अवस्था को इन पक्तियो मे दिखाया है – "**बस, पशुओ की तरह काम करना और खाना, यही उसकी जिंदगी के दो काम थे। जानवर मारने से काम करता है। पर खाता है मन से। फूलमती बेकहे काम करती थी पर खाती थी, विष के कौर की तरह।**"

'गरीब की हाय' कहानी मे लेखक ने एक ऐसी विधवा का वर्णन किया है जिसका नाम मूगा है। उसका पति बर्मा की काली पलटन मे हबलदार था। उसके लडाई मे मारे जाने के पश्चात् सरकार ने मूगा को पॉच सौ रूपये भरण–पोषण के लिए दिये थे। उसने यह सोच कर कि वह विधवा है और जमाना नाजुक है, वे रूपये मुशी रामसेवक को सौप दिये, और थोडा–थोडा लेकर अपना निर्वाह करती रही लेकिन जब बूढी होने पर भी मूगा न मरी तो मुशी जी को यह चिंता हुई और एक दिन उन्होने कहा – 'मूगा तुम्हे मरना है या नही?'

मूगा ने उससे कहा मेरा हिसाब कर दो। मुशीजी ने पहले ही चिट्ठा तैयार कर लिया था। उनके हिसाब से अब रूपये शेष न थे। मूगा उनसे ढाई सौ रूपये मॉगने लगी। पंच बैठे पचो का फैसला भी मुशी जी के पक्ष मे रहा। अब

मूगा रात–दिन मुशी जी के कल्याण की कामना करती रहती और मूगा पगली हो चली। और उसने मशी जी के द्वार पर ही अपने प्राण त्याग दिये।

प्रेमचदजी ने अपनी कहानियो के विषय भिन्न–भिन्न रखे है और उसमे भी स्त्री के विभिन्न रूप मिलते है। लेखक की इन विधवा स्त्रियो के चरित्रो पर यदि दृष्टि डाली जाय तो इनमे भी विविधता है। *'पच परमेश्वर'* की खाला भी विधवा है। उसके भी कोई सतान नही किन्तु वह बूढी है। वही *'गरीब की हाय'* की मूगा विधवा है। निसतान है। किन्तु बूढी नही थी। बेटो वाली विधवा–बूढी हो चली है किन्तु उसके एक नही चार–चार पुत्र है लेकिन उसकी स्थिति और भी विषम है।

'बेटो वाली विधवा' में कुमुद का चरित्र दिखाते हुए लेखक ने यह भी दिखा दिया है कि बेटी बेटों से अधिक मॉ की कठिनाइयो को समझती है। और कमोबेश यही स्थिति इनकी *'बेटी का धन'* कहानी मे दृष्टिगत होती है। सुक्खू चौधरी के तीन बेटे, तीन बहुए और कई पौत्र, पौत्रियॉ थी। उनका गॉव मे काफी सम्मान था। इनकी एक बेटी थी। जिसका नाम 'गगाजली' था। पिता के ऊपर लगान के पैसे न दे पाने के कारण नालिश ठुक गई। और कुर्की का नोटिस आ गया। वह बेबसे हो गये। ईश्वर से चारपाई पर लेटे–लेटे रात–दिन मन्नते मागते और सोचते रहते किन्तु कोई उपाय नहीं मिला। यदि पिता का कष्ट कोई समझता था तो वह उसकी बेटी गगाजली थी। गगाजली का विवाह हो चुका था। लेखक के ही शब्दो मे –

"लडको को अपनी माता–पिता से वह प्रेम नही होता जो लडकियों को होता है। गंगाजली इस सोच विचार में मग्न रहती कि दादा की किस भांति सहायता करूँ।"

वही सुक्खू के बेटे यदि चाहते तो पिता की यह चिता दूर हो जाती किन्तु उन्हे कोई परवाह नही थी।

बेटी गगाजली रात को भूखे और चितित पिता के पास खडी हुई और उससे बोली कि उसके जेवर झगडू साहू के यहॉ गिरवी रख दे। उससे देने भर के पैसे मिल जायेगे।– इस प्रस्ताव को सुनकर सुक्खू ने कहा – **"बेटी! तुमको मुझसे यह बात कहते लाज नहीं आती। वेद शास्त्र में मुझे तुम्हारे गांव के कुएँ**

का पानी पीना भी मना है।" इस प्रकार के कथनो के द्वारा लेखक ने हिन्दू समाज की परम्परावादी दृष्टि को उपागर किया है। इस प्रकार लेखक ने यह दिखाया है कि तीन बेटे जिस समस्या को हल कर सकते थे किन्तु पिता की मर्यादा और सम्मान के विषय मे बेटे और बहुएँ नही सोचती वही एक पुत्री जो घर की सीमाओ मे बधी होती है अपने पिता की परेशानी को दूर करना चाहती है और उसके लिए उसे चाहे उसे अपने ससुराल की अमानत जेवर ही क्यो न गिरवी रखने पडे।

'सफेद खून' – कहानी मे – जादोराम और देवकी का पुत्र (साधो) कही मजदूरी करने गये थे वही साधो एक पादरी के सग भाग जाता है और चौदह वर्ष पश्चात जब लौट कर आता है। तब उसे जातिच्युत कर दिया जाना मुखिया द्वारा तय है। इस बात पर प्रतिक्रिया व्यक्त करता साधो देवकी से कहता है **"मैं तो तेरी थाली में खाऊॅगा।" उत्तर में देवकी कहती है– "मैनें तुझे छाती से दूध पिलाया है; तू मेरी थाली में खाएगा तो क्या?"** देवकी को समाज की चिन्ता नहीं कि साधो को घर मे रखने और खिलाने पिलाने पर उसे जाति से बाहर कर दिया जाएगा। माता अपने कमजोर बच्चे को और भी अधिक स्नेह करती है। यह उसके निस्वार्थ प्रेम का सबसे महान गुण है।

***'मंदिर'* –** कहानी का प्रारम्भ लेखक मातृप्रेम को धन्य मानते हुए करता है। ससार मे सब व्यर्थ है मां की ममता ही सत्य है। सुखिया– एक मॉ है। तीन दिन से उसे दाना पानी नही लिया है। सुखिया एक अछूत, गरीब और विधवा है। एक स्त्री के लिए जीवन का सहारा होना आवश्यक है और सुखिया के जीवन का एक मात्र आधार उसका पुत्र ही था जो पुआल पर पडा कराह रहा था।

इस दुखिया की विपत्ति का पारा–वार न था। एक वर्ष के भीतर दो बालक गंगा की गोद मे सौप चुकी थी। पतिदेव पहले ही सिधार चुके थे। अब उस अभागिन के जीवन का आधार, अवलम्ब, जो कुछ था, यही बालक था। हाय! क्या ईश्वर इसे भी उसकी गोद छीन लेना चाहते है? इन पक्तियो मे स्त्री की सारी कहानी सिमट गई है। बालक की भोली–भाली बाते माता को और

अधिक कष्ट दे रही है। वह माता को सुन्दर सुखद भविष्य दिखा रहा था, और उसकी स्थिति को देखकर एक अशिक्षित अंध विश्वासी मा यह सोचती है कि उसके सुन्दर लाल को किसी की बुरी दृष्टि (डीठ) लग गई है। तभी अचानक उसे झपकी लग गई और उस समय उसको ऐसा आभास हुआ कि उसके स्वर्गवासी पति उसे बालक के पास खडे होकर सिर पर हाथ फेर कर कह रहे है कि 'कल ठाकुर जी की पूजा कर दे' – वही तेरे सहायक होगे। दुख से व्याकुल सुखिया मन मे विचार करती है कि। 'उन्हे अब भी मेरी सुधि है।– स्त्री का पति प्रेम उसे इस कठिन समय मे याद आ रहा है कि उसके स्वर्गीय पति अब भी इतनी दूर होकर भी उसके कष्ट दूर करना चाहते है। और फिर वह ठाकुर की पूजा करने के लिए अपने हाथो के चॉदी के कडे दो रूपये मे गिरवी रखकर एक रूपये का एक ताबीज पुजारी उसे बेवकूफ बनाकर थमा देता है और शेष की वह पूजन सामग्री पहले ही खरीद लेती है। इन धर्म के ठेकेदारो के रूप मे उच्चवर्ण के लोग उसे ठाकुर जी की पूजा नही करने देते वह ठाकुर जी की मूर्ति पर माथा टेकने के लिए सध्या की आरती के समय से लेकर रात के दस बजे तक मदिर के बाहर खडी रहती है लेकिन फिर भी दर्शन नही मिलते तो वह रात के तीन बजे मदिर का ताला तोडकर अदर जाना चाहती है तभी पुजारी तथा अन्य कई लोग मिलकर सुखिया को मारने लगते है। एक जोर के धक्के से बालक मॉ की गोद से गिर जाता है और सुखिया देखती है कि अब उसके पास कुछ भी शेष नही है तब वह लम्बी सॉस खीच कर उठ खडी हुई। अब उसके ऑखो मे ऑसू नही क्रोध था। वह आवेश मे आकर कहने लगी– 'मेरे छू लेने से ठाकुर जी को छूत लग गई। पारस के छू ने से लोहा सोना हो जाता है। पारस लोहा नही हो सकता।—— मुझे बनाया तो छूत नही लगी? लो अब कभी छूने न जाऊँगी।'

अब कभी न छूने जाऊँगी से सुखिया का तात्पर्य है कि अब ऐसी कोई चीज शेष नही है जिसकी याचना वह ठाकुरजी से करने मदिर आयेगी। और सुखिया ढेर हो गयी।

शेख मखमूर – प्रेमचन्द की एक ऐसी कहानी है जो ब्रिटिश सरकार द्वारा जप्त कर ली गई थी यह उस समय सोजे वतन मे छपी थी। और जिसमे एक ऐसे शासक की कथा है जो निष्कासित जीवन व्यतीत कर रहा है और जब वह यह समझता है कि अब उस अकेले के वश मे कुछ नही है तो वह अपना विवाह एक सरदार की पुत्री से कर एक वारिस को सारे युद्ध कौशलो मे निपुण बना कर अपनी अन्तिम इच्छा यही व्यक्त करता है कि उसका पुत्र अपनी किशवर की बादशाहत वापस ले ले और यदि उसका पुत्र भी उसकी तरह सफल न हो सका तो वह अपने पुत्र को वसीयत मे वही ताज दे, और अपनी इच्छा बताए जिससे कि अतत. ताज उसी के वश का प्रतिनिधित्व करे और अतत मखमूर शेख के वंशजो के हाथ मे सत्ता वापस आ सके। इस कथा के अत मे शेख मखमूर की विधवा पत्नी रिन्दा को अपने पुत्र का रास्ता देखते–देखते जब थक गई तो उसने मालिका शेर अफगन के सामने वह जडाऊ से ताज जो उसके पति के वश की निशानी के रुप मे देकर कहा था । उसे मलिका को देकर कहा कि अपने जिगर के टुकडे को कहॉ ढूढू। रोते–रोते अधी हो गई सारी दुनियाकी खाक छानी मगर उसका कही पता नही लगा। – और अन्त मे उस बूढी स्त्री ने अपने पुत्र को सामने पाकर उसे छाती से लगा लिया और उसके प्राण पखेरू अपनी अन्तिम इच्छा पूर्ण होते ही उड गये।

स्त्री को अपने पति की अन्तिम इच्छा को पूर्ण करने मे सतुष्टि होती है। तभी उसके प्राणो ने शरीर का साथ छोड दिया।

प्रेमचन्द की कहानियो मे नारी विषयक जो भावना मिलती है वह उनकी जीवनी का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि वह प्राय उनकी आप बीती घटनाओ पर आधारित है। प्रेमचन्द का जीवन प्राय स्नेह से वचित ही रहा। मॉ की अकाल मृत्यु ने बालक प्रेमचन्द के मन पर आघात किया इसे प्रेमचन्द कभी भूला नही सके। इसी कारण उनकी कहानियो मे प्राय अक्सर ये विषय दिखते रहते है। मनुष्य को यथार्थ जीवन मे किसी वस्तु का अभाव कल्पनाशील बना देता है। जबकि ममता जैसा भाव बालक के लिए अत्यन्त आवश्यक है। जीवन में जो कुछ यथार्थ में नही मिलता मनुष्य उसे प्राय· कल्पना मे ढूढा करता है। बच्चो

मे प्यार की एक भूख होती है। जो दूध मलाई और मिठाई तथा खिलौनो से भी जयादा मादक होती है। इसके अभाव मे बालक का स्वाभाविक और सतुलित विकास नही हो पाता। बालक प्रेमचन्द इसी भूख की अनुभुति कर चुके थे। इस कारण वह सदैव यह जानने को उत्सुक रहे कि पारिवारिक विपन्नता का कारण क्या है और नारी का उसमे कितना सहयोग है। इसी कारण विवाह आदि सभी विषयो पर उनकी कहानियॉ लिखी गयी। दाम्पत्य जीवन मे पति और पत्नी दोनो अनन्य रूप से एक दूसरे से ऐसे सम्बन्धित होते है जैसे एक गाडी के पहिये। लेकिन व्यावहारिक स्तर पर सारा दायित्व पति पर ही होता है। पति मे चाहे जितने गुण या अवगुण हों लेकिन पत्नी की सम्पूर्ण चेष्टाये, उसका हृदय उसकी अनुरक्ति सभी पति को ही भेट होनी चाहिए। पति से अलग पत्नी का कोई अस्तित्व नही प्रेमचन्द से पूर्व साहित्य मे भी नारी के प्रति यही दृष्टिकोण था कि पति कैसा भी हो पत्नी को सदैव हर स्थिति मे अपनी सम्पूर्ण अनुरक्ति और समग्रता से पति की सेवा करनी चाहिए। उसके लिए पति ही परमेश्वर होना चाहिए। प्रेमचन्द की कहानियो का उद्देश्य जीवन के यथार्थ सत्य की खोज करना और उसका हर दृष्टि से आकलन करना होता है। यही कारण है कि प्रेमचन्द ने हर वर्ग एव सामाजिक स्थिति के ऊपर कहानियॉ लिखी है। प्रेमचन्द अपनी कहानी सृजन में शिल्पविधियो की विविधता न रखने के बावजूद भी अपनी कहानी शिल्प मे नितान्त सुदृढ, परिनिष्ठित, परिष्कृत एव विशिष्ट है। उनके द्वारा कहानियो मे प्रयुक्त शैली–शिल्प के लिए शका का कोई स्थान नही है। भाव पक्ष की दृष्टि से वे आदर्श मिश्रित यथार्थवादी लेखक थे। निश्चित उद्देश्य पात्रानपुरूप अथवा विषयानुरूप अति स्वाभाविक भाषा, आरम्भ मध्य चरमबिन्दु उपसहार, सयोग आदि प्रेमचन्द की कहानियो की ऐसी प्रमुख विशेषताऍ है जो उनकी हर रचना मे विद्यमान रहती हैं। इन्होने साहित्य मे –

स्त्री को विविध धरातलो मे उतारते हुये स्त्री के प्रेम के सम्बन्ध मे कहा है– 'प्रेम के उच्च आदर्शों का पालनस्त्रियॉ ही कर सकती है पुरूष नही' क्योकि पुरूष बहुधा प्रेम को वासना से अलग नही रख पाते। 'दो सखियॉ' कहानी का भुवन कहता है कि, "प्रेम के ऊँचे आदर्श का पालन रमणियॉ ही कर सकती है। पुरूष कभी प्रेम के लिए आत्मसमर्पण नही कर सकता – वह प्रेम को स्वार्थ एव वासना से अलग नही कर सकता।"

आचार्य चतुर सेन शास्त्री

आचार्य चतुर सेन शास्त्री ने लगभग 150 कहानियॉ लिखी है । इनकी प्रथम कहानी सन् 1910 मे गृहलक्ष्मी मे प्रकाशित हुई थी । आचार्य जी के लगभग पच्चीस कहानी सग्रह प्रकाशित हो चुके है । इनकी कहानियो को चार भागो मे रखा जा सकता है------

प्रागैतिहासिक एव ऐतिहसिक

1. सामाजिक एव राजनैतिक

2 मनोवैज्ञानिक

3 विविध

आचार्य जी ने अपने सामाजिक कहानियो मे दहेज की समस्या, वैवाहिक समस्या, दहेज को लेकर सम्बधियो से मनमुटाव, लडकी चुनना, विवाह के अवसर पर सघर्ष, स्त्री पुरुष के प्रेम, विधवा समस्या वेश्या समस्या, पुरुष द्वारा प्रेम–पाश मे नारी का शोषण, स्त्री शिक्षा, नारी–स्वतत्रता, वृद्ध एव बाल विवाह, सुधारो के नाम पर पापाचार आदि का वर्णन है ।

नारी की विवशताओ उनकी दुर्बलताओ एव पुरुष द्वारा उनके शोषणप की समस्या को *'टार्च लाइट', 'वन्स मोर', 'सविता', विधवा श्रम', 'पतिता', 'कहानी खत्म हो गयी', 'जापानी दासी', 'ठकुरानी', 'फिर', 'द्वितीया', 'कन्यादान', 'पत्थर मे अकुर', 'प्रणय वध', 'वेश्या', 'हेरफेर', 'सोने की पत्नी', 'म्यूजिक मास्टर', 'दूध की धार'* आदि कहानियो मे उठाया है ।

'टार्च लाइट' मे पुरुष की चारित्रिक दुर्बलताओ का वर्णन लेखक द्वारा किया गया है । इसमे एक विधवा के नवयुवक विनय द्वारा किस प्रकार शोषण किया जाता है उसका वर्णन है । विनय और विधवा एक दूसरे की ओर आकर्षित होते है । और विनय के प्रलोभन मे आकर विधवा अपना सतीत्व खो बैठती है । किन्तु विधवा तरुणी के गर्भवती हो जाने पर विनय उसका त्याग कर दूसरा विवाह रचा लेता है । और उसके सतीत्व को मात्र सौ रुपये मे

खरीदने की कोशिश की जाती है ताकि वह अपने मुँह पर ताला लगा सके । विधवा इस आघात को सहन नही कर पाती और सौ का नोट फेक कर चली आती है । असहाय, अबला इसके सिवा और क्या कर सकती है ।

'कहानी खत्म हो गयी' मे एक असहाय विधवा के शोषण की दर्दनाक कथा है । इसमे एक जमीदार द्वारा अपने बूढे सर्वराहकार की विधवा बेटी को पतन के रास्ते पर डालते दिखाया गया है । और उसके गर्भवती हो जाने पर उसका परित्याग । इस कहानी मे दिखाया गया है कि जमीदार द्वारा शोषित हो जाने पर भी वह उसका नाम जुबान पर नही लाती और जमीदार से कहती है कि मै मरते दम तक अपने जुबान पर आपका नाम नही लाऊँगी परन्तु मै स्त्री हूँ असहाय हूँ गॉव के किसी गरीब इज्जतदार ठाकुर से मेरी शादी करवा दीजिए या मुझे कोई और राह बता दीजिए । किन्तु वह नर–पशु उस महान–देवी की ऐसी भी कोई सहायता नही कर पाता और मजबूर अबला अपने नवजात शिशु के पैदा होते ही उसकी हत्या कर देती है । इस अभियोग मे वह पुलिस के हाथो रगे पकड ली जाती है । पुलिस के तमाम प्रताडना के वावजूद वह रहस्य नही खोलती । अन्त मे जमीदार द्वारा अपराध स्वीकार कर लेने पर भी अबला को कोई आश्रय नही मिलता और वह आत्महत्या कर लेती है ।

आचार्य जी ने *'जापानी दासी'* कहानी मे *'बिजली'* नामक एक दासी का वर्णन किया है जो एक नर–पशु द्वारा सौ रुपये मे खरीद ली जाती है वह दासी से बलात्कार करना चाहता है । बिजली दासी होते हुए भी स्त्री धर्म से परिचित है और उस दानव पुरुष से अपने सतीत्व की रक्षा हेतु अपने प्राण दे देती है परन्तु अपने धर्म का त्याग नही करती । इस कहानी मे आचार्य जी ने दिखाया है कि अपने सतीत्व की रक्षा के लिए अन्य देश की स्त्रियॉ भी अपने प्राणो की आहुति देना जानती है ।

इसके उलट *'सविता'* कहानी मे आचार्य जी ने सविता और कविता नाम की दो आधुनिक युवतियो का चित्रण किया है । किस प्रकार ये युवतियॉ पाखण्डियो के चक्कर में अपना सर्वस्व बलिदान कर देती है । इनका अधर्मी पिता धन की लालसा मे मुह फेर लेता है । इस कहानी से यह सदेश जाता है

कि आधुनिक शिक्षा आज की स्त्रियो को किस राह पर ले जा रही है । और माता–पिता के लिए शिक्षित पुत्रियो की शादी कितनी विषम समस्या है ।

'वन्स मोर' कहानी मे आचार्य जी ने आधुनिक सभ्यता पर व्यग किया है और यह दिखाया है कि साधारण स्थिति मे अपनी पुत्री हेतु पिता के लिए वर खोजना कितना दुष्कर कार्य हो गया है । आज की नयी पीढी अपने लिए पत्नी नही स्वर्ग की अप्सरा चाहता है । विवाह पूर्व लडकी की जॉच–परख ऐसे करते है जैसे किसी पशु का क्रय–विक्रय किया जा रहा है । एक बी0एल0 महोदय एक सभ्रान्त परिवार की शिक्षित कन्या को एक बार देखने के पश्चात कोई निर्णय न ले पाने की स्थिति मे लडकी के पिता से दोबारा लडकी (वन्स–मोर) देखने की इच्छा प्रकट करते है । कारण पूछने पर लडकी के पिता को कारण बताते है कि मै उसकी उँगलियॉ ठीक–ठाक नही देख पाया ––––

> **'हमारी ही बिरादरी मे एक शादी होकर आयी है, उस लडकी की उँगलियॉ और नाखून इस कदर खराब है साहेब कि बयान नही कर सकता, इसी वजह से जरा उँगलियॉ एक बार और देख लूँ तब अपनी राय कायम करुँ ।'**[1]

आचार्य जी ने नयी पीढी के ऊपर क्या सुन्दर कटाक्ष किया है कि नयी पीढी की सोच उन्हे और इस समाज को किस ओर ले जा रही है ।

'सोने की पत्नी' मे प्रमुख की धन–पिपासा का चित्रण किया गया है । इसमे एक निर्धन युवक अपनी पत्नी को सोने से लाद देना चाहता है । वर्तमान में वह अपने पालन–पोषण में ही असमर्थ है । पुरुष मात्र कल्पनाशील है कर्मठ कदापि नही । एक दिन वह स्वप्न देखता है कि उसकी पत्नी सोने की हो जाती है । पत्नी उसे एक अगुली काटकर दे देती है । उसका कार्य पूरा हो जाता है और जैसे–जैसे उसे धन आवश्यकता होती है पत्नी अपना अग

---

[1] नवाब, ननकू, कहानी सग्रह, पृ0 116।

काट–काट कर देती रहती है । और स्वप्न–भग होने पर उसे अपनी धन लिलाप्सा का ज्ञान होता है ।

अपनी *'विधवाश्रम'* कहानी मे आचार्य जी ने समाज के ठेकेदारो पर करारी चोट की है । इस कहानी मे विधवाश्रम के अन्दर जीने वाली विधावाओ के कुत्सित जीवन का भंडाफोड किया है । आर्य–समाज ने विधवाश्रमो की स्थापना जिन उद्देश्यो को लेकर की थी उसके उलट आजकल वे भ्रष्टाचार के केन्द्र बन चुके थे । इस कहानी मे कहानीकार का सुधारक रुप सामने आता है। इसमे समाज की आखो मे धूल झोकने वाले तथा अबलाओ के सतीत्व को नष्ठ करने वाले चारो धूर्तो को दड दिलाया गया है ।

अपनी कहानी *'पतिता'* आचार्य जी ने कारुणिक जीवन की कथाये कही है। आनन्दी, हीरा आदि वेश्याये अपने जीवन की कथाए स्वय कहती है तथा अपनी विवशताओ एव कटु अनुभव को एक–एक कर के समाज के सामने रखती गयी है ।

इनकी कुछ अन्य कहानियो मे नारी कोमल भावनाओ–त्याग, तपस्या, उत्सर्ग आदि को चित्रित किया गया है । इसके अन्तर्गत सुख दान, 'नही', 'बाहर–भीतर', 'धरती और आसमान', 'युगलागुलीय', 'दूध की धॉर' आदि कहानियॉ आति है । कहानी 'सुखदान' मे पति पत्नी की आध्यात्मिक सम्बन्ध का बडे ही भावपूर्ण एव कलात्मक ढग से वर्णन किया गया है । विद्यानाथ को अपनी प्रथम पत्नी की मृत्यु के पश्चात अपनी साली सुषमा से विवाह करना पडता है । सुषमा और उनकी आयु मे बडा अन्तर था तो भी सुषमा ने विद्यानाथ से विवाह करना सहर्ष स्वीकार कर लिया । वह भी अपने सुख के लिए नही अपितु विद्यानाथ के सुख के लिए । सुषमा जानती है कि उसकी बहन के आभाव में विद्यानाथ शायद ही अपने पौरुष और प्रतिभा का उपयोग कर सके । अपने जीजा के जीवन उत्थान हेतु वह अपनी अभिलाषाओ, इच्छाओ आदि का

दमन करके उनसे विवाह करना सहर्ष स्वीकार कर लेती है । विद्यानाथ उसके त्याग से अभिभूत होकर प्रश्न करते है———————

'मुझ जैसे पुरुष को, जो आयु मे तुमसे बहुत बडा और विधुर है, तुमने हठ पूर्वक अपना पति बनाया, जबकि तुम्हें अधिक उपयुक्त जीवन साथी मिल सकता था । और इस पर भी हंसती हो, गाती हो, खेलती हो, पिता और माता को भूली हुई हो । अपने अयोग्य पति को उदास भी नही देख सकती हो ! सुषमा यह क्या तपस्या नही है।'

इस पर सुषमा कहती है————————————

'स्त्री पति के सर्वस्व को पाकर भी असंतुष्ट ही रहती है । पति उसे अपेक्षाकृत अयोग्य ही प्रतीत होता है । जिस पर पति उसके सभी अत्याचार सहन करता है केवल थोडे सुखदान की आशा से, जिसकी उसे इसलिए बडी आवश्यकता होती है कि वह बाहरी जगत् की सभी सामाजिक और आर्थिक जिम्मेदारीयों के बोझ से निरन्तर थककर चूर रहता है । पर स्त्रियॉ पुरुष को वह सब दे सकती है ? वे स्त्रियॉ धन्य है, जिन्हे ऐसे पुरुष पति मिले है, जो अपना आत्म समर्पण पत्नी को करने के आदि हैं । पत्नी उन पर अबाध शासन चलाती है और उनकी सम्पूर्ण सम्पदा स्वच्छन्द भोगति है । तथा उनके धन से निर्बाध

जीवन–यापन करती है.. मुझे ऐसा ही एक पति प्राप्त है ।'[1]

'बाहर और भीतर' कहानी मे नारी की कर्तव्य निष्ठा पर प्रकाश डाला गया है । और एक बडा ही सामाजिक प्रश्न खडा होता है कि स्त्री की बाहरी सुन्दरता देखनी चहिए या आन्तरिक ? आज के युग मे स्त्री के विवाह हेतु उसकी बाहरी सुन्दरता काफी अहम स्थान रखती है । परन्तु इस कहानी के माध्यम से यह दिखलाया गया कि स्त्री की बाहरी सुन्दरता से आन्तरिक सुन्दरता अधिक महत्व रखती है । वाह्य सौन्दर्य से पति ही नही पूरे ससार पर अपना प्रभाव छोडती है।

'धरती और आसमान' कहानी मे आचार्य जी ने एक कलाकार के गृहस्थ जीवन का वर्णन किया गया है जो एक सफल कलाकार और असफल गृहस्थ है। वह कला की सफलता मे अपनी पत्नी की भूलता जाता है । सदा आदर्श के आसमान पर विचरण करते हुए धरती पर रहने वाली अपनी पत्नी जिसका जीवन अभाव मे घिस गया है उसकी ओर ध्यान नही दे पाता । *'दूध की धार'* कहानी मे इन्होने नारी के कोमल हृदय को साकार किया है और अन्तत इस निष्कर्ष पर पहुचते है कि नारी की सार्थकता उसके मातृत्व मे है ।

'मास्टर–साहब' कहानी मे इन्होने नारी के दूसरे ही रुप को चित्रित किया है । इसमे माया अपना सतीत्व लुटाकर एव पाप की गठरी अपने उदर मे लिए पति के पास वापस लौटती है ।

---

[1] मेरी प्रिय कहानियॉ, पृ0 116–117।

पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र'

एक नई भाषा शैली, क्रान्ति कारी भावना और राजनीतिक चेतना लेकर सन् 1922 ई0 मे हिन्दी कहानी मे आये। इनके आगमन की तुलना किसी ने 'उल्कापात' से तो किसी ने 'धूमकेतू' के उदय जैसी आकस्मिक घटनाओ से की है । तथा किसी ने तूफान और बवडर भी कहा । वास्तविकता तो यह है कि उग्र जी एक विद्रोही कलाकार है । उनका विद्रोह अज्ञेय की तरह व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक असमंजस्य और कुठाओ का परिणाम न था । जिससे कि यह अनुभूति हो कि मै विद्रोही हूँ ।

बल्कि उग्रजी का विद्रोह राजनैतिक और सामाजिक विचारो, रुठियो और गतानुगतिका के विरुद्ध था, इसी लिए सोद्देश्य और आस्थावान था और उसने अपनी लपेट मे सभी पाठको को लेकर उन दिनो खूब झकझोरा । देशप्रेम, त्याग, हिन्दु–मुस्लिम एकता आदि राजनैतिक विषयो को लेकर इन्होने अपनी कहानियो मे सबसे पहले तीब्र कलात्मक अभिव्यक्ति दी है ।

अपनी सामाजिक कहानियो और उपन्यास मे इन्होने तत्कालीन समाज मे फैली कुरीतियो और भ्रष्टाचारो की वीभत्सता का पूरा यथातथ्य चित्रण किया था।

वे साहित्कार जिन्होने अपने साहित्यिक अभिजात्य को एक थोथी आर्दशवादिता और आडम्बरपूर्ण नैतिकता के बल पर खडा किया था उन्हे उग्रजी का लेखन अप्रिय लगा । क्योकि इस लेखन मे सामाजिक वैभव और प्रेम के स्थान पर जीवन के यथार्थ उभय पक्षो को सतही रुप मे नही बल्कि जीवन के मर्म और गहराइयो में उतर कर आकलित किया गया था । इन्होने अपने कहानी साहित्य के अतिरिक्त साहित्य को अन्य साहित्यिक विधाओ से भी समृद्ध किया है । उपन्यास, नाटक, पत्रकारिता आदि क्षेत्रो मे भी कार्य किया है । इनकी प्रतिनिधि कहानियॉ *'इन्द्रधनुष', 'दोजखकी आग', 'चिनगारियॉ', 'रेश्मी', 'निर्लज्ज', 'बलात्कार', 'गल्पाजलि', 'चाकलेट', 'सनकी अमीर', 'पीलीइमारत', 'यह कचन*

सी काया', 'कला का पुरस्कार', 'काल कोठरी',' चित्र विचित्र' तथा 'उग्र' की श्रेष्ठ कहानियॉ आदि सग्रहो मे प्रकाशित हो चुकी है ।

आज नामक पत्रिका मे प्रकाशित इनकी कहानी 1920 मे पहली बार छपी इन्होने पाखडी और कुत्सित चरित्रो को अपने लेखन मे पात्र का रुप दिया । 'दिल्ली का दलाल' सरकार तुम्हारी ऑखो मे, बुधवा की बेटी आदि, कही–कही ये अश्लीलता की सीमा का उल्लघन कर गये है । जिसके कारण इनकी लोक प्रियता को धक्का लगा है । इन्होने समाज के विभिन्न क्षेत्रो के बीच धर्म, समाज सुधार, व्यापार, सरकारी काम व नई सभ्यता के पीछे होने वाले पापचार का चित्रण भी किया है । ये अतीत के कल्पना लोक का विचरण न करके वर्तमान लेखन पर विश्वास रखते है । चाहे वह कितना भी कटु और नगा क्यो न हो ।

विनोद शंकर व्यास

विनोद शंकर व्यास ने सामाजिक, ऐतिहासिक तथा राजनैतिक कहानियॉ लिखी है । आकार की लघुता इनकी कहानियो की विशेषता है । इनकी पहली काहनी *'प्रत्यावर्तन'* सन् 1927 मे इन्दु मे प्रकाशित हुई थी । अस्सी कहानियॉ इनका प्रमुख कहानी संग्रह है । इनकी सामाजिक कहानियो मे प्रेम की प्रधानता पायी जाती है । इनकी सामाजिक जीवन की कहानियो मे गृहस्थ प्रेम के स्वाभाविक और सयमित प्रेम से लेकर नवयुवक–नवयुवतियो के असयमित प्रेम और वेश्याओ के भोगविलास कलुषित जीवन मे मिलने वाले उद्भ्रान्त प्रेम तक को दर्शाया है ।

इनकी प्रमुख सामाजिक कहानी *'हृदय की कसक'* मे एक विधवा का निश्छल और विशुद्ध प्रेम दर्शाया गया है । इस कहानी मे विजय नामक युवक अपने दोस्त राजनाथ की अट्ठारह वर्षीय विधवा बहन से प्रेम दर्शाया गया । इस कहानी में समाज के भय से हृदय से एक दूसरे को प्यार करने के वावजूद शादी नही कर पाते । युवक विजय की विधवा शाता के बारे मे सोच दृष्टिगत है———————

> **'मुझे क्या अधिकार है कि मै शांता को प्यार करुँ। वह तो संसार से उसी दिन अलग कर दी गयी, जिस दिन वह विधवा हो गयी–उसका सुहाग धूल में मिल गया । मै उसे प्यार कर उसकी मनोवृत्ति को क्यों चंचल कर रहा हूँ । समाज में वह कलंकित हो जायेगी । फिर ? फिर वह कहीं की न रह जायेगी ।'**[1]

युवक विनोद द्वारा समाज का ऊँच–नीच समझाने पर विधवा शाता कहती है———————

> **'निगोडा समाज मतलबी है । वह दूसरों को सुखी नही देख सकता–किसी के दुख में हाथ भी नही बॅटा सकता । फिर ऐसे समाज के कलंक की क्या चिंता ? मैं तुम्हारे साथ रह कर अपने को परम सौभाग्यवती समझूंगी । अगर मेरा सौभाग्य अन्धे समाज को खलेगा, तो देखने देना ।'**[2]

---

[1] हृदय की कसक, अस्सी कहानियॉ, पृ0 393।

[2] हृदय की कसक, अस्सी कहानियॉ, पृ0 394।

इनकी दूसरी सामाजिक कहानी *'वासना की पुकार'* मे पति और पत्नी का प्रेम दर्शाया गया है । इसमे श्रीकान्त अपनी पत्नी की मृत्यु के पश्चात एक दिन गायिका सरिता के घर चला जाता है और उसका गाना सुनते समय उसे अपनी गलती का एहसास होता है और वह वापस अपने बच्चो के बीच आ जाता है । इनकी दूसरी सामाजिक कहानी विधाता मे एक विपन्न गरीब परिवार कितने कष्ट मे जीवन यापन करता है दिखाया गया है । उस समय पत्नी अपने पति के जूठन को प्रसाद के रुप मे ग्रहण करती थी ।

> **'एक ही थाली में त्रिवेणी और विजय कृष्ण साथ बैठकर भोजन करते थे और उन दोनो के भोजन कर लेने पर उसी थाली में लज्जावती टुकडो पर जीने वाले अपने पेट की ज्वाला शात करती थी । जूठन ही उसका सोहाग था ।'**[1]

इनकी कुछ कहानियो मे उच्छृखल प्रेम का चित्रण हुआ है । ऐसी कहानियॉ मे प्रेमी निम्नवर्गीय अथवा मध्यवर्गीय है । तथा अंग्रेजी पढी लिखि लडकियॉ और वेश्याओ के जीवन का अधिक चित्रण हुआ है । पुत्रहीन मॉ के चरित्र का उद्घाटन अन्धकार कहानी मे किया गया है ।

इनकी प्रमुख राजनितिक कहानियो मे *'स्वराज्य कब मिलेगा'* *'अब'* आदि है । *'कल्पनाओं का राजा'*, *'कहानी का लेखक'*, *'चित्रकार'* आदि भाव प्रधान कहानियॉ है । इन्होने अपनी कहानियो मे घटनाओ की अपेक्षा चरित्र–चित्रण को अधिक महत्व दिया है ।

---

[1] विधाता, अस्सी कहानियॉ, पृ0 340 ।

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

तुलसी के जीवन में रत्नावली के योगदान पर सदेह हो सकता है परन्तु निराला के जीवन मे मनोहरा देवी के योगदान में कोई सदेह मे नही है । निराला ने अपने जीवन काल मे कई बार वैराग्य का बाना पहना था परन्तु अन्त करण से वे मनोहरा के काली–कमली मे पूरी तरह सराबोर थे । निराला ने अपने साहित्य एवं वास्तविक जीवन में नारी को सदैव पूज्यनीया, गौरवमयी एव ममता की प्रतिमूर्ति के रुप मे देखा है ।

भारतीय समाज का सदैव ऐसा दुर्भाग्य रहा है कि नारी कभी स्वावलम्बी नही रह पायी है । कम से कम अठारवी और उन्नीसवी शताब्दी तो नारी पराधीनता का ही समय था । निराला अपने बगाल प्रवास के दौरान राजा राममोहन राय के साहसिक विचारो से काफी अभिभूत थे । निराला ने अपने साहित्य मे नारी पर काफी कुछ लिखा है और नारी को नये आकाश की सम्भावनाओं की ओर देखने को प्रेरित किया है । उनके दृष्टि मे नारी उज्जवला, शुभवासिनी, जीवन–शक्ति के रुप मे अवतरित होती है । और इन्होने भारत मे नारी के गौरवमयी प्रतिष्ठा को ठेस पहुँचाने वाले पुरुष वर्ग की भर्त्सना की है । निराला ने भारतीय नारी की स्थिती पर अपना अत्यत करुणा मय विचार रखा है——————

> **'हमारे देश में स्त्रियों के शिक्षा के अभाव से जैसी दुर्दशा हो रही है, उसका वर्णन असम्भव है । उनका लांछन देखकर पाषाण भी गल जाते है प्रति दिन भारत वर्ष का आकाश स्त्रियों के क्रन्दन से गुंजता रहता है । युवती, विधवाओ के आसुओं का प्रवाह प्रतिदिन बढ़ता जाता है । प्राचीन श्रृंखला ने नवीन भारत की शक्ति को मृत्यु की तरह घेर रखा है । घर की छोटी सी सीमा में बंधी हुई स्त्रियां आज अपने अधिकार, अपना गौरव, देश तथा समाज के प्रति अपना कर्तव्य, सब कुछ भुली हुई है । उनके साथ जो**

> पाशविक अत्याचार किये जाते हैं उनका कोई प्रतिकार नही होता । वे चुप–चाप आसुओ को पीकर रह जाती है । उनका जीवन एक अभिशप्त का जीवन बन रहा है। उन्हे यह जो शिक्षा दी जाती है कि तुम्हें अपने पुरुष के सिवा किसी पुरुष का मुख नही देखना चाहिए यह उनके अन्धकार जीवन मे टारपेटिग है। सिर झुकाऐ उन्हे ही तमाम जीवन पार कर देना पडता है ।'[1]

अर्थहीन सामाजिक रुढियो और नारी पर शासन करने की प्रवृत्ति ने समाज मे नारी की दशा को दयनीय बना दिया है । निराला के विचार से अशिक्षा के कारण ही स्त्रिया इस समाज मे तमाम नारकीय यातनाये झेलने को मजबूर हुई है । निराला ने नारी के उज्जवल स्वरुप और उसकी शक्तियो के प्रति अपने विचार प्रगट करते हुए कहा है——————

> 'जीवन में विजय प्राप्त करना हर जाति और हर धर्म की शिक्षा है । वहा स्त्रियां ही प्रधान सहायक के रुप में रगमंच की अभिनेत्री के रुप में आती है। स्त्रियों का शव लेकर विजयी होना असम्भव है । वे ही स्त्रियां जो वाह्य विभूति की मूर्तियां है, लक्ष्मी तथा सरस्वती की मूर्तिया है अपने पुरुषों में शक्ति सचार कर सकती है । स्त्रियों के रुप में जो विजय घर में मैजूद है वही बाहर भी मिलती है । घर का अभागा कभी बाहर प्रसिद्धि नही पाता । अत. हमे स्त्रियों की वाह्य स्वतत्रता शिक्षा–दीक्षा आदि पर विशेष ध्यान देने की जरुरत है । अन्यथा अब के पुरुषों की तरह उनके बच्चे भी गुलामी की अंधेरी रात में उडने वाले गीदड़ होगे, स्वाधीनता के प्रकाश में दहाडने वाले शेर नही हो सकते और हमारी मातृ भाषा का मुख उज्वल नही हो सकता ।'[2]

---

[1] प्रबन्ध प्रतिमा, पृ0 131।
[2] प्रबन्ध प्रतिमा, पृ0 137।

निराला जी ने कविता, कहानी, उपन्यास आदि सभी क्षेत्रो मे इन्होने अपनी महत्वपूर्ण देन प्रस्तुत की है । इनके प्रतिनिधी कहानी सग्रह मे 'लिली', 'चतुरी चमार', 'सखी', 'सुकुल की बीबी', तथा 'अपना घर' आदि है । निराला की विशेषता उनमे निहित देश–प्रेम तथा राष्ट्रीयता की भावना है । इनकी कहानियॉ भारतीय समाज मे जो रुढिया व्याप्त है तथा जो सामाजिक ह्रास का मूल कारण है उनका तीव्र विरोध हुआ है इनकी रचनाओ मे कही–कही यथार्थ वादि दृष्टिकोण अधिक प्रबल हो गया है । निराला की कहानियो मे प्राय काव्योचित भावुकता तथा परिहासात्मक व्यग की बहुलता रही है । क्योकि के वे पहले कवि थे कहानिकार बाद मे । 'बिल्ले सुर बकरिहा' उनकी एक प्रौढ और प्रगति शील रचना है ।

हास्य और व्यग के तत्व निराला की कहानियो मे एक प्रकार का तीखापन उत्पन्न कर देते है । समाजिक समस्याओ मे निराला ने यथार्थवादी दृष्टिकोण को ही प्रधानता दी है । श्रीमती 'गजानन्द शास्त्रीय', ज्योर्तिमयी', राजा साहब का ठेगा', 'चतुरी चमार', 'दो दाने' तथा 'सफलता' शीर्षक कहानियो मे निराला ने विभिन्न समस्याओ पर विचार करते हुए उनका व्यवहारिक निदान प्रस्तुत किया है। शोषण कि समस्या, धार्मिक और क्षेत्रीय समस्या तथा राष्ट्रीय चेतना के जागरण का आह्वान आदि निराला की कहानियो के मुख्य विषय है ।

मैथिलीशरण गुप्त

बीसवी सदी के आरम्भ मे जो कहानियॉ पद्यबद्ध शैली मे लिखी गयी उनमेक मैथिलीशरण गुप्त का नाम आता है । गुप्त जी द्वारा लिखित पद्यबद्ध कहानियो मे *'नकली किला'* तथा *'निन्यानवे का फेर'* बहुत प्रसिद्ध है । इनकी कहानी *'नकली किला'* मे एक मनोरजक घटना, साहस और अनुपम त्याग का वर्णन किया गया है । बूदी के हाडा–वशी प्रसिद्ध वीर कुम्भ चित्तौर के राणा लाखा से युद्ध करते हुए अपनी मातृभूमि की रक्षा मे वीरगती को प्राप्त होते है । इस कहानी के माध्यम से मातृभूमि की रक्षा मे वीरगती को प्राप्त होते है । इस कहानी के माध्यम से मातृभूमि के प्रति प्रेम दर्शाया गया है । इनकी दूसरी कहानी *'निन्यावनवे का फेर'* एक मनोरजक तथा उपदेशात्मक कहानी है । परन्तु कहानी का विकास जिस तरह से गद्य शैली मे हुआ वैसा पद्य शैली मे नही हुआ। वास्तव मे पद्यात्मक कहानी की गणना काव्य के अन्तर्गत होती है । और काव्य मे इस प्रकार की रचना को *'प्रबन्ध काव्य'* अथवा *'खण्ड काव्य'* कहते है । कहानी का दूसरा रुप अर्थात गद्यात्मक शैली जो वास्तव मे उसका प्रकृत रुप है– व्यापकता के साथ अपनायी गयी है । कहानी की यह परम्परा विकसित होकर वर्तमान कहानी तक आयी है ।

बाबू बद्रीनाथ भट्ट 'सुदर्शन'

वर्णनात्मक ढग की कहानियो के लेखन मे सुदर्शन जी का कमाल देखते ही बनता है। आरम्भ से ही ऐसी अविरल धारा छूटती है कि पाठक फिसलता हुआ अत मे किनारे जा लगता है । वह स्वय को भूल सा जाता है । इनके प्रकाशित सग्रह *'सुदर्शन सुधा', 'तीर्थयात्रा', 'पुष्पलता', 'गल्प मजरी', 'नवनिधि', 'सुप्रभात', 'चार कहानियॉ', 'परिवर्तन', 'नगीने', 'पनघट', 'प्रमोद', 'सुदर्शन सुमन', 'पारस', 'सात कहानियॉ', 'अगूठी का मुकदमा', 'बच्चो के लिए हितोपदेश', 'राजकुमार सागर', 'फूलवती', 'रुस्तम–सोहराब', 'खटपट लाला'* आदि ।

अग्रेजी साहित्य का अच्छा अध्ययन होने के कारण इनकी कहानियो की तकनीकी विशेष ढग की है । लोकप्रियता मे ये प्रेमचन्द्र के समान ही है । इनकी कहानियो की विषय सामाग्री प्राय सामाजिक क्षेत्र से ली गयी है । कहानी के सम्बन्ध मे इनका मत है कि 'हमे ऐसी कहानियॉ चाहिए, जिनका प्रभाव राष्ट्र और समाज पर अमिट हो और यह तभी हो सकता है जब हमारे राष्ट्र और समाज की बाते ही कहानी मे हो ।'

इसी तथ्य को अपने जीवन का चरम बिन्दु मानकर 'कला के.लिए कला' का खण्डन करते हुए सुन्दर कला पूर्ण कहानियो की सृष्टि की है । सुर्दशन जी की कहानियॉ बडे शान्त और गम्भीर प्रवाह के साथ अग्रसरित होती रहती है । कथा के केन्द्रीय स्थल को लेखक पाठको की दृष्टि से बहुत दूर तक अलग रख कर उन्हे अपने पीछे–पीछे चलाता रहता है । उनका यह गुण कि आगे क्या होगा कि उत्सुक्ता जागृत करता रहता है । कहानी साहित्य मे यह कौशल विशेष महत्वपूर्ण है । एक दृश्य पर पाठको का ध्यान आकृष्ट करके अचानक दृश्य मे परिवर्तन कर देने से हमारी आश्चर्यवृत्ति को सतुष्ट करना इन्हे खूब आता है । सुदर्शन जी एक आर्यसामाजी है । अत सुधारक प्रवृत्ति उनकी कहानियो मे स्पष्ट दिखती है ।

भगवती प्रसाद बाजपेयी

इस युग के कहानी लेखको मे महत्वपूर्ण स्थान रखते है । अल्प समय मे ही आर्थिक परिस्थितियो से जूझते हुए इन्होने ख्याति अर्जित की । इनकी समस्त कहानियो मे चरित्र का सुन्दर और प्रभावशाली रुप देखने मे आता है । ये प्राय मनोवैज्ञानिक आधार पर लिखी गई है । इन कहानियो मे असाधारण परिस्थिति के बीच पात्रो के चरित्र का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया जाता है । इनकी कहानियो मे कथा भाग नाममात्र का होता है । घटनाए और प्रसग केवल संकेत मात्र होते है , जिनके द्वारा प्रधान पात्र के प्रतिनिधि गुण अवगुण ही पाठको के ध्यान मे लाये जाते है । इस प्रकार इनकी कहानियो का उद्देश्य किसी मात्र के गुण या अवगुण का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करना होता है।

कहानी सग्रह– 'मधुपर्क'(1929), 'दीपमालिका' (1931), 'पुष्करिणी'(1939), 'हिलोर' (1929), 'खाली बोतल' (1940), 'मेरे सपने' (1940), 'ज्वार भाटा' (1940), 'कला की दृष्टि' (1942), 'उपहार' (1943), 'अगारे' (1944), 'उतार–चढव' (1950)

हिलोर पुष्करिणी और खाली बोतल की अनेक कहानियॉ इनकी मनोवैज्ञानिक दृष्टि की पृष्ट करते है । इनकी 'मिठाई वाला' कहानी ने तो पाठको का दिल ही चुरा लिया है । प्राय प्रत्येक सग्रह मे उसे स्थान मिल ही जाता है । इस कहानी के अतिरिक्त 'अपमान का भाग्य', 'झाकी', 'त्याग' 'बंशीवादन', 'आत्मघात', 'हत्यारा' आदि कहानी कथा की दृष्टि से सफल है ।

इनकी कहानियो का अत अन्य कहानीकारो से भिन्न होता है । इसके अतिरिक्त इनकी कहानियो के विषय मे यह कहा जा सकता है कि वे प्राय सामाजिक जीवन से तीव्र निरीक्षण के पश्चात ही कहानी की भूमिका निर्माण करते है ।

'मिठाई वाला' (1930)– यह कहानी स्वय बाजपेयी जी को भी अत्यंत प्रिय है । कोई भी कहानी जब देश काल की सीमाओ से दूर हटकर मानव की सहज करुण भावनाओ का वातायन खोलती है तब उसका मूल्य और अधिक बढ

जाता है । 'मिठाई वाला' एक ऐसी ही कहानी है जिसमे मानव की सात्विक, त्यागमय भावना का चित्र खीचा गया है । गलियो मे घूम–घूमकर फेरी लगाने वाला मिठाई वाला एक ऐसा ही व्यक्ति है । नगर मे एक धनवान और प्रतिष्ठित आदमी या मकान, व्यवसाय, गाडी, घोडा, नौकर चाकर–सभी कुछ थे। स्त्री थी छोटे–छोटे बच्चे भी थे । स्त्री सुन्दर थी और बच्चे प्यारे लेकिन समय की गति और ईश्वर की अदृश्य लीला को कौन जान सकता है । लेकिन प्राकृतिक आपदा और मौत के आगे क्या किसी का वश चलता है ? 'मिठाई वाला' कहानी में जीवन के इसी पक्ष के रहस्य का उद्घाटन है । स्त्री की मृत्यु के पश्चात मिठाई वाला अगर चाहता तो वैभव के मद मे अच्छा होकर एक तो क्या कई विवाह कर सकता था। लेकिन उसने ऐसा नही किया–सोचा तक नही । क्यो ? इसलिए कि मनुष्य पशु नही है । उसने वैभव की अपेक्षा हृदय को महत्व दिया। मृत पत्नी और बच्चो के लिए उसके दिल मे नैतिक कर्तव्य की भावना शेष रह गयी थी । बहुतो की बीबियॉ मरती है, बच्चे मरते है प्रिय जनो की स्मृति मे अपने जीवन के शेष दिन, त्याग, सेवा और वेदना की थपकी देकर, काटने का साहस करते है ? यह आत्मसयम की कठोर परीक्षा है । वाजपेयी जी की कहानियॉ यदि एक ओर निश्छल वेदना को अभ्यिक्त करती है , तो दूसरी ओर उन्होने मध्यम वर्गीय समाज के ह्यसोन्मुख जीवन के सजीव चित्र खीचे है । जबकि निराश प्रेम मे उनके प्रधान चरित्र अमित वन्दना के गद्य गीत गाते है । अत' हम कह सकते है कि वाजपेयी जी की कहानियो का मुख्य विषय मध्यम वर्गीय समाज का प्रेम और वेदना है । *'निदिया लागी'* मे कहानीकार ने भावना और विवके द्वारा समाज की रुढिवादी विचार धारा पर करारी चोट की है । लेकिन वाजपेयी जी का प्रहार यथार्थवादी कथा कारो की तरह भीषण नही होता बल्कि यहॉ भी उनके हृदय की सहज मधुरता बनीं है। पत्ती' का मधुर सगीत दीवार गिर जाने से उसकी मृत्यु उसके दुखी पति और बच्चों के लिए बेनी 'बाबू की सहायता–यही कुछ इस कहानी के विषय है । कहानीकार कातर होकर यह निष्कर्ष निकालता है कि पत्ती जैसी एक नही अनेक मजदूरिने नित्य मरती है ।

वाजपेयी ने जिस ह्यसोन्मुख जीवन और समाज का चित्रण किया है। उसके पतन और विकृति के भौतिक करणो का कोई सकेत नही किया है । क्योकि वे आर्थिक विषमता से उत्पन्न होने वाले सामाजिक दुष्परिणोमो की ओर उन्नमुख नही हुए है । ये मध्यम वर्ग की सामाजिक विश्रखलता के चित्र दिखाकर ही सन्तुष्ट हो जाते है । वाजपेयी जी ने कहानी की परिधि मे नारी चरित्रो की ही प्रधानता दी है । उन्ही के दुख दर्द, शोषण, उत्पीणन, प्रेम नैराश्य की सवेदनाओ से कहानियो का अन्तर भरा है । निम्न मध्यवर्ग से लिये गये इन नारी चरित्रो के अनेक रुप दिखाये गये है । उनके जीवन की अनेक स्थितियॉ हमारे सामने आती है । नारी के इन बहु विध रुपो द्वारा वाजपेयी जी ने मध्यमवर्गीय समाज के जीवन की कारुणिक अवस्थाओ का प्रदर्शन किया है जिनमे शोषण, उत्पीडन और करुणा अपनी पूरी गति के साथ दिखते है । इन कहानियो की सुत्रधारिणी नारियॉ ही है और पुरुष पात्र उनकी काया की छाया बन कर चलते है ।

सत्य जीवन वर्मा 'भारतीय'

सत्य जीवन वर्मा 'भारतीय' उन लेखको मे है जिन्होने हिन्दी साहित्य मे मात्र थोडी कहानियॉ लिखकर अपना महत्तवपूर्ण स्थान बना लिया है। इनके कहानियो का मूल आधार इनके जीवन व्यापी अनुभव ही है । *'पहाडी'* के शब्दो के अनुसार इनके कहानियो मे जीवन के अनुभव का ज्यादा चित्रण हुआ है ।

भारतीय जी का जीवन के प्रति अपना अलग दृष्टिकोण है । यह जगह जगह व्यग के रुप मे दिखता है । वे अध भक्ति मे कदापि विश्वास नही रखते और इसका मूल कारण अज्ञानता और मूर्खता मानते है । इनके अनुसार प्रत्येक मानव का धर्म होता है कि वह अन्य चर–अचर प्राणियो के प्रति सहानूभूतिपूर्ण एव प्रेममय वातावरण रखे । ये सह्रदय को मानव का अनिवार्य अग मानते है ।

इनकी कहानियॉ यथार्थवादी परम्परा पर आधारित है । इनकी कहानियो से ऐसा लगता है कि वे समाज मे प्रचलित रुढियो के अन्धविश्वासो के विरोधी तो जरुर थे परन्तु सामाजिक प्राणि होने के कारण विवशतावश उनके विरोध मे खडे नही हो पाते । ये विशेषत व्यक्तिवादी न होकर समाजवादी है । इनकी प्रसिद्ध कहानी *'मुनमुन'* मे इनके सिद्धान्त दृष्टिगोचर होते है ।

> **'एक ने मानों मानव समाज की ह्रदयहीनता का आजीवन अनुभव कर दार्शनिक की उदासीनता प्राप्त की थी–दूसरा मानव जाति की सत्ता की वेदी के सोपान की ओर घसीट जाने पर बकरी के बच्चे की भांति छटपता रहा था ।'**

ये पक्तियां समाज के खोखलेपन को दर्शाती है । लेखक इन खोखलेपन के प्रति अपना विद्रोह न प्रकटकर दार्शनिक की भूमिका अपनाता है । ऐसा लगता है कि लेखक के विचार से किसी विशेष दोष–पूर्ण सामाजिक व्यवस्था के बदलने मे असमर्थ होने पर भी उसका ज्ञान अवश्य होना चाहिए ।

शिव प्रसाद सिंह

'अधेरा हसता है' इनका एक प्रतिनिधि कहानी सकलन है जो (1928 ई0) इनकी कहानी अपने पात्र के चारो ओर से विकसित होती है । पात्रो और प्रतीको के चयन मे ये सावधानी बरतते है । *'खैरा पीपल कभी न डोले'* मे एक वृक्ष को माध्यम बनाकर सम्पूर्ण ग्राम के दृश्य उपस्थित किए है । एक सामाजिक कहानी मे इन्होने एक सास के उस विकृत स्वभाव का चित्रण किया है जहॉ वह बहू पर घर भीतर पहरेदारी करके नवदम्पत्ति के जीवन मे अकारण तनाव पैदा कर देती है । *'ऑखे'* की गुलाबो पनवाडिन शरतचद्र के नारी पात्र की भाति एक अविस्मरणीय चरित्र है । *'केवडे का फूल'* और *'महुए का फूल'* मानवीय करुणा की कहानियॉ है । इनकी कहानी के स्त्री पात्र जो बलिदान करते है वह हृदय को द्रवित कर देता है । *'नन्हो'* एक आदर्शवादी कहानी है ।

सुमित्रा नन्दन पन्त

आधुनिक प्रगतिशील लेखको मे पन्तजी का नाम सम्मान के साथ लिया जाता है । ये पहले कवि है बाद मे कहानी लेखक है । 'पॉच कहानियॉ' नामक इनके कहानी सग्रह मे इनका कवि रुप झलकाता है । इस सग्रह मे 'पानवाला', 'उसबार', 'दम्पत्ति', 'बन्नू', और अवगुण्ठन ये पॉच कहानियॉ है । ये कहानियॉ प्राय सामाजिक ओर चरित्र प्रधान है । इनमे पतजी के शब्द चित्र को प्रस्तुत करने की क्षमता दृष्टव्य है । भाषा और सौन्दर्य–पूर्ण भावो की अलकार सज्जा सुन्दर है । पंतजीका कवि मन वर्णन करते–करते इतना मुखर हो उठता है कि कहानी के प्रवाह एव गति को कई स्थलों पर अवरुद्ध कर देता है ।

'उस बार' मे कालेज के विभिन्न प्रकार के छात्रो का सुन्दर वर्णन है । वे दो युवकों के 'प्रेम' मे विभिन्नता का दिग्दर्शन कराते हुए लिखते है————————

> **'सतीश के प्रेम का प्रवाह शरीर से हृदय की ओर, तथा सुबोध का हृदय से शरीर की ओर था। एक फ्रायड के सिद्धान्तों का नमूना था दूसरा प्लेटो के । यह नही था कि एक प्रेमी था दूसरा कामी मात्र दोनो के आदर्श भिन्न थे ।'**[1]

पतजी कहानी कहते–कहते कई बार भाव विशेष की व्याख्या करने लग जाते है । जिससे की गति तथा कथानक के विकास पर आघात पहुचता है । 'उसबार' मे सरला के सुबोध के प्रति प्रेम का वर्णन करते–करते वे प्रेम शब्द की व्याख्या भी करने लगते है ।

> **'प्रेम ज्वाला है वह जिस पर पड़ती है उसी को भस्म कर ज्वाला में बदल देता है । वह प्रकाश पुत्र है । या तो प्रेम की सेवा कीजिए या संसार से सेवा करवाइये या हृदय की सृष्टि कीजिए या स्वर्ग का उपयोग कीजिये ।'**[2]

---

[1] पॉच कहानियॉ, उस बार, पृ0 45।

[2] पॉच कहानियॉ उस बार, पृ0 45।

'दम्पति' मे साधारण श्रेणी के डाक खाने के क्लर्क और उसकी पत्नी के जीवन का चित्रण है ।

पतजी स्वभाव से प्रकृति प्रेमी है किन्तु उनका प्रकृति प्रेम उनकी कहानी कला के स्वतत्र विकास मे बाधक हो गया है । प्रकृति चित्रण के मोह मे उनकी कला की गति अवरुद्ध सी हो जाती है । और कथानक शिथिल हो जाने से कहानी का जो प्रभाव पडना चाहिए वह समाप्त हो जाता है । प्रकृति चित्रण के वर्णन मे वे ये भूल जाते है कि उन्हे अभी कहानी कहनी है 'बन्नू' मे कान्तार और बाग का वर्णन करते हुए वे लिखते है ————————

> 'कान्तार के उलंग, निर्भीक वृक्ष महाशून्य की ओर विशाल बाहों की अपनी शाखाएं फैलाए मानो आकाश के गौरव की स्पर्धा करते थे । बाग के हरे भरे पेड फल और फूलों के भार से विनत् हो मानों पृथ्वी से मिलने को झुक—झुक पडते थे । वे जैसे स्वर्ग से वरदान पाने के अजस्र प्रार्थी थे, ये पृथ्वी को दान देने के निरन्तर आभिलाषी ।'[1]

इसके अतिरिक्त पतजी की स्त्री पात्रो का प्राय अपने ऊपर अकुश रहता है उनका मनभले ही परम्परा से हटना चाहे किन्तु वह ऐसा करती नही ।

> 'सरला के एक बार जी में आया कि उस फूल को नोच—नोच कर फर्श पर बिखेर दे, यह नारी स्वभाव की प्रेरणा थी, लेकिन सरला के शील ने नारी के उद्वेग को दबाकर उसे फूल नोचने से नही, मेज पर पटकने अथवा फेंकने से भी रोक दिया ।'[2]

सरला के अंत. करण का चित्रण करते हुए लेखक नारी की मनोदशा और स्वभाव का ऐसा वर्णन करते है मानो लेखक के द्वारा नही किसी नारी के द्वारा ही वर्णन किया जा रहा है ।

---

[1] सुमित्रा नन्दन पन्त, अखबार, पृ0 75।

[2] सुमित्रा नन्दन पन्त, अवगुण्ठन, पृ0 119।

द्विजेन्द्र नाथ मिश्र 'निर्गुण'

हिन्दी के प्रतिनिधि कहानीकार श्री निर्गुण ने 15 वर्ष की अल्पायु मे ही 'अभागी' शीर्षक प्रथम कहानी 1931 ई0 मे प्रकाशित हुई थी । निगुर्ण जी ने 20 वर्ष की अवस्था मे प्रयाग से निकलने वाली विख्यात कहानी प्रधान मासिक पत्रिका 'माया' के सम्पादक नियुक्त हुए थे ।

श्री निर्गुण प्रेमचद की कहानी की सहजता को उसी भाति लेते थे जैसा की श्री प्रेमचद किन्तु दृष्टि और भगिमा सदैव उनकी अपनी रही है । भारतीयता के प्रति निर्गुण आग्रहशील रहे है । मानवीय गुणो की सरक्षा के लिए जूझने वाले मानवो की करुण कथा निर्गुण जी की कहानियो का प्रमुख विषय है । उपेक्षितो के प्रति इनकी दृष्टि असीम ममता प्रदर्शित करती है । इनकी कहानी 'लाजवन्ती' मे स्त्रियो के आपसी वाद–विवाद, और अडोस–पडोस के दैनिक दिनचर्या का सुन्दर वर्णन है साथ ही एक सम्मिलित परिवार की सुन्दर और मनोहर झाकी प्रस्तुत की गई है ।

इस कहानी मे मनोरमा नाम की एक स्वच्छ और निर्मल ह्दया स्त्री है जो अपने मधुर व्यवहार से सबका ह्दय जीत लेती है ।

रायकृष्ण दास

गद्य काव्य उत्कृष्ट लेखक है । कविता, सवाद, कहानी और निबध लिखने मे इनका अपना अलग प्रभाव है । ये चित्रकला व मूर्तिकला के विशेष मर्मज्ञ थे । और पुरातत्व का भी उत्तमज्ञान इनको है । कलाविद् रायकृष्ण दास की कृतियो में भारतीय सस्कृति की सुन्दर झलक पायी जाती है। गूढ विचारो की सरल व्यजना इनकी शैली की विशेषता है और भाषा मे लालित्य का मधुर पुट रहता है । साहित्य के विविध अगो मे इनकी मौलिकता प्रत्यक्ष होती है । रायकृष्ण दास जी की विषय सामग्री अत्यत विस्तृत है । सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक सभी क्षेत्रो से आपकी कहानियो की सामग्री मिलती है । लेकिन ऐतिहासिक एव सामाजिक कहानियो मे इन्हे विशेष सफलता मिली है । 'गहूला', 'नरराक्षस', 'भय का भूत', 'प्रसन्नता की प्राप्ति' आदि कहानियो से इनकी कलात्मकता का अनुमान लगाया जा सकता है । इनकी प्रमुख रचनाए 'साधना', 'छायापथ', 'प्रवाल', सलाप है । इनकी कहानियो मे पात्रो की मानसिक स्थितियो का अच्छा चित्रण किया गया है साथ ही वाह्य रुप रेखा पर भी प्रकाश डालते है । किसी भी दृश्य का वर्णन चित्र के समान ऑखो के सामने उपस्थित हो जाता है ।

चन्द्र गुप्त 'विद्यालंकार'

इन्होने जीवन की सामान्य समस्या को लेकर भावपूर्ण यर्थाथवादी कहानी लिखी है जिसमे इन्हें पूर्ण सफलता मिली है । 'भय का राज्य', 'विवाह की कहानियॉ' तथा 'संसार की सर्वश्रेष्ठ कहानियॉ इनके सग्रह है । चन्द्रगुप्त जी का कहानी साहित्य मे बहुत ऊँचा स्थान है । क्योकि इनकी कहानियो के द्वारा कला रुप का बहुत ही सुन्दर विकास हुआ है । 'चन्द्रकला' तथा 'अमावस' इनके सफल कहानी सग्रह है । दैनिक जीवन के मार्मिक उदाहरणो को छॉटकर उन्हे ज्यो का त्यो रख देने मे विद्यालकारजी को सिद्धी मिली है । इससे एक ओर कहानी में प्रभावोत्पादकता आ गई है, दूसरी ओर सत्य की व्यजना बहुत ही सुन्दर रुप से हो पायी है । यही उनकी कहानियो की विशेष खूबी है । 'काम काज' , 'क ख ग' आदि कहानियॉ इसके सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है । लेखक अपनी ओर से एक भी शब्द नही कहता, दैनिक जीवन मे जिन सत्यो को वह अपनी ऑखो से देखता तथा अनुभव करता है , उसी की व्यजना बडी ही बारीकी के साथ पर्दे की ओर से करता है । 'वापसी' नामक इनकी कहानी विदेशी पृष्ठ भूमि पर लिखी गई है । इसमे एक रुसी सिपाही जो अपनी दो बेटियो और पत्नी अन्ना को छोडकर युद्ध करने जाता है और वापस आने पर जो दृश्य देखता है उससे उसका हृदय प्रतिशोध की अग्नि मे धधकने लगता है। क्योकि जर्मन नाजियो के सेना के एक अधिकारी ने उसकी बेटी लिजा जो पद्रह वर्ष की थी । उसके साथ बलात्कार न कर पाने से उसे गोली मार दी । इस कहानी में लिजा जो कि मात्र पंद्रह वर्ष की बालिका थी, किन्तु अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए कमजोर और नि शस्त्र होने पर अपने दॉत से ही उस जर्मन को इतनी जोर से काट लेती है कि वह तिलमिलाकर अनजाने ही गोली मार देता है और अपने इस कुकृत्य को छिपाने के लिए वह उस मासूम की लाश पर पेट्रोल डाल कर आग लगवा देता है ।

लिजा का पिता अपनी पुत्री के प्रति किए गये इस अत्याचार का बदला लेने के लिए वापस लौटकर प्रतिद्वदी देश को जलाकर राख करना चाहता है वहॉ एक तीन वर्ष की नन्ही सी बच्ची को उसकी मरी हुई मॉ के पास से ले आता है किन्तु उसकी वह बच्ची उसमे अपने पिता को खोजती है और अतत प्रतिशोध का स्थान पुत्री का प्रेम ले लेता है और वह दुश्मन देश की बच्ची मे अपनी बेटी लिजा की छवि देखता है ।

गोविन्द वल्लभ पंत

इनकी कहानियो मे प्रसाद जी की भाव प्रधानता दिखती है । पतजी को पात्रो के प्रेम का चित्रण करने मे अपूर्व सफलता मिली है । इन दोनो गुणो के अतिरिक्त आपको वातावरण उपस्थित करने मे विशेषता प्राप्त है । असम्भव घटनाओ को भी एक वातावरण के द्वारा ऐसे रुप मे प्रस्तुत करते है कि उनकी सत्यता पर कोई सन्देह नही रह जाता । कहानीकार की होशियारी इसी बात मे है कि वह अपने आप को अस्वाभाविकता से दूर रखे । इसका इन्होने पूर्ण रुप से पालन किया है इनकी 'प्रियदर्शी' कहानी इस कथन का अच्छा उदाहरण है ।

सियाराम शरण गुप्त

कवि और उपन्यासकार होने के साथ ही साथ श्रीगुप्त एक अच्छे कहानीकार भी है । इनके 'मानुषी' नामक कहानी सग्रह मे अनेक सुन्दर कहानियॉ है । 'काकी' तो वास्तव मे इनकी एक कलापूर्ण कहानी है । प्रेमचंद की भॉति इनकी कहानियो मे भी ग्रामीण समाज के भिन्न–भिन्न चित्र खीचे गये है, जो बडे ही भाव पूर्ण है । पात्रो के आतरिक मनोभावो का चित्रण भी बडी खूबी के साथ किया गया है । इनके सभी पात्रो मे स्नेह का गुण पाया जाता है। इसी स्नेह के कारण कभी पात्र का उत्थान दिखाया गया है कभी पतन साधारण ग्रामवासियो की अधभक्ति, विश्वास और भावनाओ का सुन्दर चित्र उपस्थित किया गया है और ऐसा प्रतीत होता है कि लेखक का उद्देश्य भी यही है ।

इनकी कहानी 'काकी' मे एक बालक अपने स्वर्गीय मॉ को एक पतग के सहारे आकाश (राम के यहॉ) से उतारने के लिए चोरी तक कर लेता है । इसमे लेखक ने एक बालक को मॉ का स्नेह क्या–क्या करवा सकता है हय दिखाया है ।

इनके कहानी सग्रह 'अतिम आकाक्षा', 'मानुषी' है ।

चंडी प्रसाद 'हृदयेश'

चडी प्रसाद 'हृदयेश' ने कहानी साहित्य को समृद्ध बनाने मे भावपूर्ण कहानियों के सुन्दर सग्रह प्रदान किए है । 'नदन निकु´ज' और 'वनमाला' मे 'विलासिनी' इस कथन की पुष्टि करती है।

इनके सम्बध मे यह कहा जा सकता है कि अस्वाभाविकता से दूर (कृत्रिमता) को छोडकर इन्होने स्वाभाविकता को अधिक से अधिक स्थान दिया है। उन्होने आधुनिकता का चित्रण करते हुए भी भारतीयता को हाथ से जाने नही दिया है पूर्व और पश्चिम का अच्छा समन्वय इनकी कहानियो मे दिखता है। ये एक आदर्शवादी लेखक है । इनकी कहानियो मे सेवा, त्याग, बलिदान, आत्मशुद्धि आदि पुनीत भावनाओ की ही प्रतिध्वनि सुनाई पडती है ।

जैनेन्द्र कुमार

यह एक अर्तदृष्टि सम्पन्न कहानीकार है । उन्होने भी जीवन के व्यापक विस्तार से घटनाओ का चयन किया है । आधुनिक युग के प्रमुख कहानी लेखको में गिने जाने वाले श्री जैनेन्द्र पर धर्म ओर गॉधीवाद दोनो का प्रभाव होन के कारण ये स्वभावत अहिंसावादी है । इन्होने अपनी कहानियो मे जीवन के व्यापक विस्तार से घटनाओ का चयन किया है । जिस समय इन्होने लिखना प्रारम्भ किया वह समय राजनीतिक उथल पुथल और क्रान्तिकारी आन्दोन का था । इसी कारण इनकी कुछ कहानी इस वातावरण को अपने आप मे समेटे हुए दिखती है ।

प्रेमचंद जी के अनुरुप इन्होने रुढिगत कहानीकला की कसौटी पर खरी उतरने वाली कहानियॉ लिखी है, परन्तु साथ ही उसमे कुछ नवीन तत्वो का भी समावेश किया है ।

इन्होने प्रेमचद और प्रसाद के पश्चात अपनी प्रतिभा से युक्त नयेपन को लेकर हिन्दी कहानी साहित्य के क्षेत्र मे पदार्पण किया ।

इनकी पहली नवीनता भाषा सम्बधी है । इन्होने प्रेमचद और प्रसाद के समान सर्वत्र व्याकरण सम्मत भाषा न लिखकर साधारण बोलचाल की भाषा का प्रयोग आरम्भ किया । जिस प्रकार साधारण प्रतिदिन के जीवन मे बोलते समय सज्ञा और क्रिया विशेषण मे त्रुटियॉ होती रहती है । उसी प्रकार मजी धुली भाषा न लिखकर प्रतिदिन की साधारण भाषा मे ही इनकी कहानियॉ रची बंधी है। सभवत इसी कारण ये पाठको के और भी नजदीक आकर पाठक के ह्दय को छू जाती है । पाठक का मन स्वत ही कहानी के नायक नायिका के मन से एकाकार होकर आत्मविस्मृत सा हो जाता है । इन प्रयोगो से कहानी अधिक आकर्षक हो गई है ।

अपनी कहानी कला के विषय मे दिये गये इनके विचारो मे इन्होने कहा है ————————

> **'मैं विचारक नही हूँ । दार्शनिक नही हूँ । फ्रायड को काफी मैं जानता नही । टेकनीक क्या होती है, प्रयोग क्या होता है, मेरी समझ में नहीं आता । शिल्प का मुझे ज्ञान नहीं है । मै बोलकर कहानी लिखवाता हूँ । अत भाषा सम्बंधी भूलें रह जाती होगी । अब उन्हे कौन सुधारे ?'**[1]

प्रेमचद से इनकी दूसरी भिन्नता यह है कि ये अर्धचेतन तथा अवचेतन मन की मनोवैज्ञानिक गुत्थियो को सुलझाते हुए सामने आते है । प्रेमचद ने जहॉ केवल मनोभावो का प्रदर्शन किया है वहॉ जैनेन्द्र मनोवृत्तियो के सूक्ष्म निरीक्षण और विश्लेषण मे सलग्न दिखाई देते है । आधुनिक लेखको की तरह इन्होने यौन कुण्ठा और यौन सम्बध को भी अपनी एकाधिक कहानियो मे स्थान दिया है । 'एक रात', 'ग्रामोफोन रिकार्ड', प्रतिभा, रत्नप्रभा इत्यादि इसी प्रकार की कहानियॉ है ।

'फॉसी' प्रेमचद कालीन एक घटनाप्रधान, आदर्शवादी भावुंकता पूर्ण कहानी है । परन्तु 'पत्नी' मे आतकवादी जीवन की व्यर्थता और उसके प्रति उदासीनता प्रदर्शित की गई है । इनकी अन्य राजनीतिक कहानियॉ जैसे 'जयसधि' मे घृणा और महत्वाकाक्षा पर प्रेम और त्याग की विजय दिखाई गई है । 'विज्ञान' मे राजनीति और राजीनतिज्ञो की खुले शब्दो मे निन्दा की गई है।

कुछ कहानियो में अतिमानवीय घटनाओ का समावेश किया गया है । 'लाल सरोवर' कहानी मे वैरागी के प्रतिपद पर एक एक सोने की मोहर बन

---

[1] हिन्दी साहित्य का सर्वेक्षण, विश्वम्भर मानव, पृ0 113।

जाती है, फिर उसके पश्चाताप करने पर प्रत्येक पद पर एक–एक फूल बनता जाता है । अत मे मगल दास द्वारा एकत्रित –––––––

> **'अशर्फियों के एक ढेर को सम्मान पूर्वक बैरागी को सर्मपण करने के विचार से चले तो क्या देखते है कि वहाँ तो एक भी अशर्फी नही है, बल्कि गुलाबी फूलों का एक सरोवर सा लहरा रहा है वे गुलाबी फूल ह्रदय के आकार के है और मानों मुकुलित होने की बाट देख रहे है ।'[1]**

जैनेन्द्र की कुछ कहानियॉ गॉधीजी, किशोरीलाल, मशरुवाला, काका कालेकर, विनोबाभावे आदि की विचार धारा से प्रभावित दृष्टिगत होती है । ये बहुत विचार प्रधान लेखो से मिलती जुलती है इनमे मनोरजकता बहुत कम है । 'एक रात' इसी प्रकार की कहानी है । जैनेन्द्र की कहानियो मे भावुकता यथेष्ट मात्रा मे है, किन्तु वह सर्वत्र बुद्धि से, विचार से, सयत रुप मे ही प्रकट हुई है, 'दुर्घटना' जैसी कुछ कहानियॉ दार्शनिकता के बोझ से दबी हुई है ।

जैनेन्द्र जी की कुछ कहानियॉ समष्टि प्रेम, आत्मोत्सर्ग और आत्मत्याग की भावना से परिपूर्ण है । जैनेन्द्र ने अपनी कहानियो के विषय जीवन के विभिन्न क्षेत्रो से लिए है । वे प्राय सामाजिक कहानियों को अपने लेखन मे स्थान देते है । इनकी पारिवारिक कहानियो मे परिवार के विभिन्न व्यक्तियो का मानसिक विश्लेषण का बहुत उत्कृष्ट श्रेणी का होता है । जैनेन्द्रजी की 'इनाम' कहानी एक दस वर्षीय बालक की कहानी है । 'धनजय' नाम का यह बालक कक्षा मे प्रथम आया है । और वह इतनी कम आयु मे कक्षा आठ मे आ गया है। घर आकर अपनी मॉ को यह खुशी और उत्साह के साथ यह सोचकर बताता है कि उसकी मॉ उसे खुश होकर ढेरो प्यार करेगी किन्तु मॉ उसकी इतनी बडी खुशी पर खुश भी नही होती और न ही उसको कोई तवज्जो देती

---

[1] जैनेन्द्र की कहानियॉ, तृतीय भाग, पृ0 125।

है । आजकल उसकी मॉ अनमनी सी रहती है वह इस अनमनेपन का कारण जानता तो है किन्तु कुछ कर नही पाता ।

अत मे उसके पिता और प्रमिला जी जो कि उसके पिता की मित्र है घर मिठाई लेकर आती है, और उससे कुछ इनाम मागने को कहती है साथ ही पिताजी भी इनाम देना चाहते है । बालक छोटा होते हुए भी अपनी मॉ की खुशियो के रुप मे माता पिता का सम्मिलित स्नेह चाहते हुए पिता और प्रमिलाजी से आपस मे न मिलने का वादा इनाम स्वरुप माग कर कहानी का सुखान्त करता है ।

जैनेन्द्र जी ने अनेक कहानियॉ लगभग 200 के ऊपर लिखी है । जिनका संग्रह– 'फॉसी', 'दोचिड़िया', 'परख–स्पर्द्धा', 'वातायन', 'एक रात', 'नीलम देश की राजकन्या' तथा ध्रुवयात्रा–आदि हो चुका है । ये लगभग 1928 से लगातार कहानी रचना करते चले आ रहे है । इनकी आरम्भिक कहानियो का प्रकाशन फॉसी तथा खेल पुस्तको मे पहले ही हो चुका है ।

ब्याह, भाभी, निस्तार, मास्टरजी, आदि कहानियो मे प्रेम और विवाह से सम्बन्धित स्त्री पुरुष के पारस्परिक सम्बन्धो की गहराई की यर्थाथता को प्रस्तुत किया है । 'भाभी' कहानी मे विनय सगा देवर नही है । अपनी सास की सहेली का लडका होने के नाते भाभी उसे देवर मानती है । देवर तथा भाभी का पारस्परिक प्रेम इतना गहन है कि उसकी पवित्रता पर सब अविश्वास करते है । यहॉ तक कि विनय की पत्नी भी इस प्रेम को सहन नही कर पाती । अत मे विनय 50,000 रु0 का ड्राफ्ट रामू के नाम लिखकर कही चला जाता है और भाभी को मिलता है विनय की जगह 50,000 रु0 का कागज का टुकडा । भाभी ने उसे लिया और रख लिया । इस एक वाक्य मे भाभी के हृदय मे होने वाले संघर्ष और नैराश्य को ध्वनित करके ही लेखक कहानी को समाप्त कर देता है।

'ब्याह' कहानी मे लेखक ने यह दिखाने की चेष्टा की है कि विवाह के लिए लडके–लडकी का सामाजिक, मानसिक स्तर का समान होना आवश्यक नही है । ललिता और पारस के विवाह से यह बात सिद्ध हो जाता है ।

'मास्टरजी' कहानी मे मास्टरनीजी एक बार घर के नौकर के साथ भागकर पुन वापस आ जाती है । मास्टरजी न केवल उसको सम्पूर्ण हृदय से स्वीकार करते है, वरन् उसकी प्रतिष्ठा को बनाए रखने के लिए इस बात को गुप्त भी रखते है । वे प्रात खूब सारी मिठाई लाते है और सब बच्चो पर यही प्रकट करते है कि उनकी बहू वह मिठाई बच्चों के लिए अपने पीहर से लायी है।

'निस्तार' एक ऐसी लडकी की कहानी है । जो विवाह से पूर्व ही गर्भवती हो जाती है उसे इस परिस्थिति से निस्तार दिलाने के लिए माता प्रसाद अपने पुत्र से उसका विवाह करने को तैयार हो जाते है । यहॉ लेखक पाठको को स्त्री पुरुष के सम्बधों के प्रति एक नवीन दृष्टिकोण देता है ।

'वीडट्रिस' लडाई के जीवन से सम्बन्धित कहानी है । इस कहानी मे लेखक की यह मान्यता दृष्टिगत होती है कि वह पाप जो दूसरो को सुखं पहुचाने के लिए किया जाय पाप नही रहता । यह नर्स अपने मरीजो को स्वस्थ करने के लिए अपना पूर्ण सर्मपण कर देती है , किन्तु वह तब भी महान है । क्योकि वह यह सब स्वंय के सुख के लिए नही अपितु दूसरो के कल्याण के लिए करती है ।

जैनेन्द्रजी अपनी कहानियो मे प्राय अत सघर्ष का चित्रण करते है । यह चित्रण मानसिक दशा का चित्रण करके कराते है अथवा उसकी शारीरिक चेष्टाओं द्वारा होता है । 'प्रतिभा' कहानी मे प्रतिभा के मन मे एक घुटन है, एक चाह है, जिसे वह स्वय भी नही जानती । वह स्वय से तथा अपनी परिस्थितियो से पूर्ण रुप से असंतुष्ट है । 'रत्नप्रभा' मे रत्नप्रभा चाहती है कि नन्हा वैरागी

पूर्ण रुप से उसका हो जाय । इस इच्छा को वह अनक सकेतो द्वारा प्रकट करती है खुलकर कभी नही कहती ।

स्त्री को जैनेन्द्र के साहित्य मे प्रमुख स्थान मिला है । उन्होने सामाजिक रुढियो और बधनो मे बंधी स्त्री में विद्रोह की भावना जागृत की है । उनकी स्त्री अपनी विषम् परिस्थितियों को मौन होकर नही सहती बल्कि विद्रोह कर बैठती है अन्त मे एक दार्शनिकभाव के तहत आत्मसर्मपण कर देती है ।

जैनेन्द्र की नारी स्वतत्रता को स्वच्छदता मे बदल लेती है–– यहॉ तुलसी दास की दो पक्तियॉ सार्थक मालूम होती है––––––

'अति वर्षा चलि फूट कियारी
जिमि स्वतंत्र होइ विगरहि नारी'

इस रुप मे *'मास्टरजी'* मे उनकी पत्नी का नौकर के साथ भाग जाना ।

'एक रात' मे सुदर्शना घर त्याग कर जयराज के साथ रात्रि व्यतीत करती है । *'ग्रामोफोन'* की विषया मनमोहन को भावावेश मे आत्मसर्मपण कर देती है । *'वीडट्रिस'* मे नर्स रोगियो के कल्याण के लिए ही सही अपना शरीर समर्पित करने मे हिचकिचाती नहीं ।

जैनेन्द्रजी ने इन स्त्रियों के पर–पुरुषो से सम्बध होने पर भी उनके महत्व को कही भी घटाया नही है । वे नारी के शरीर को मन्दिर मानते है, जहॉ कही भी कलुष को स्थान नही । स्त्री घर छोडकर चली जाती है, विभिन्न परिस्थितियो मे रहती है, फिर भी ग्रहण की जाती है और अपनी पूर्ण प्रतिष्ठा की अधिकारिणी है । मास्टरजी, कहानी के माध्यम से यह चित्रित किया गया है।

अतत हम यह कह सकते है कि लेखक ने स्त्री को उसके अधिकारो के प्रति सचेत किया है प्रेरणा दी है । स्त्री छूने मात्र से अपवित्र नही हो जाती–हिन्दू समाज की इस भावना का खण्डन लेखक ने अपनी कहानियो के माध्यम से किया है ।

यशपाल

समाजवादी यथार्थवादी के कहानी कारो मे यशपाल का विशेष स्थान है। इनके प्रमुख कहानी सग्रह – *पिजडे की उडान, ज्ञान दान, वो दुनिया, चक्कर क्लब, तर्क का तूफान, अभिशप्त, भस्वामृत चिगारिया, फूलो का कुर्ता* आदि है। यशपाल जी जो भी लिखते है उसमे समाज का हित प्रमुख रहता है। इन्होने अपनी कहानियों मे व्यक्ति परिवार और समूह सभी की समस्याये उठायी है। परन्तु इनकी मुख्य समस्याये दो ही है – रोटी और सेक्स। इन्होने अपनी कहानियो मे घुमा फिरा कर यह सिद्ध करना चाहा है कि स्त्री हो या पुरूष उसका नैतिक पतन आर्थिक अभाव के कारण ही होता है। यशपाल जी उन लेखको में से है जिन्होने अपने छोटे रचना काल मे ही हिन्दी को विपुल साहित्य से सृजित किया है। इनकी अधिकाश कहानिया सामाजिक है जो द्वदात्मक भौतिक के धरातल पर लिखी गयी है। इनकी प्रमुख सामाजिक कहानियॉ निम्न है– *हिसा, दु खी, कर्मफल, सन्यासी, नई दुनिया, गुडबाए दर्दे दिल, अपनी करनी, उतरा नशा, अभिशप्त, रोटी का मोल, पुनिया की होली, काला आदमी, समाज की धूल, छलिया नारी* आदि है।

इनकी प्रमुख कहानी 'करवा का व्रत' पूरी तरह स्त्री भावना और पुरूष अहं की कहानी है। कन्हैया लाल के विवाह के उपरान्त विवाहित मित्रो के अनुभव से सम्बन्धित परामर्श दिये– और परिणामत स्त्री बेचारी बन कर रह गयी। एक तथाकथित समझदार मित्र हेमराज ने समझाया – औरत सरकस हो जाती है तो आदमी को उम्र भर उसीका गुलाम ही बना रहना पडता है। .. डर से उसे रहना चाहिएं। ऐसे ही डराने के परामर्श का पालन करते हुए कन्हैया लाल ने उस पर हाथ उठाने शुरू कर दिये और इसी पुरूषत्व को दिखाने के नशे मे वह दिनो दिन उसके संग कटु व्यवहार करने लगा। लाजो ने करवा चौथ

का व्रत करने के लिए सरघी मे क्या–क्या लाने की फरमाईश रखी? फिर भी पति महोदय भूल गये– और अपनी भूल पर पछताने के बजाय लाजो को और डॉट दिया– इस पर रोती हुई लाजो सोचती रही – क्या जुल्म है। इन्ही के लिए व्रत कर रही हूँ और इन्हे गुस्सा आ रहा है। जनम–जनम के लिये यही मिले है। इसलिए मै भूखी मर रही हूँ। बडा सुख मिल रहा है। अगले जनम मे और बडा सुख देगे? ये ही जनम मुश्किल हो रहा है। इस जनम मे इस मुसीबत से मर जाना अच्छा लगता है। दूसरे जनम के लिए वही मुसीबत पक्की कर रही हूँ। फिर अपने दुखी जीवन के कारण मर जाने का ख्याल आया। फिर ध्यान आया कि व्रत किये हुए मर गई तो पुण्य फल मे यही पति अगले जनमे मे मिलेगा और इस परिणाम की कल्पना मात्र से लाजो उठकर एक रोटी खाकर पानी पी लेती है। वह व्रत तोड देती है – और फिर वह पति का क्रोध देखकर पहले तो वह कुछ न बोली, पुन जब पति ने हाथ उठाया तो बोली – मार ले, मार ले, जान से मार डाल, पीछा छूटे आज ही तो मारेगा। मैने कौन सा व्रत रखा है कि जनम–जनम तेरी मार खाऊँगी।

इनकी कहानी मे यहॉ हसी नही' आती बल्कि स्त्री की समाजिक विडम्बना दिखाई देती है । कुछ निम्न वर्ग विषय मे भी 'सन्यासी' मे मध्यवर्ग गुडबाई मे दर्देदिल मे उच्च वर्ग की प्रवृत्तियॉ उभर कर सामने आयी है। इन्होने अपनी कहानियो मे जहॉ सकट का ध्यान नही रखा है वहॉ वे कुछ आपत्तिजनक हो गयी है। 'आतिथ्य' एक रसीली रचना मात्र है। इन्होने समाजवादी विचारधारा का सहारा लेकर समाज की आर्थिक स्थिति और धर्म, नीति, प्राचीन परम्परा आदि की आलोचना की है। 'पिजडे की उडान' की कहानी मे प्रेम के भिन्न–भिन्न रूप दिखलाये गये है। 'वो दुनिया' की कहानियो मे गृहस्थजीवन (सन्यासी) तथा नव युवक और नवयुवतीयों के आचरण (दो मुह की बात, दूसरी नाक) आदि का चित्रण किया गया है। 'तर्क का तूफान' सग्रह मे प्रेम कहानियों की प्रधानता है। अतः यह कहा जा सकता है कि यशपाल की सामाजिक कहानियों मे वर्तमान समाज की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण, शोषक और शोषित आदि को समानता में लाकर खडा कर दिया गया है।

उपेन्द्र नाथ अश्क

प्रेमचद सस्थान के कहानीकारो मे उपेन्द्र नाथ अश्क जी प्रमुख है । ये 1926 से लगातार कहानी लिख रहे है । इनकी प्रथम प्रकाशित कहानी *'नज्जिया'* है जो लाहौर के प्रसिद्व मासिक पत्रिका रुमान मे छपी थी । इनकी कहानियॉ एक प्रान्तीय न होकर अन्तर्प्रान्तीय मानवता की प्रतिनिधित्व करती है । 'निशानिया' मे इनकी लगभग सत्रह कहानियॉ है जिसका सग्रह 1927 मे हुआ था । 'जादुई शाम का गीत' इनकी श्रेष्ठ कहानियों का सग्रह है ।

आलोच्य युगीन इनकी प्रमुख कहानियॉ *'नज्जिया' (1932–1933), 'नरक का चुनाव' (1932–1933), 'मरिचिका' (1932), 'निशानियॉ' (1933), 'जादुई शाम का गीत' (1933), 'चित्रकार की मौत' (1933), 'फूल का अंजाम' (1934), 'वह, मेरी मगेतर थी' (1934)* आदि है ।

इनकी कहानियो का मुख्य विषय प्रेम होता है । और इन्होने अपने कहानियो मे प्रेम की व्याख्या भिन्न–भिन्न ढग से की है । इनकी प्रथम कहानी 'नज्जिया' मे दो प्रेमियो की कथा दी गयी है । जिनके बीच मे ऊँच–नीच का भेद भाव पैदा हो जाता है । इस कहानी मे हिन्दुस्तान के एक सैनिक हसरत जो इराक की नर्तकी नज्जिया से वेपनाह मोहब्बत करता है और इराक से भारत वापस आते समय उसे अपने साथ भारत वापस लाना चाहता है । हसरत एक ऊँचे खानदान से ताल्लुकात रखता है और नज्जिया जब हसरत से पूछती है कि तुम्हारे घर वाले जब पूछेंगे तो क्या जबाब दोगे के उत्तर मे हसरत कहता है––––––

'कहूँगा वह बगदाद के एक बडे ऊँचे घराने की कलाकार है । बहुत पहले वह घराना हिन्दुस्तान

> से चला गया था । अब सागर की बूंद सागर में आ मिली है ।'[1]

इसमे नायक अपने परिवार के समक्ष सामाजिक मर्यादाओ के बन्धन के कारण उसे एक नर्तकी के रुप मे अपनी पत्नी बनाने मे असमर्थ पाता है । किन्तु इससे नज्जिया के सम्मान को ठेस पहुँचती है और वह उसके साथ हिन्दुस्तान जाने से मना कर देती है । नज्जिया का कथन————————

> **'हसरत, तुम भी मुझे इस हैसियत से भारत नही ले जाना चाहते । तुम्हारे ह्रदय मे भी एक ऊँचे घराने की युवती से विवाह करने की आकांक्षा है, एक नर्तकी के लिए वहॉ कोई स्थान नही । तुम भी मेरे रुप से प्रेम करते हो, मेरी कला से नही, इसलिए विदा। तुम उत्तर मे खडे हो, तो मै दक्षिण में, तुम ऊँचे घराने के चिराग हो मै एक छोटे वंश की शमअ । जाति ही नही, विचारों ही का नही हम तुम में आकाश पताल का अन्तर है । इस मुहब्बत को जीवन एक साधारण घटना मानकर भूल जाना।'[2]**

'वह मेरी मंगेतर थी' इनकी एक शिक्षाप्रद कहानी है । इसमे एक प्रेमिका मूर्त जो समाज के ठेकेदारो द्वारा जबरदस्ती पथभ्रष्ट बना दी गयी थी अपने प्रेमी की निशानी रेशमी रुमाल वापस देते हुए कहती है————

[1] जादूई शाम का गीत, नाज्जिया, पृ0 31।
[2] जादूई शाम का गीत, नाज्जिया, पृ0 31–32।

> 'यह पवित्र रुमाल अब मुझ–सी अपवित्र नारी के पास नही रहना चाहिए । इसे अपनी नव बधू को भेटकर देना।'[1]

इसमे प्रेमिका द्वारा आदर्श प्रेम और बलिदान का उदाहरण पेश किया गया है । इनकी कहानी चित्रकार की मौत मे चित्रकार लालचन्द अपने सहपाठिनी राधा से विवाह न कर पाने पर चित्रकारिता छोड देता है । इसमे निश्चल एव आदर्श प्रेम दिखाया गया है । इनकी कहानी *'नरक का चुनाव'* एक आदर्शवादी कहानी है । इसमे दो सहेलियो सुमिया और लक्ष्मी के पत्रो का उल्लेख है । इसमे लक्ष्मी द्वारा अपने घमडी सहेली ललता के घमड को चूर करते हुए दिखाया गया है । इनकी कहानी *'324'* मे कुली हैदर का वर्णन है जो कुमारी वाल्टन के प्यार भरी पुचकार से अत्यन्त भारी पियानो को अकेले ही स्टेशन से उनके बंगले तक पहुँचा देता है । और अन्तत मृत्यु को गले लगा लेता है । इनकी कहानी *'मरीचिका'* भी पत्रव्यवहार के आधार पर एक कहानी है। इसमे नायक शकुन्तला का पति जो लाहौर मे रहता है और पत्रो के माध्यम से लगातार शकुन्तला को लाहौर की गर्मी एव अन्य परेशानियॉ बताकर आने से मना करता है। परन्तु पति की सेवा के उद्देश्य से एक दिन वह बिना बताये लाहौर पहुँच जाती है तो देखती है कि उसका पति मदन किसी अन्य युवती के साथ रगरेलिया मना रहा है यह देख उसे बहुत कष्ट हुआ और वह नगे पैर वापस लौट आती है ।

इनकी कहानी *'निशानिया'* मे एक विवाहित युवक का पडोस मे रहने वाली लडकी से एकतरफा प्रेम करते हुए दिखाया गया है और कल्पना मे ही हमेशा उसकी याद मे खोया रहता है । लडकी सरला के विषय मे वह सोचता है कि यदि वह अविवाहित होता तो उस लडकी सरला से अवश्य विवाह कर लेता । किन्तु अफसोस वह शादी–शुदा है ।

इनकी कहानियो मे सामाजिक जीवन के भिन्न–भिन्न रुपो की व्याख्या मिलती है । प्रेम के भिन्न–भिन्न पक्ष, समाज की आलोचना, उनका दुख दर्द हास्य–व्यग आदि इनकी कहानियो के प्रमुख विषय है । इनकी कहानियॉ जीवन के किसी सत्य को व्यक्त करती हुई दिखती है ।

---

[1] जादूई शाम का गीत, वह मेरी मगेतर थी, पृ0 77।

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'

आधुनिक युग के युग–प्रर्वतक कहानीकारो मे अज्ञेय जी का नाम सर्वविदित है । इनके तीन कहानी सग्रह विपथगा, परम्परा, कोठरी की बात, प्रासम्भ्ककाल के है सन् 1924 की स्काउट्स पत्रिका *'सेवा'* मे इनकी पहली कहानी प्रकाशित हुई बतायी जाती है । इनकी सामाजिक कहानियो के नाम इस प्रकार है—————— *हरसिगार, रोज, दु:ख और तितलिया, एकाकी तारा, अमर वल्लरी, शान्ति हसी थी, सूक्ति और भाष्य, इन्दु की बेटी, मसो, सभ्यता का एक दिन, परमपरा, पहाडी जीवन, जीवन शक्ति, एक कहानी, शरणदाता, बदला, लेटरबक्स, बसत, कविप्रिया आदि ।*

इसके अतिरिक्त राजनीतिक क्रान्ति तथा बन्दी जीवन की कहानियॉ पिपथगा, 'पगोडा वृक्ष', 'हरिति', 'अकलक', 'मिलन', 'कडियॉ', 'छाया', 'द्रोही', 'विवके से बढकर, एक घटे मे, कैसेन्ड्रा का अभिशाप, आदि प्रमुख है । इनकी राजनीतिक और बन्दी जीवन की कहानियो मे रुस व चीन के वातावरण उपस्थित है । जिनमे समकालीन समाज की बुराइयो द्ररिद्रता की ज्वाला, जमीदारो, साहूकारो तथा शासकों द्वारा किसान, मजदूर वर्ग पर किए गए अत्याचारो और उनसे मुक्ति पाने के लिए हिसात्मक क्रान्ति की आवश्यकता पर बल दिया गया है । अज्ञेय जी विस्फोटक और उत्तेजित करने वाली विचार धारा से प्रभावित है । वह अहिसा का मजाक उडाते हुए कहते है —————

> **'अहिंसात्मक क्रान्ति । जो भूखे, नंगे प्रताडित है, उनको जाकर कहोगे चुपचाप बिना आह भरे मरते जाओं । रुस की भयंकर सर्दी में बर्फ के सीचे दब जाओं, लेकिन इस बात का ध्यान रखना कि तुम्हारी लोथ किसी भद्र पुरुष के रास्ते में न आ जाय । रोते हुए बच्चों से कहोगे– माता की छातियों को मत देखो बाहर जा कर मिट्टी पत्थर खाकर भूख मिटाओ ।'**[1]

---

[1] अज्ञेय, विपथना, पृ0 9।

क्रान्ति मे स्त्री पुरुष सब समान रुप से भाग लेते है । स्त्रियॉ पुरुषो की अपेक्षा साहसी, कर्त्तव्य, तत्तपर, त्यागी और देश प्रेम से परिपूर्ण है । देश और क्रान्ति के लिए वे अपने प्रेम, स्वार्थ, जीवन और यहॉ तक कि शरीर की आहुति देने मे भी नही हिचकिचाती ।

इनकी सामाजिक कहानियो पात्र तथा क्षेत्र व्यापक है । लेखक ने सामयिक भारतीय समाज की द्ररिद्रता, परिवार के दुखमय जीवन, गृहस्थ जीवन मे पति पत्नी के प्रेम और मानसिक घुटन का चित्रण किया है ।

'हरसिगार' कहानी मे अनाथ बालको के दुखी जीवन से उत्पन्न मानसिक कष्ट का चित्रण किया गया है । रोज कहानी की नायिका मालती एक मशीन की तरह अपने दैनिक जीवन को व्यतीत करती है । उस जीवन मे कही भी रस या आनंद का समावेश नही है । बच्चे का गिरने पर चोट लग जाना । और मॉ का यह कहना कि इसके चोटे लगती ही रहती है, रोज ही गिर पडता है । और यह कह कर उसे गोद मे उठा लेना । एसा प्रतीत होता है कि मॉ कही से बच्चे की चोट से विचलित नही हुई बल्कि छोटी–मोटी नित्यप्रति की घटना के समान सपाट रुप से इस बात को भुला देती है ।

'एकाकी तारा' की लूनी एक ऐसी स्त्री है, जो विवाह किए बिना किसी आदमी के साथ रहने लगती है । वह उसे कभी भी प्रेम नही कर पाती, इसमे प्रेम रहित पति पत्नी के सम्बध पर व्यग्य किया गया है । लूनी के एक मात्र भाई को नौ बजे फासी की सजा होनी थी । नौ बजे घडी का घडियाल सुनकर अनरुभव करती है कि उसक भाई को फासी की सजा हो गई होगी । एक मात्र भाई को खोकर वह जो अनुभव करती है उसका वर्णन इस प्रकार है————————

'लूनी का शरीर, उसकी आत्मा, शिथिल होकर झुक गई, उसे जान पडा एक निराकार छाया उसके पास खडी है, और उसे स्पर्श कर रही है– उसे जान पडा, वहाँ कुछ नही है, वह अकेली हो गयी है, लुटगई है, क्वांरी ही विधवा हो गई है– उसने देखा शून्य में आकाश–गंगा विश्व पुरुष के गले की फांसी–को छूती हुई पताका ही उसकी एक मात्र सहचरी रह गई है..... . ।'[1]

'अमर वल्लरी' मे जड और चेतन के प्रेम के अन्तर को दर्शाया गया है । इस कहानी मे एक पीपल के वृक्ष और अमर वल्लरी के प्रेम को दर्शाया गया है। इस प्रणय वर्णन मे लेखक पीपल के अनुभव के रुप मे विभिन्न सामाजिक कुरीतियो का निर्देश भी करता चलता है । पुरुष से ठगी जाकर स्त्री का समाज मे कोई भी स्थान नही रहता । समाज मे लोग उसे पतिता कलकिनी, भ्रष्टा आदि कह कर उसे गाव से समाज से अपमानित कर निकाल देते है । स्त्री के रुप मे लेखक स्वय ही प्रश्न करता है मै ही तो उसके पास स्वय गई थी–कलकिनी ! पर वह अबोध शिशु तो निर्दोष है, वह क्यो जलेगा ? क्यों काला होगा ? लेखक ने यहॉ अवैध बच्चो तथा उनकी मॉ की समस्या को प्रस्तुत किया है । किन्तु असका कोई समाधान नही दिया है । इसी प्रकार पीपल के वृक्ष की स्मृतियों के रुप मे अन्य सामाजिक समस्याओ को प्रस्तुत किया है ।

'दु ख और तितलिया' मे शेखर अपनी मॉ की चिता मे तितलियो के जाडे को जल कर मरता देखकर अपनी मॉ और तितलियों की मृत्यु के भेद पर विचार करता है ।

---

[1] अज्ञेय, एकाकीतारा, पृ0 182।

अज्ञेयजी की कहानी का प्रारम्भ कही पात्रो की परिस्थिति अथवा उनकी मनोवृत्तियो का विश्लेषण करने वाले वर्णनो से किया गया है । कहानी अत मे कभी घटना का परिणाम कभी पात्रो की अन्तिम स्थिति अथवा भाव विशेष का वर्णन किया जाता है । कहानी लिखने के लिए प्राय इन्होने पात्रो के जीवन को विशद क्षेत्र से लिया है । इनके पात्रो के व्यक्तित्व भी समान्य न होकर विशिष्ट रहे है । इनके कहानियो और उपन्यासो के चुने गये स्त्री पात्र अधिक आकर्षक और प्रभाव पूर्ण है । ये पाठक के ह्रदय पर अपनी परिस्थिति और व्यक्तित्व की छाप छोड जाते है। पाठक इन चरित्रो को जल्दी भूल नही पाता । इन्होने वाह्न तथा आन्तरिक वृत्तियो के परस्पर सघर्ष और समन्वय की ओर अधिक ध्यान दिया है । इनका व्यक्तित्व समाज से समझौता न करके–विद्रोह करता है। कर्तव्य और प्रेम के सघर्ष को मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के माध्यम से ये पाठक के सामने प्रस्तुत कर देते है ।

अत मे हम यह कह सकते है कि लेखक आधुनिक मनोविश्लेषण से युक्त दार्शनिक तथा विद्रोही भावो से परिपूर्ण समस्या मूलक कहानी लिखने वाले प्रमुख कहानीकार है । समाज मे स्त्रियो के नैतिक और अनैतिक दोनो स्थितियो का मनोवैज्ञानिक आधार प्रस्तुत कर लेखक अपनी कहानी के माध्यम से सामाजिक समस्याओ को अकित करता है ।

रामप्रसाद घिलडियाल 'पहाड़ी'

इन्होने कहानी के क्षेत्र मे विभिन्न नये प्रयोग किए है । इनकी कहानियॉ सामाजिक, दार्शनिक, साहसिक, प्रेमप्रणय से युक्त, युद्ध सम्बधी, क्रान्ति सम्बधी तथा वैज्ञानिक है । इनमे सामाजिक कहानियो की सख्या सबसे अधिक है ।

'सडक पर', 'हिरन की ऑखे', 'छाया मे', ' नया रास्ता', 'बया का घोसला', 'अधूरा चित्र', 'कैदी और बुलबुल', 'बरगद की जडे', 'शेषनाग की छाती', भोली', 'सफर' आदि इनके कहानी सग्रह है । ये अपने आपको मौलिक कहानी लेखक मानते है ।

इनकी सामाजिक कहानियो मे यौन कुण्ठा व यौन सबधो को अत्यधिक स्थान मिला है । *'हिरन की ऑख'* मे सग्रहित कहानियॉ इसका उदाहरण है । इसमे मध्यम वर्गीय परिवार की स्त्रियो के अवैध सम्बन्धो का नग्न चित्रण है । फ्रायड की विचारधारा से प्रभावित लेखक सेक्स की भूख को अन्य भूखो की तरह मानता दृष्टिगत होता है जिसका शमन होना अनिवार्य और स्वाभाविक है। सेक्स की भूख स्त्री व पुरुष दोनो मे दिखाई पडती है । किन्तु स्त्री उस भूख से विशेष रुप से प्रभावित दिखाई पडती है । इस सग्रह की कहानियो मे इस दृष्टि को विशेष स्थान दिया गया है । *'राजरानी'* की *'श्यामा'* वृद्व पति के रोगग्रस्त होने पर मॉ बनने की कामना को पूर्ण करने के लिए नौकर का आश्रय लेती है । *'एस्प्रिन की टेबलेट'* जो शारीरिक पीडा को दूर करती है । कुमारी तथा विवाहिता दोनो ही दुश्चरिता दिखलायी है । विवाहित स्त्री के दुराचरण के लिए उसका पति और अनमेल विवाह ही उत्तरदायी है । इन कहानियो को पढकर एक प्रकार की जुगुप्सा उत्पन्न होती है । *'रैन बसेरा' 'चारविराम' 'छिपकली' 'कबूतरी' 'फायर ब्रिगेड'* आदि कहानियो का पढकर ऐसा लगता है । मानो लेखक भावनाओ का वर्णन करते–करते स्वय रम गया है। पति अवैध सबन्ध रखने मे साधन मात्र है । जैसाकि *'यर्थाथवादी रोमास'*

कहानी मे दिखायी है । सामाजिक कहानियॉ जीवन के विभिन्न क्षेत्रो से ली गयी है । *'कामिनी'* और *'घुत'* वेश्या जीवन पर आधारित कहानी है । इसमे यह दिखाने की चेष्टा की गयी है कि वेश्या जीवन–यापन करते हुए भी किसी एक पुरुष से सच्चा प्रेम कर सकती है ।

इनकी कहानी *'समस्या'* मे असफल प्रेम से उत्पन्न प्रतिशोध की भावना का चित्रण है । इसमे डाक्टर वैज्ञानिक चमत्कारो के द्वारा कितनी ही स्त्रियो को तपेदिक का शिकार बना देता है । अन्तत वह स्वय और उसकी प्रेयसी सुशीला भी इन्ही चमत्कारों का शिकार हो जाती है ।

'मौली' इनकी एक चरित्र–प्रधान कहानी है । इस कहानी का नायक *'मौली'* दूसरो का उपकार करते हुए भी अपने को कही बाधकर नही रख सका। माया और गायत्री के चरित्रो से लेखक ने यह दिखाने की चेष्टा की है कि समाज मे बदनाम युवतिया भी सुअवसर पाकर अच्छा जीवन व्यतीत कर सकती है । पहाडी ने निम्नवर्ग, हरिजन, वेश्या आदि के जीवन का काफी सफल चित्रण किया है । *'रीढ की हड्डी'* कहानी के माध्यम से यह दिखाया गया है कि हरिजनो की स्त्रिया किस प्रकार उच्च वर्ग के लोगो की वासना का शिकार बनती है ।

पहाडी की कहानियॉ प्राय मध्यवर्गीय जीवन से ही सम्बन्धित है । और इनमे किसी भी विषय परिस्थिति मे मध्यवर्ग को ही टूटता हुआ दिखाया गया है। ये यौन–सम्बन्धो और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण से युक्त कहानी लिखने वालो मे से एक है ।

उपसंहार

उपसंहार

'सामाजिक उत्पादन और पुनर्रुत्पादन के साथ साहित्य का अभिन्न संबंध है । इसकी धुरी है स्त्री और पुरुष । इन दोनो को लिग की पहचान करने का अर्थ होगा स्त्री अस्मिता का लोप । स्त्री की अस्मिता को प्राथमिकता देकर ही समाज एवं साहित्य के इतिहास मे उसकी सर्जक एव उत्पादक भूमिका की पहचान संभव है ।'[1]

इतिहास के पृष्ठो पर अकित भारतीय स्त्री का रुप बहुआयामिय है। वह युद्ध क्षेत्र मे शत्रुओ से लोहा भी लेती है , अश्रुओं की नदी मे डूबती उतराती भी दिखती है , पुरुष की मनमानी और तानाशाही का शिकार भी है , कहने को गृहस्वामिनी है, श्वसुर गृह की साम्राज्ञी भी है ये उसके विभिन्न रुप है । उसका जीवन अनेक उतार चढावो का इतिहास है । समाज ने उसे ऊँचा आसन दिया किन्तु नीच भी माना है । जहॉ उसकी पूजा होती है । वहॉ देवता निवास करते है, किन्तु नारी मे बहुत विकार भी है । जहॉ स्त्री अपमानित हुई है वहॉ क्या समाज नही था ? उसका जन्म लेना धरती पर आना समाज की सहानुभूति माता पिता के साथ स्वत ही हो जाती है । छोटी से थोडी बडी हुई तो नई समस्या आई–हाथ कैसे पीले होगे, दहेज कहॉ से आयेगा, दहेज के अभाव मे कैसा घर वर मिलेगा आदि–आदि ? इन प्रश्नो और उत्तरो मे उलझा नारी मन और जीवन आज समाज मे अपने लिए सुख ,शान्ति स्थिरता और सम्मान की तलाश करता हुआ दिखता है ।

इस तरह हम यह देखते है कि सामाजिक इतिहास हो या साहित्य का इतिहास या फिर स्त्री की सामाजिक स्थिति सभी कुछ पुरुषवादी नजरिये से देखा गया है । दूसरे शब्दो मे हम कह सकते है कि इतिहास का अर्थ है पुरुषो का इतिहास । इतिहास मे पुरुषो की भूमिका का महिमा मंडन ही इतिहासकारो

---

[1] स्त्री साहित्य का इतिहास, पत्रिका स्वाधीनता (शारदीय विशेषाक), पृ0 263 ।

का प्रधान उद्देश्य रहा है । इतिहास लेखन मे जो ग्रथ रचे गये वो पुरुष साहित्यकारो द्वारा ही रचित है अत उनमे पुरुष का वर्चस्व दिखाई पडता है। फिर भी हमे आज के आधुनिक वातावरण मे पुरुष को दोषी न मानकर अपनी कमी पहले देखनी होगी । क्यो समाज के अन्याय को स्त्री ने सहा, क्या ईश्वर ने उसे शारीरिक और मानसिक बल नही दिया था, कि समाज ने जब चाहा जैसे चाहा उसका उपयोग या दुरुपयोग किया, क्या स्त्री कोई वस्तु है ? नही ऐसा कुछ भी नहीं था। उसे भी वह सब कुछ मिला है, जो पुरुष को मिला है फिर अन्याय सहकर उसने अन्यायी को बढावा दिया है ।

अगर पुरुष ने अपनी स्वेच्छाचारिता के आधार पर स्त्री को प्रताडना दी है । उसे अपमानित किया है । स्त्री घुट–घुट कर जीने पर मजबूर किया है । तो क्या इस विषम स्थिति के लिए स्त्री की कोई जिम्मेदारी नही थी । यदि दहेज के लिए एक परिवार मे एक बहू को जलाया तो क्या सास, ननद और जेठानी इनमे से किसी ने स्त्री होने के नाते बहू का पक्ष रखा है ? यदि सास को स्वय उसकी सास ने जला दिया होता तो क्या आज उसे सास की पदवी मिल पाती ? वह तो कब की जल कर स्वाहा हो गई होती । अत सदैव पुरुषो को दोष देना स्त्री का स्वभाव बन गया है ।

वास्तविकता तो यह है कि स्त्री ने आत्मावलोकन नही किया । अपनी क्षमता को नही जाना हम देखते है कि आज के आधुनिक युग मे ऐसा क्या है, जो स्त्री नही कर सकती और पुरुष कर सकता हो ?

स्त्री और पुरुष दोनो ही किसी भी कार्य–व्यवहार के लिए बराबर उपयुक्त हो सकते है । बल्कि कुछ ऐसा अवश्य है जो स्त्री कर सकती है पुरुष नही–मातृत्व का निर्वहन । मातृत्व स्त्रीत्व का ही रुप है । मॉ न भी बने तो भी स्त्री–स्त्री है ।

स्त्री को अबला कहा गया है । क्यो ? क्या उसमे शारीरिक बल की कमी है, अथवा मानसिक बल की कमी के कारण उसे अबला कहा गया है । मेरा अपना मानना तो यह है यदि जैविक कारणो से स्त्री कमजोर है तो उसके

पास और भी बल है जिनसे वह स्वय को सबला सिद्ध करती है । वह बल है मातृत्व का, एक मॉ के पास उसके पुत्र–पुत्रियो का भी बल होता, ममता का बल।

सृष्टि की रचना मे बराबर की भागीदार स्त्री का जितना विराट स्वरुप मॉ के रुप में मिलता है, उतना ओर किसी रुप मे नही स्त्री के लिए समाज सुधारको ने सदैव से पतिव्रत धर्म के पालन का उपदेश दिया है, किन्तु किसी भी युग मे किसी मॉ को अपनी सतान के प्रति ममत्व रखने का उपदेश मेरी दृष्टि से होकर नही गुजरा ।

समय का रथ आगे बढता गया स्त्री का पथ बदलता ही गया । अनादि काल से जितने भी प्रश्न उठे वो स्त्री पर ही क्यो, आज तक इन प्रश्नो के उत्तर हम क्यो नही खोज सके ?

सारी सीमाए स्त्रियो के लिए ही क्यो, क्या पुरुष सदैव से आत्म नियत्रित रहा है । सारी सीमाओ का अतिक्रमण स्त्री ने ही किया है । जहॉ तक सभव हुआ पुरुष ने स्त्री पर नियत्रण रख कर स्वय को गौरवान्वित महसूस किया है ।

ये सब उसने अपने अह की तुष्टि के लिए किया । ये थोथी रुढियो और परम्पराए बनाने के पीछे कुछ मनोवैज्ञानिक कारण थे । इन्ही दबाबो के अतर्गत शास्त्रकारो ने स्त्री को इस प्रकार बाध दिया कि जब–जब स्त्री ने इनसे छूटने और बाहर आने का प्रयास किया, उसे और अधिक शक्ति से वापस अधेरे की ओर मोड दिया गया ।

स्वेच्छाचारी स्वय पुरुष ही रहा है, किन्तु स्त्री की स्वतत्रता की बात कभी उसके गले से नीचे न उतरी । ये कब ज्ञात हुआ कि स्त्री एक विशेष प्राणी है और उसे स्वतत्रता देने पर वह नाश का कारण बनेगी ? जो स्वय को नियंत्रित न रख सके उन्होने स्त्री को ही परधीन बना दिया । जबकि ———

'परधीन सपनेहु सुख नाहिं ।'

को लिखने वाले किसी भी युग मे स्त्री को पराधीनता से मुक्त करते हुए नही दिखाई पडते एव स्त्री को सदैव नियत्रित रखने की बात करते है । स्त्री कोई पशु नही थी । वह तो पुरुष से कही अधिक भावुक और सकोची थी ।

क्या ऐसा सभव है कि स्त्री भोजन कर अपना पेट भर ले और उसके आस पास के समाज मे कोई भूखा रहा हो । अन्नपूर्णा देवी ही क्यों मानी गई किसी देवता को यह गौरव क्यो नही मिला ? पृथ्वी को मॉ माना गया । जिसकी सहनशक्ति सीमा से परे है । यही सहनशक्ति पुरुष प्रधान समाज मे उसकी दुर्बलता का प्रतीमान बन गई ।

भारतीय धर्म मे दुर्गा , काली, लक्ष्मी, सरस्वती ये सभी स्त्रिया ही है और ये किसी न किसी रुप मे शक्ति, धन, विद्या आदि का स्रोत रही है । इनके पूजन अर्चन से हमने सदैव कुछ मागा ही है ।

हिन्दी साहित्य मे स्त्री विषयक जो भी दृष्टिकोण मिलता है। वह पुरुषो द्वारा निर्मित है । प्राय लेखन का कार्य व समाज को सुधारने की जिम्मेदारी को पुरुष साहित्कार ही सचालित करते रहे है । अत स्त्री ने कभी अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए आवाज नहीं उठाई और इसी का परिणाम है कि वह आज तक बधनो मे जकडी हुई है । पुरुषवादी व्यवस्था ने जब से स्त्री के लिए स्वरचित सिद्धान्तो की सीमारेखा (लक्ष्मण रेखा) खीच दी तब से आज तक वह उसी लक्ष्मण रेखा के भीतर सघर्षरत रही है। व्यक्ति एव मनुष्य के रुप में उसकी स्वतत्र पहचान होनी चाहिए किसी की बेटी किसी की पत्नी तथा किसी की मॉ के अतिरिक्त क्या वह और कुछ नही है ? है । उसकी भी एक स्वतत्र पहचान है स्वायत्त जिन्दगी है , और स्वय की समस्याए है कुछ खास तरह की समस्याए है। स्त्री का सघर्ष बहुस्तरीय होता है । वह पुरुष की तरह एक आयामी नही होता । घर के अदर तथा बाहर, मन के भीतर और मन के बाहर इस सघर्ष की अभिव्यक्ति भी होती है । छोटी–छोटी बातो चीजो और विषयों पर उसकी अस्मिता की जद्दोजहद दिखाई देती है ।

पुरुषो द्वारा निर्धारित व्यवस्था ने स्त्री को अपने मन के अनुसार जीने की अनुमति नही दी है । एक स्त्री का सम्पूर्ण जीवन पिता, भाई , पति एव पुत्र के लिए खप जाता है । उसकी दिनचर्या मे बहुत कम ऐसे क्षण होते है जिन्हे वह स्वय के लिए खर्च करती है । उसकी छोटी–छोटी इच्छाए वह पूर्ण नही कर सकती, किन्तु घर के अन्य सदस्यो की हर एक इच्छा हर क्षण उसी के दम पर पूरी होती है ।

पुरुष स्वय अपनी अस्मिता का निर्माता था । किन्तु स्त्री को यह एक हक नही । स्त्री ने जब भी अपना हक मॉगा, अपने लिए सार्वजनिक जीवन मे स्थान मागा, सहज, स्वतत्र, अभिव्यक्ति की कोशिश की उसे अपराधिनी, पापिनी, बदचलन, चालू तेज आदि विभिन्न पदवियो से विभूषित किया गया ।

स्त्री को क्या करना चाहिए क्या नही करना चाहिए ? यह उसके जन्म के पूर्व से ही निर्धारित है । इस प्रकार की सीमाकन पुरुष प्रभुत्व की बहुत बडी शक्ति है ।

पुरुषो द्वारा तय किए गये नियमो , मूल्यो और परम्पराओ का पालन करते हुए जीवन यापन करे तो ठीक है अन्यथा समाज उसे कोई न को विशेषण से अवश्य नवाज देगा । आधुनिक काल और मध्यकाल मे इस अवस्था मे बडे अतरो को देखा जा सकता है । सामती दृष्टिकोण मे स्त्री को सौन्दर्य, प्रकृति, पवित्रता, सहमति, अनुकरणकर्त्ती के रुप मे महिमा मडित किया गया । कालान्तर मे स्त्रियो ने भी इन सभी तत्वो को आत्म सात कर लिया । पुरुष के दृष्टिकोण को ही अपना दृष्टिकोण बना लिया । इन सबसे अपना सामजस्य बैठा लिया । 'पूर्व आधुनिक कालीन निषेध व्यवस्था एव पारम्परिक स्त्री की छवि ने स्त्री के लिए बेडियो का कार्य किया । उसे पुरुष के ऊपर निर्भर बना दिया । जिसके परिणाम स्वरुप वह पाराश्रिता बन गई । इस परश्रित भाव को आधुनिक काल मे चुनौती मिली स्त्री के लिए यह सघर्ष तलवार की धार पर चलने के समान था एक तरफ स्त्री का मन था तो दूसरी ओर वाह्‌य जगत मे उसे सफलता मिली किन्तु मानसिक रुप से वह पुरुष की आश्रिता के रुप ही रहना चाहती है । यही कारण है कि वह समाज मे आज भी परश्रिता ही है ।

आधुनिक युग की स्त्री सामाजिक अतविरोधी की सृष्टि है । वह परिवार चाहती है । पुरुष का सहारा चाहती है साथ ही स्वतत्र एव स्वायत्त व्यक्तित्व की पहचान तथा उसकी स्वीकृति चाहती है । उसके दो चेहरे है एक सामाजिक स्वरुप है तथा एक अपने प्रियतम या पति के लिए है। इस क्रम मे सतह पर वह जितनी मुक्त दिखती है , अदर से उतनी ही अधिक वह पुरुष पर निर्भर है । स्त्री की स्वतत्र पहचान, जीवन शैली, स्त्री सस्कृति के स्वतत्र रुपो के सृजन की सृष्टि के लिए पहली शर्त यह है कि स्त्री स्वय को अलग रुप मे देखे, पुरुष से भिन्नता को पहचाने । स्त्री के रुप मे अपने को परिभाषित करे । मॉ, बहिन, पत्नी से पहले वह स्त्री है । स्त्री जब तक इस सत्य को नही देखेगी वह पुरुषवादी व्यवस्था की गुलाम बनी रहेगी । वृक्ष दृढ और स्वतत्र रुप से खडा होकर आधी पानी सब झेल लेता है लेकिन एक लता पहले तो सहारा तलाशती है और सहारा मिलने पर ही ऊपर को बढती है । इसी प्रकार स्त्री भी बिना मेरुदंड दृढ किये इसी प्रकार किसी सहारे की तलाश मे दर बदर होती रहेगी । स्वामी विवेकानन्द के अनुसार स्त्री को कैसी शिक्षा देनी चाहिए————

> 'हम चाहते है कि भारत की स्त्रियों को ऐसी शिक्षा दी जाय, जिससे वे निर्भय होकर भारत के प्रति अपने कर्तव्य को भली भॉति निभा सके और संघमित्रा, लीला, अहिल्याबाई और मीराबाई आदि भारत की महान देवियों द्वारा चलायी गयी परम्परा को आगे बढ़ा सके एवं वीर प्रसू बन सकें । भारत की स्त्रियॉ पवित्रता व त्याग की मूर्ति है , क्योंकि उनके पास वह बल और शक्ति है, जो सर्वशक्तिमान परमात्मा के चरणों में आत्मसमर्पण से प्राप्त होती है ।'[1]
>
> 'नारी ही सम्पूर्ण राष्ट्र है धर्म, कर्म, संस्कृति युग चेता, जन्म सिद्धजन की समाज की देश जाति मानव के नेता । प्राण दान कर भी न चुका सकते हम ऋण इस उपकारी का, अब अपना अभिमान नष्ट हो–रक्षित स्वाभिमान नारी का ।।'[2]

---

1 भारतीय नारी, स्वामी विवेकानन्द, पृ0 11।

2 नारी, अतुल कृष्ण गोस्वामी, पृ0 307।

स्त्री से शक्ति प्राप्त कर पुरुष शक्तिवान् बन जाता है । स्त्री पुरुष के सृजन ,पोषण और उन्नयन की आधार शिला है । 'भारतीय सस्कृति का निर्माण आध्यात्म के धरातल पर हुआ है । यह कार्य उन ऋषि, मुनियो ने किया है , जो रागद्वेष रहित दिव्य दृष्टि सम्पन्न थे। उनकी दृष्टि मे –

'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'

का भाव था वे मातृ रुप को सर्वाधिक महत्व देते है ।

ऋग्वैदिक समाज पितृसत्तात्मक था, फिर भी जीवन के सभी क्षेत्रो मे स्त्री को पूर्ण अधिकारो का बटवारा स्त्री और पुरुष ने स्वभाव और शक्ति सामर्थ्य के अनुरुप कर लिया था । माता, पिता उसका पालन पोषण बडे लाड प्यार से पुत्र के समान ही करते थे । विद्या अध्ययन व सस्कार दोनो के जीवन मे समान रुप से होता था । विवाह के पश्चात वह पति गृह की साम्राज्ञी होती थी ।

'शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम् ।
न शोचन्ति तु यत्रैता वर्धते तद्धि सर्वदा ।।'

अर्थात जिस कुल मे नारियॉ शोक मग्न रहती है , उस कुल का शीघ्र ही विनाश हो जाता है । जिस कुल मे नारियॉ शोक मग्न नही रहती, उस कुल की सर्वदा उन्नति होती है । वैदिक युग की इस शुभ परम्परा की गूँज हमे पुराण काल तक सुनाई देती है ।

'नरं नारी प्रोद्धरति मज्जन्तं भववारिधौ ।'

ससार रुपी सागर मे डूबते हुए नर का उद्धार नारी करती है । **यः सदारः स विश्वास्यः तस्माद् दारा परा गतिः** । जो सपत्नीक है वही विश्वसनीय है । अतएव, पत्नी नर की परागति होती है । वैदिक युग का ह्रास होने पर धीरे–धीरे स्त्री की सामाजिक अवस्था भी क्षीण पडने लगी ।

उत्तर वैदिक काल मे ऋषि आनंद की अपेक्षा तप पर बल देने लगे । अब वह तपस्या मे बाधा होने के कारण ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार पुत्र का जन्म स्वर्ग तुल्य और पुत्री जन्म को विपत्ति लाने वाला माना जाने लगा ।

बहुविवाह की प्रथा विकसित हो रही थी । सती प्रथा का भी आविर्भाव होने के कुछ प्रमाण मिलते है । विधवा विवाह अभी प्रचलित था । यजुर्वेद की तैतिरीय सहिता मे पिता के धन पर कन्याके अधिकर को निषेध बतलाया गया है। उपानिषदों तक शिक्षित स्त्रियो का उल्लेख मिलता है । उपनिषदो ने ससार को परब्रह्म की यज्ञशाला मानकर नर को होता तथा नारी को अग्नि स्वरुप मे उपस्थित किया है । महाकाव्यो के काल मे स्त्रियो को स्वयवर के द्वारा वर चुनने की छूट थी । बहुविवाह प्रथा प्रचलित थी । राजा दशरथ स्वय इसके प्रमाण है । नारी को सपत्ति के समान माना जाने लगा था । इस तथ्य की पुष्टि युधिष्ठिर के जुए के दाव मे द्रौपदी को लगाये जाने के रुप मे प्रमाण मिलता है । पुराणो की रचना बौद्धधर्म के विरोध मे ब्रह्मणो की अक्षुण्णता स्थापित करने के लिए की गई ।

बौद्ध और जैन भिक्षुओं ने स्त्रियो के लिए मोक्ष प्राप्ती के लिए स्त्रियो को भी भिक्षुणी बन कर मोक्ष की अधिकारिणी बना दिया । अत ब्राह्मणो ने भयभीत होकर वर्णाश्रम धर्म की एक बार फिर प्रतिष्ठा की । फलत पति ही उसका देवता हो गया । उत्तर पुराण काल मे जब विदेशी आक्रमणो तथा अन्य धर्म के प्रचार के कारण व्यवस्था और आधिक सकीर्ण से सकीर्ण होती गई अब तक भारतीय समाज मे स्त्रियो पर बहुविवाह , सतीप्रथा , अशिक्षा, पर्दाप्रथा आदि सभी हीन भावना के प्रतीको को लाद दिया गया था । मुसलमान दार्शनिक अलग जाली ने मुस्लिम नारियो के लिए जिन बातो को मान्यता दी उनमें पर्दा प्रथा का कठोर समर्थन किया गया---------

'जहॉ तक संभव हो औरतों को घर के बाहर नही जाने देना चाहिए, उन्हे छत पर न जाने दे, न दरवाजे के पास खड़े होने देना चाहिए ।'

औरते न तो अजनबियो को देखे न उन्हें अपने आपको देखने का मौका दे । क्योकि सारी शराररतो की जड निगाह मे होती है । उन्ही के अनुसार--
'ईश्वर के बाद यदि किसी और को पूजना आवश्यक ही हो तो औरतों को पूजा अपने शौहरों की करनी चाहिए।'

अल–गजाली ने पुन लिखा है– 'औरतो से राय लेना ठीक है, लेकिन आचारण हमेशा उसके विपरीत करना चाहिए————नवी ने यह भी कहा, औरत की रचना छाती की टेढी हड्डी से की गई थी । इस लिए, तुम औरतो को यदि झुकाना चाहोगे तो वह टूट जायेगी और स्वतंत्र छोडोगे तो वह और भी टेढी हो जायेगी । इसी लिये उचित है कि उसके साथ नर्मी से पेश आओ।

अत मध्यकाल मे उनकी दशा का ह्रास होने लगा । डा0 आर्शीवादी लाल श्रीवास्तव का कहना है कि सल्तनत काल मे स्त्रियो की दशा बहुत खराब हो गई थी । उन पर बहुत हद तक पाबन्दियॉ लगी हुई थी । यद्यपि मुस्लिम समाज मे स्त्रियो को आदर व सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था । मुस्लिम धर्म प्रर्वतक मुहम्मद साहब ने स्त्रियो व पुरुषो को समान अधिकार प्रदान किये तथा उनकी पवित्रता पर बल दिया परन्तु फिर भी वे उनकी पूर्ण स्वतत्रता स्वीकार नही कर पाये ।

हिन्दू तथा मुस्लिम दोनो ही समाज मे पर्दा प्रथा विद्यमान थी । हिन्दू स्त्रिया घूघट के द्वारा तथा मुस्लिम स्त्रिया बुर्के द्वारा अपना चेहरा ढकती थी । स्त्रियो के लिए जो सीमाए निर्धारित थी । उनके दायरे मे सम्पूर्ण स्त्री समाज नही आता था । पर्दे का पालन उच्च वर्ग की स्त्रियो के लिए इसलिए आवश्यक था, कि पर्दे का त्याग अपनी इज्जत सरेआम बेचने के बराबर निन्दनीय था । सल्तनत काल मे जब रजिया ने पर्दे को त्याग कर नारी स्वतत्रता की घोषणा करते हुऐ सिहासन को सभाला तो तुर्क अमीरो को यह असहनीय हो गया । रजिया की स्वतत्रता और खुलापन ही उसके पतन का कारण बना । फिर भी मध्यकालीन ऐतिहासिक ग्रथ बाबरनामा, गुबदल बेगम का हुमायूनामा , अबुलफजल के अकबरनामा आदि से कुलीन परिवारो की स्त्रियो की सम्मानित स्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है । हरम की प्रमुख महिलाओ को विशिष्ट उपाधियो से भी सम्मानित किया गया । वैदिक काल से प्रारम्भ हुई विकास यात्रा हिन्दी साहित्य के वीर गाथा काल मे आने तक वीर माता, तथा वीर पत्नी रुप मे अवशिष्ट रह गई । आध्यात्मिक क्षेत्र की मत्रदृष्टा साधना क्षेत्र की बाधक बन गई । उसे घर की लक्ष्मण रेखा मे बाध दिया गया । पति

साधना ही स्त्री का धर्म, अर्थ, मोक्ष, काम सब कुछ बन गया । विदेशियो से अपनी रक्षा न कर पाने की स्थिति मे वे अग्निकुण्ड मे कूद कर जौहर करने लगी । वह रक्षणीया हो गयी पुरुष रक्षक ।

भक्ति साहित्य मे नारी को बाधक और प्रेरक दोनो रुपो मे चित्रित किया गया नारी को विकार मानने वाले, पतिव्रता के समान सिधौरा लेकर राम की बहुरिया बनते दिखाई देते है । निवृत्ति भावना की प्रतिक्रिया स्वरुप उपेक्षिता नारी अपनी शारीरिक निधि की रक्षा करने के लिए पुरुष के सम्मुख आत्म समपर्ण करके निश्चित हो गई । अब विह इसी कल्पना मे डूबी रही कि प्रियतम कब आये और कब मिलन होगा– रगीले कवि, नारी के मोहक चित्र खींचते रहे। कलाकार की तुलिका नारी की उलझी लट सुलझाने लगी । वे नयनो के कटाक्षो से कटकर उन्नत उरोजो से अटक कर उसके घोर विलासी रुप को चित्रित करने मे लगे रहे । स्त्री का आध्यात्मिक और सात्विक रुप इन लोगो से विस्मृत हो गया । और स्वय स्त्री भी इसी भाव मे रमी रही । घोर अधकार के पश्चात सूर्य की अरुणिम रश्मियां जब नव जागृत समाज पर पडी तो वासना की रगीन दुनिया समाज सुधारको और साहित्यकारो को मटमैली और दुर्गन्ध से युक्त प्रतीत हुई । परिवर्तन का वेग जब तीव्रगामी होता है तब कभी बाध बनाए जाते है , और कभी उसे मर्यादित रुप मे धीरे–धीरे नये मार्ग पर मोड दिया जाता है ।

अब युगपथ पर चलने के लिए पूरुष को सच्ची सहयोगिनी की आवश्यकता थी । सात समुद्र पार बैठकर राज्य चलाने वाली नारी इन पुरुष सुधारको की ऑखे खुलवाने मे समर्थ सिद्ध हुई । अब साहित्य सृजन के माध्यम से समाज का कल्याण करने वाला लेखक मण्डल स्त्री अशिक्षा, सती प्रथा, बहुविवाह, प्रथा , आदि विभिन्न कुप्रथाओ को समूल मिटा देना चाहता था। लेखक गण अब पत्थर तोडती मजदूर ओर खेतो मे कृषि कर्म करती कृषक बाला का वर्णन करना पसद करने लगे । अब वे पुरुषत्व का मोह त्याग कर समरसता की बात करने की सोचने लगे ।

अब समाज और साहित्य मे स्त्री के प्रति उन्नत भाव दृष्टिगत होने लगा।

सन्दर्भ–ग्रन्थ–सूची

सदर्भ – ग्रन्थ–सूची

1 हिन्दी सहित्य का सर्वेक्षण विश्म्भरनाथ, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

2. हिन्दी साहित्य का अद्यतन इतिहास डॉ0 मोहन अवस्थी, सरस्वती प्रकाशन, इलाहाबाद

3. हिन्दी साहित्य का इतिहास डॉ0 नागेन्द्र नेशनल पब्लीशिग हाउस, आगरा

4 आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियॉ नामवर सिह, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

5. प्राचीन भारतीय इतिहास का वैदिक युग सत्यकेतु विद्यालकार, सरस्वती सदन, मसूरी

6. भारतीय स्वातत्रय आन्दोलन और हिन्दी साहित्य . डा0 कीर्तीलता, हिन्दुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद

7. प्राचीन भारतीय साहित्य की सास्कृतिक भूमिका राम जी उपाध्याय, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

8. हिन्दी साहित्य की रूपरेखा : डा0 गणपति चन्द्र गुप्ता, नेशनल पब्लिशिग हाउस, दिल्ली

9. सस्कृति के चार अध्याय रामधारी सिंह दिनकर, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

10. प्राचीन भारतीय संस्कृति डा0 वीरेन्द्र कुमार सिह, अक्षयवट प्रकाशन, इलाहाबाद

11. प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास . डा0 जयशकर मिश्र, बिहार ग्रथ अकादमी

12. आधुनिक हिन्दी कथा . डा0 देवराज, साहित्य भवन, इलाहाबाद

13. आधुनिक हिन्दी कहानी डा0 लक्ष्मी नारायण लाल ग्रंथ रत्नाकर, बम्बई

14 हिन्दी कहानी प्रक्रिया और पाठ सुरेन्द्र चौधरी, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली

15 हिन्दी कहानी का विकास देवेश ठाकुर, नवयुग प्रकाशन, दिल्ली

16 हिन्दी कहानियो का विवेचनात्मक अध्ययन डा0 ब्रह्ममदत्त शर्मा, सरस्वती पुस्तिका सदन, आगरा

17 कहानी और कहानीकार मोहनलाल, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

18 हिन्दी कहानी और कहानीकार प्रो0 वासुदेव, वाणी विहार प्रकाशन

19 हिन्दी कहानी की शिल्पविधी का विकास डा0 लक्ष्मीनारायण लाल, साहित्य भवन लि0, इलाहाबाद

20. कहानी और शिल्प विधान डा0 सत्येन्द्र, साहित्य रत्न भण्डार, आगरा

21. कहानी और नयी कहानी डा0 नामवर सिह, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

22. हिन्दी कहानियोका विवेचनात्मक अध्ययन डॉ0 ब्रह्मदत्त शर्मा, सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा

23. हिन्दी आख्यायिका का विकास डा0 सीता हॉडा, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

24 हिन्दी कहानी उद्‌भव और विकास डा0 सुरेन्द्र सिन्हा, अशोक प्रकाशन, दिल्ली

25. कहानी स्वरूप और सवेदना राजेन्द्र यादव, नेशनल पब्लिशिग हाउस, दिल्ली

26. हिन्दी कहानी अतरग परिचय, उपेन्द्रनाथ अश्व, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद

27. कहानी अनुभव और शिल्प जैनेन्द्र, पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली

28. हिन्दी कहानी के सौ वर्ष डा0 वेद प्रकाश अमिताभ,मधुबन प्रकाशन, मथुरा

29. हिन्दी कहानियो का विवेचनात्मक अध्ययन डा0 ब्रह्मदत्त शर्मा, सरस्वती पुस्तकालय, आगरा

30. आधुनिक हिन्दी साहित्य नारी सरला दुआ – साहित्य निकेतन, कानपुर

31. नारी जैनेन्द्र कुमार, पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली

32. नारी (महाकाव्य) अतुल कृष्ण गोस्वामी, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली

33 महाभारत मे नारी डा0 वनमालकर – अभिनव प्रकाशन, सागर

34. आधुनिक हिन्दी काव्य मे नारी भावना डा0 शैल कुमारी – हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद

35. भक्तिकालीन काव्य मे चित्रित नारी डा0 प्यारे लाल शुक्ल, साहित्य वाणी प्रकाशन, इलाहाबाद

36. हिन्दी महाकाव्यो मे नारी चित्रण डा0 श्याम सुन्दरदास, साहित्य सगम, मथुरा

37. हिन्दी कहानी मे नारी की सामाजिक भूमिका डा0 अनिल गोयल, आर्यना पब्लिशिग हाउस, नई दिल्ली

38. नारी तेरे रूप अनेक · भगवती प्रसाद वाजपेयी, एम0एन0 पब्लिशर्स

39. नारी शोषण आशा रानी वोहरा, नेशनल पब्लिशिग हाउस, दिल्ली

40. नारी जीवन की कहानियॉ – प्रेमचन्द, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद

41. प्रसाद के नारी चरित्र डा0 देवेश ठाकुर, नवयुग प्रकाशक, दिल्ली

42. प्रसाद के उपन्यास और कहानियॉ सुशीला देवी, विमला देवी, सरस्वती मन्दिर, बनारस

43. प्रसार ग्रन्थावली रत्नशंकर प्रसाद, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

44 प्रसाद आलोचनात्मक सर्वेक्षण, डा0 राम प्रसाद मिश्र, पल्लव प्रकाशन, दिल्ली

45. प्रसाद के नारी चरित्र देवेश ठाकुर, सकल्प प्रकाशन, बम्बई

46. प्रेमचन्द का नारी चित्रण मोतीलाल, हिन्दी साहित्य ससार दिल्ली

47. प्रेमचन्द की कहानियो मे पारिवारिक एव सामाजिक भूमिका राजेन्द्र कुमारी शर्मा, प्रगति प्रकाशन, आगरा

48. निराला का साहित्य और साधना डा0 विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, हिन्दी प्रिंटिग प्रेस, आगरा

49. निराला परमानन्द श्रीवास्तव, साहित्य अकादमी, दिल्ली

50. निराला ग्रन्थावली : ओकार शरण, प्रकाशन केन्द्र

51. महादेवी (आलोचनात्मक अध्ययन) डा0 राजेश्वर चतुर्वेदी, प्रकाशक केन्द्र, लखनऊ

52. हमारी श्रृखला की कडियॉ महादेवी वर्मा, भारती भडार लीडर प्रेस, इलाहाबाद

53. यशपाल के कथा साहित्य का सापेक्ष अध्ययन डा0 सुरेन्द्र सिह अचीश, कुसुम प्रकाशन, मुजफ्फरनगर

54 अज्ञेय का कथा साहित्य ओम प्रभाकर, नेशनल पब्लिशिग हाउस, दिल्ली

55. रामचरितमानस तुलसीदास, गीताप्रेस, गोरखपुर

56. राम की शक्ति पूजा डा0 नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिग हाउस, आगरा

57. हिन्दी भाषा स्वरूप और विकास कैलाशचन्द्र, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली

58. आधुनिक भाषा विज्ञान के सिद्धान्त राम किशोर शर्मा, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

59. अनुसंधान प्रविधी · सिद्धान्त और प्रक्रिया, एस एन. गणेशन लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

60. सूर सागरसार · डा0 धीरेन्द्र वर्मा, साहित्य भवन, इलाहाबाद

61. कर्मयोग स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर

62 वेदान्त चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, सस्ता साहित्य मण्डल, दिल्ली

63. रीतिकाव्य की भूमिका डा0 नगेन्द्र, गौतम बुक डिपो, दिल्ली

64. महाभारत कालीन समाज सुखमय भट्टाचार्य, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

65 भारतवर्ष का सामाजिक इतिहास डा0 विमलचन्द पाण्डेय, हिन्दुस्तानी एकेडमी, प्रयाग

66. पोजीशन ऑफ वीमेनइन हिन्दु सिविलाइजेशन डा0 ए0एस0 अल्तेकर, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली

67. साहित्य और सामाजिक परिवर्तन · बद्री नारायण, वाणी प्रकाशन, नई–दल्ली

68. मीराबाई . डा0 श्री कृष्ण लाल

69. आधुनिक युग की हिन्दी लेखिकाये – उमेश माथुर – ऋषभ चरण जैन एड सस

<u>कहानी सग्रह</u>

70. हिन्दी कहानी सग्रह भीष्म साहनी, साहित्य अकादमी, इलाहाबाद

71. मानसरोवर भाग–1 से 8, प्रेमचद, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद

72. गुलेरी कथा कहानी समग्र, सुधाकर पाण्डेय, नागरीय प्रचारिणी सभा, वाराणसी

73 अस्सी कहानियॉ विनोद शकर व्यास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी

74. सोलह अपपप्य कहानियॉ प्रेमचद, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद

75 कहानी कुज भगवती प्रसाद वाजपेयी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

76. हिन्दुस्तानी कहानियॉ, भाग–1, भाग–भाग, हिन्दुस्तानी प्रसार सभा, वर्धा

77. रानी केतकी की कहानी श्याम सुन्दर दास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

78. सात श्रेष्ठ कहानियॉ श्रीमती शारदा देवी, वेदालकार, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

79. गल्य समुच्वय प्रेमचन्द,सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद

80 माधवराव सप्रे की कहानियॉ देवी प्रसादवर्मा, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद

81. अनुपम कहानियॉ श्री चक्रधर, ज्योति प्रकाशन, इलाहाबाद

82. आठ कहानियॉ . डा0 विजय चौहान, जिज्ञासा, जबलपुर

83 कथाश्री सुषमा राज, मीनाक्षी प्रकाशन, बेगलूर

84. पुष्प–लता श्रीमती सुदर्शन, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई

85. परिवर्तन सुदर्शन, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद

86. हिन्दी की कालजयी कहानियॉ राम प्रसाद घिल्डियाल, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

87. आठ श्रेष्ठ कहानियॉ सत्यकाम विद्यालकार, शिक्षा भारती, दिल्ली

88. कहानी सग्रह मोहन गुप्त, सलीना पब्लिसर्स, नई–दिल्ली

89. नूतन कहानी संग्रह डा० केशव प्रसाद, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

90. हिन्दी की अमर कहानियॉ डा० जगन्नसथ शर्मा, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद

91. हिन्दी की आदर्श कहानियॉ प्रेमचन्द सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद

92. जुदाई की शाम का गीत . उपेन्द्र नाथ अश्क, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद

93. सीधे सादे चित्र सुभद्रा कुमारी चौहान

94. सावनी–समॉ राजा राधिका रमण प्रसाद सिह, श्री राज राजेश्वरी, साहित्य मन्दिर, शाहाबाद

95. रस–रग श्री सुधाशु, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद

पत्र–पत्रिकायें

1. साक्षात्कार
2. उत्तर–प्रदेश साहित्य और सस्कृति का मासिक
3. गुडिया
4. हस
5. स्वाधीनता
6. वागर्थ
7. कथा देश
8 साहित्य अमृत
9. आजकल